UNIVERSAL
LIBRARY

OU_186797

UNIVERSAL
LIBRARY

# अर्थशास्त्र शिक्षण

गुरुसरनदास त्यागी

H 330.7
T54 A

विनोद पुस्तक मन्दिर
हास्पिटल रोड, आगरा

**OSMANIA UNIVERSITY LIBRARY**

Call No. H330.7 T54A Accession No. H 5192

Author त्यागी, गुरुसरनदास

Title अर्थशास्त्र सिद्धान्त 1961.

This book should be returned on or before the date last marked below.

# अर्थशास्त्र-शिक्षण

## [ TEACHING OF ECONOMICS ]

*(For B. T., L. T., B.Ed., and Others)*


लेखक

**गुरु सरनदास त्यागी** एम० ए०, एम० एड०

लेक्चरार इन ऐजूकेशन

आर० ई० आई० ट्रेनिंग कॉलेज

**दयालबाग, आगरा**



**विनोद पुस्तक मन्दिर**

**हॉस्पिटल रोड, आगरा**

प्रकाशक :
**राजकिशोर अग्रवाल**
विनोद पुस्तक मन्दिर
हॉस्पिटल रोड, आगरा

प्रथम संस्करण : अगस्त १९६१
मूल्य : ४.००

मुद्रक :
रत्नदीप प्रिंटिंग प्रेस
बेलनगंज, आगरा

# विषय-सूची


अध्याय पृष्ठ

**१—अर्थशास्त्र का परिचय** १—१५

अर्थशास्त्र क्या है—अर्थशास्त्र की परिभाषा प्राचीन अर्थशास्त्रियो का मत—आलोचना—भौतिक कल्याण का विज्ञान—मार्शल की परिभाषा—आलोचना—सीमित साधनों का शास्त्र-आलोचना—आवश्यकता हीनता सम्बन्धी शास्त्र—अर्थशास्त्र का क्षेत्र—अर्थशास्त्र की विषय-सामग्री—अर्थशास्त्र की सीमाएँ—अर्थशास्त्र विज्ञान तथा कला के रूप में—अर्थशास्त्र विज्ञान है या कला अथवा दोनो।

**२—अर्थशास्त्र-शिक्षण के लक्ष्य तथा महत्त्व** १६—३०

अर्थशास्त्र-शिक्षण के लक्ष्य—भारतीय स्थितियो के अनुसार अर्थ-शास्त्र-शिक्षण के लक्ष्य—अर्थशास्त्र-शिक्षण के महत्त्व—सैद्धान्तिक महत्त्व—सैद्धान्तिक ज्ञान-वर्द्धन—मानसिक शक्तियों का विकास—व्यापक दृष्टिकोण—सापेक्षिक महत्त्व को समझने की शक्ति—विविध जटिलताओ का निराकरण—व्यावहारिक महत्त्व—व्यक्तिगत महत्त्व—सामाजिक महत्त्व।

**३—अर्थशास्त्र की पाठ्य-वस्तु के चयन एवं संगठन के सिद्धान्त** ३१—३९

क्रिया का सिद्धान्त—रुचि का सिद्धान्त—लचीलेपन तथा विविधता का सिद्धान्त—चयन का सिद्धान्त—तथ्यों का संगठन—हाई स्कूल कक्षाओं के अर्थशास्त्र के पाठ्य-क्रम का आलोचनात्मक अध्ययन—विभिन्न स्तरों पर अर्थशात्र के पाठ्य-क्रम की रूपरेखा—जूनियर स्तर हाई स्कूल स्तर—इन्टरमीडियेट।

**४—अर्थशास्त्र की शिक्षण-पद्धतियां** ४०—७६

अर्थशास्त्र-शिक्षण पद्धतियों के मूलभूत सिद्धान्त—क्रिया या करके सीखने का सिद्धान्त—प्रेरणा का सिद्धान्त—जीवन से सम्बन्धित

करने का सिद्धान्त—सह-सम्बन्ध का सिद्धान्त—व्यक्तिकरण का सिद्धान्त—समाजीकरण का सिद्धान्त—आवृत्ति का सिद्धान्त—पाठ्य-पुस्तक पद्धति—व्याख्यान पद्धति—प्रयोगशाला विधि—योजना पद्धति—तर्क प्रधान पद्धति—समस्या पद्धति—व्याप्तिमूलक व निगमन विधि—समाजीकृत अभिव्यक्ति-पद्धति—निरीक्षित-अध्ययन पद्धति।

५—अर्थशास्त्र-शिक्षण की रीतियाँ ७७—८६

प्रश्न रीति—अभ्यास रीति—कहानी-कथन रीति—कार्य-निर्धारण रीति—कथन-रीति—अवलोकन रीति—उदाहरण रीति—अभिनय-रीति—परीक्षा रीति।

६—अर्थशास्त्र-शिक्षण में सहायक-सामग्री ९०—१०८

पाठ्य-पुस्तक—पाठ्य-पुस्तकों की विशेषताएँ—अर्थशास्त्र की पाठ्य-पुस्तकों का आलोचनात्मक अध्ययन—चयन के मूलभूत सिद्धान्त—अर्थशास्त्र की पाठ्य-पुस्तकों के मूल्यांकन के लिए मापदण्ड—अर्थ-शास्त्र की पाठ्य-पुस्तक कैसी हो?—श्यामपट-तालिकाएँ—पत्र-पत्रिकाएँ—प्रदर्शनात्मक सामग्री—चित्र-मालचित्र—ग्राफ—रेखाचित्र तथा रेखाकृति—चार्ट—मॉडल—श्रव्य-दृश्य सामग्री—रेडियो—समाचार सम्बन्धी फिल्म—चलचित्र—अर्थशास्त्र-शिक्षण में यात्राएँ।

७—अर्थशास्त्र का शिक्षक १०९—११४

व्यावसायिक निष्ठा—विषय का ज्ञान—समसामयिक साहित्य का ज्ञान—व्यावहारिकता—आर्थिक समस्याओं का प्रत्यक्ष ज्ञान—वैज्ञानिक तथा उदार दृष्टिकोण—शिक्षक का व्यक्तित्व—अर्थशास्त्र के शिक्षण का ज्ञान।

८—विद्यालय के विभिन्न स्तरों पर अर्थशास्त्र की विषय-वस्तु का प्रस्तुतीकरण ११५—१२६

जूनियर हाई स्कूल स्तर पर विषय का प्रस्तुतीकरण—माध्यमिक स्तर पर अर्थशास्त्र का प्रतिपादन—उच्चतर माध्यमिक स्तर पर अर्थशास्त्र का प्रतिपादन।

९—अर्थशास्त्र का अन्य विषयों से सह-सम्बन्ध १२७—१४१

सह-सम्बन्ध की आवश्यकता—शिक्षा में सह-सम्बन्धी ऐतिहासिक

पृष्ठभूमि—आकस्मिक सह-सम्बन्ध—व्यवस्थित सह-सम्बन्ध—जीवन से सह-सम्बन्ध—अर्थशास्त्र और नागरिकशास्त्र—अर्थशास्त्र तथा भूगोल—अर्थशास्त्र तथा वाणिज्यशास्त्र—अर्थशास्त्र तथा इतिहास—अर्थशास्त्र तथा कृषि विज्ञान—अर्थशास्त्र तथा गणित एवं अंकशास्त्र—अर्थशास्त्र तथा भौतिक विज्ञान—अर्थशास्त्र तथा मनोविज्ञान।

१०—अर्थशास्त्र में परीक्षा १४२—१४९

परीक्षा का अर्थ तथा वर्गीकरण—नवीन प्रणाली या वस्तु निष्ठ जाँच—वस्तु निष्ठता—पुष्टता—विश्वस्तता—सत्यासत्य जाँच—अपवर्त्य-चयन जाँच—तुलनात्मक या प्रतिद्वन्द्वात्मक जाँच—रिक्त स्थान पूरक जाँच—नवीन प्रणाली या वस्तु निष्ठ जाँच के दोष।

परिशिष्टि

अर्थशास्त्र में पाठ-योजना बनाने के लिये कुछ संकेत १५०—१५३

पाठ-योजना—१ १५४—१५९

पाठ-योजना—२ १६०—१६६

पाठ-योजना—३ १६७—१७१

पाठ-योजना—४ १७२—१७८

पाठ-योजना—५ १७९—१८४

# प्राक्कथन

स्वतन्त्र भारत में आज हम जब राष्ट्र की सर्वांगीण उन्नति के लिये सतत प्रयत्न शील हैं। देश के अभ्युत्थान के लिए, जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में विकास करने के लिए हम जुट गये हैं। ऐसे समय में भारतीय जनता के स्तर को उठाने और देश में सच्चे 'लोक तन्त्रात्मक गणराज्य' की स्थापना करने के लिये यह आवश्यक है कि देश के नागरिक अधिकाधिक शिक्षित हों, वे राजनीतिक दृष्टि से जागरूक हों तथा आर्थिक दृष्टि से सच्चे उपभोक्ता भी बन सकें। इस लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए देश में विद्यालयों की अधिकाधिक स्थापना होती जा रही है। जनता और सरकार दोनों ही इस लक्ष्य को प्राप्त करने के लिए बड़े मनोयोग से जुट गये हैं। अतः इन विद्यालयों में प्राथमिक, माध्यमिक और उच्चतर माध्यमिक स्तर पर विद्यार्थियों को सम्यक् शिक्षा देने के लिए, उन्हें आत्मनिर्भर बनाने के लिए तथा उनमें सच्ची आर्थिक, राजनीतिक नागरिकता का विकास करने के लिए प्रशिक्षित अध्यापकों की नितान्त आवश्यकता है। आज के इस वैज्ञानिक युग में जब प्रत्येक विषय में विशेषीकरण की आवश्यकता है उस समय अध्यापक को प्रशिक्षित करना राष्ट्रीय जीवन के लिए अनिवार्य एवं हितकर है। इसीलिए हमारी सरकार अधिकाधिक प्रशिक्षित अध्यापकों को तैयार करने के लिए बहुत से प्रशिक्षण महाविद्यालय खोल रही है।

इस बढ़ते हुए प्रशिक्षण कार्य में, जहां हम अध्यापकों को अधिकाधिक प्रशिक्षित कर रहे हैं, वहाँ यह भी आवश्यकता है कि राष्ट्रभाषा हिन्दी में ऐसे ग्रन्थ लिखे जाँय जिनमें शिक्षा एवं विषय प्रतिपादन तथा शिक्षण के मूल-तत्त्वों और सिद्धान्तों का समावेश हो। शिक्षण अपने में एक कला है और शिक्षा का महत्त्वपूर्ण अँग भी। परन्तु आजकल हिन्दी में 'शिक्षण कला' पर मौलिक पुस्तकों का अभाव सा है। अर्थशास्त्र के शिक्षण के लिए भी हिन्दी में प्राथमिक पुस्तकें दुर्लभ ही हैं। अतः इस पुस्तक की रचना बी० एड०, एल० टी० तथा बी० टी० कक्षा के विद्यार्थियों को अर्थशास्त्र शिक्षण की कठिनाइयों और आवश्यकताओं को ध्यान में रखकर की गई है। यदि प्रस्तुत अर्थशास्त्र शिक्षण शिक्षकों और छात्राध्यापकों को एक नयी चेतना और अन्तर्दृष्टि प्रदान करने

में किञ्चित भी सहायता प्रदान करती है, तो लेखक अपने को कृतकार्य समझेगा। मनोवैज्ञानिक पद्धतियों के आधार पर अर्थशास्त्र के शिक्षण में बहुत सहायता मिलती है। आशा है 'अर्थशास्त्र-शिक्षण' इस कार्य में कुछ सहायता प्रदान कर सकेगी।

इस कृति के वर्तमान स्वरूप के लिए लेखक अपने सुहृदय मित्र और सहयोगी अध्यापक श्री नारायणसिंह दुबे का हृदय से आभारी है जिन्होंने पाण्डु-लिपि पढ़कर भाषा संशोधन और परिमार्जन कर महान् सहायता पहुँचाई है।

विजय दशमी, संवत् २०१७ वि०
११०–१११, स्वामी नगर,
दयालबाग, आगरा।

—गुरुसरन दास त्यागी

परम आदरणीय पूज्य

# पिता जी

को

सादर समर्पित

अध्याय १

# अर्थशास्त्र का परिचय

## (Introduction to Economics)

"Political Economy has to do with the relations of men living in socoiety, so far as these relations tend to satisfy the wants of life and concern the efforts made to provide for all that is generally understood by material welfare."

—Charles Gide

### अर्थशास्त्र क्या है ? (What is Economics)

सामाजिक दृष्टि से प्रत्येक व्यक्ति दूसरे से सम्बन्धित है मनुष्य एक सामाजिक प्राणी है। अर्थशास्त्र इन्हीं सामाजिक सम्बन्धित मनुष्यों की आर्थिक क्रियाओं (Economic activities) का अध्ययन करता है। प्रत्येक जीवधारी की कुछ न कुछ आवश्यकताएँ होती है चाहे वे मनुष्य हों, कीड़े मकोड़े हों या पशु-पक्षी। सभी अपनी क्षुधा-पूर्त्ति के लिए प्रयत्न (Efforts) करते हैं सभी को आहार की आवश्यकता होती है। परन्तु इन सब में मनुष्य ने अधिक मानसिक प्रगति (Mental development) की है। मनुष्य अपनी भौतिक आवश्यकताओं, शारीरिक क्रियाओं (Physical activities), मानसिक आवश्यकताओं, नैतिक क्रियाओं (Moral activities) और आध्यात्मिक आवश्यकताओं की पूर्त्ति विचारणा और चिन्तन द्वारा करता है।

अब प्रश्न यह उठता है कि 'आर्थिक समस्या' क्या है ? मनुष्य के जीवन में

समय-समय पर विभिन्न प्रकार की समस्याएँ आती हैं। उनमें कुछ आर्थिक होती हैं और कुछ अनार्थिक। आर्थिक समस्याओं की दो विशेषताएँ हैं—

(१) सर्वप्रथम यह है कि हम सब मनुष्यों की कुछ न कुछ आवश्यकताएँ होती हैं। (All of us feel wants)

(२) दूसरी विशेषता यह है कि जिन साधनों से हम अपनी आवश्यकताएँ पूर्ण करते हैं, वे सीमित है। (The resources in men, material, or time are limited or scarce)

साधनों के सीमित होने के कारण मनुष्य अपनी आवश्यकताओं की पूर्त्ति के लिए भिन्न-भिन्न कार्य करता है। इन विभिन्न कार्यों के सम्बन्ध में जो विभिन्न प्रकार की समस्याएँ उत्पन्न होती हैं उन्हें आर्थिक समस्याएँ कहते है। इस से स्पष्ट है कि मनुष्य अपनी आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए दो प्रकार के कार्य करता है।

(१) एक वह जो धन कमाने से सम्बन्ध रखते हैं तथा

(२) दूसरे वह जो अर्जित हुए धन की आवश्यकताओं की पूर्त्ति पर व्यय करने से सम्बन्ध रखते हैं।

अर्थशास्त्र इन दोनो प्रकार की क्रियाओ का अध्ययन करता है। इस प्रकार हम कह सकते हैं कि "अर्थशास्त्र उन कार्यों का अध्ययन है, जिनके द्वारा आवश्रकताओ की पूर्त्ति करना सम्भव होता है।" (Economics is, therefore, a study of action which make the satisfaction of wants possible)

## अर्थशास्त्र की परिभाषाएँ (Definitions of Economics)

भिन्न-भिन्न अर्थ-शास्त्रियों ने अर्थशास्त्र की परिभाषा समय-समय पर भिन्न-प्रकार से दी हैं। आधुनिक समय तक भी अर्थशास्त्र की कोई निश्चित परिभाषा नहीं है जो कि सर्वमान्य हो। रिचार्ड जोन्स (Richard Jones) और काम्टे (Comte), जैसे अर्थशास्त्री तो इस प्रकार की कोई आवश्यकता ही नहीं समझते। यह कहना भी अनुचित नहीं है कि जितने अर्थशास्त्री होगें उतनी परिभाषाएँ होंगी। डा० जे० ए० कीन्स (J. N. Keynes) ने ठीक ही कहा है कि "राज्य अर्थ-व्यवस्था तो अपनी परिभाषाओं में ही जकड़ी हुई है।"[1]

---

1. "Political Economy is said to have strangled itself with definitions."

—Dr.J . N. Keynes—'Scope and method of Poliitical Economy' Page 153.

परन्तु एक विद्यार्थी के लिए यह नितान्त आवश्यक है कि कोई न कोई परिभाषा उसके आधार के लिए हो। अर्थशास्त्र की परिभाषाओं का अध्ययन हम निम्न-लिखित श्रेणियों में कर सकते हैं:—

**(अ) प्राचीन अर्थशास्त्रियों का मत**—प्रारम्भिक काल के अर्थ-शास्त्रियों ने इसे 'धन का विज्ञान' (Science of wealth) बताया था। उनके अनुसार आर्थिक क्रियाएँ वे है जो मनुष्य मुख्यतः स्वहित (Self interest) की प्रेरणा से रचना करता है। इन क्रियाओं का मुख्य उद्देश्य धन को एकत्रित (acquisition of wealth) करना है। कुछ प्रमुख प्राचीन अर्थशास्त्रियों की परिभाषाएँ इस प्रकार हैं—

(१) एडम स्मिथ (Adam Smith) ने सबसे पहले अपनी पुस्तक 'वैल्थ ऑफ नेशन्स' (Wealth of Nations) में अर्थशास्त्र के विषय में इस प्रकार से विचार प्रगट किया था कि "अर्थशास्त्र का सम्बन्ध राष्ट्रों के धन के स्वरूप तथा उसके कारणो की खोज से है।"[२]

(२) अमेरिकन अर्थशास्त्री प्रो० वाकर (Walker) का कथन है, "अर्थ-शास्त्र ज्ञान की वह शाखा है जिसका सम्बन्ध धन से है।" ("Economics is that body of knowledge which relates to wealth.")

(३) जे० बी० से (J. B. Say), जो कि एक फांसीसी अर्थ-शास्त्री है ने कहा है "अर्थशास्त्र वह विज्ञान है जो धन की चर्चा करता है" (Economics is that science which treats of wealth)

**आलोचना**—उपर्युक्त परिभाषाओं से स्पष्ट है कि इन सब अर्थशास्त्रियों ने धन के ऊपर अधिक बल दिया है और 'धन' को अर्थशास्त्र का केन्द्र (Central point) माना। परन्तु बाद में विद्वानों ने, जिनमें कार्लायल (Carlyle) तथा रस्किन (Ruskin) आदि मुख्य है, धन के इस प्रभाव की कड़ी आलोचना की और उन्होंने इसे 'कुबेर का वेद', (Gospal of Mammon) दुखदायी या निकृष्ट विज्ञान (dismal science), रोटी टुकड़े का स्वार्थमयी—विज्ञान (A bread and butter science with a selfish touch about it) इत्यादि नामों से पुकारा। तथा

---

2. Economics concerned with "an enquiry into the nature and causes of wealth of Nations."
—Adam Smith—'Wealth of Nation

प्राचीन अर्थ-शास्त्री जो कि 'धनेश-पूजन' (Mammon worship) की नई पद्धति के अनुयायी थे, घृणा की दृष्टि से देखे जाने लगे।

(आ) भौतिक कल्याण का विज्ञान—प्राचीन-अर्थशास्त्रियों की परिभाषाओं की आलोचनाओं को सुलझाने के लिए मार्शल ने अपनी नई परिभाषा देकर अर्थशास्त्र को उन्नत किया। मार्शल ने कहा अर्थशास्त्र केवल 'धन' से ही सम्बन्धित नहीं है अपितु मनुष्य द्वारा धन का प्रयोग किए जाने से भी है। अर्थात् 'धन' मनुष्य के लिए है न कि मनुष्य धन के लिए क्योंकि अर्थशास्त्र का मुख्य उद्देश्य जन-साधारण-कल्याण है। अर्थशास्त्र में केवल हम धन का ही अध्ययन नहीं करते वरन् मनुष्य की उन धन सम्बन्धी क्रियाओं का भी अध्ययन करते हैं जिनका उपभोग, विनिमय तथा वितरण से सम्बन्ध है। हमारा तात्पर्य उन क्रियाओं से है, जिनका उद्देश्य 'wealth getting' धन की प्राप्ति तथा 'wealth using' धन का उपभोग और जो धन की छड़ी से मापी जा सके (Measurable in terms of money)। मार्शल ने कहा 'धन' तो केवल एक **'मात्र'** है अर्थात् आदि है परन्तु अन्त तो जन साधारण का कल्याण है अर्थात् धन तो मानव-कल्याण और उनकी आवश्यकताओं की पूर्त्ति का **साधन** है स्वयं साध्य नहीं।

इस प्रकार मार्शल तथा उसके साथियों ने इस समस्या को सुलझाया और कहा कि अर्थशास्त्र धन का विज्ञान नहीं है वरन् मनुष्य का विज्ञान है रोशर (Roscher) ने ठीक कहा है, "आर्थिक विज्ञान अर्थात् अर्थशास्त्र का प्रारम्भिक बिन्दु और उद्देश्य मनुष्य है।" ("The starting point and goal of economic science is man.")।

**मार्शल की परिभाषा**– मार्शल ने अपनी 'Economics of Industry' नामक पुस्तक में अर्थशास्त्र की परिभाषा इस प्रकार से दी है।

"अर्थशास्त्र मनुष्य की साधारण जीवन सम्बन्धी-क्रियाओं का अध्ययन करता है, यह पता लगता है कि मनुष्य किस प्रकार धन कमाता है और किस प्रकार उसे व्यय करता है.....इस प्रकार यह एक ओर तो धन का अध्ययन करता है और दूसरी ओर 'मनुष्य' का, जोकि अपेक्षाकृत प्रथम से अधिक महत्त्वपूर्ण है। ("Economics or Political Economy is a study of man's action in the ordinary business of life, it enquires how he gets his income and how he uses it.....Thus, it is on one side a study of

wealth and on the other and more important side, a study of man.")[1]

परन्तु अपनी दूसरी पुस्तक 'Principle of Economics' में उन्होंने अर्थशास्त्र की परिभाषा इस प्रकार दी है—

जीवन की सामान्य दशाओं के बीच मनुष्य का अध्ययन करना ही अर्थशास्त्र है। यह उन व्यक्तिगत और सामाजिक कार्यों की छान-बीन करता है जिसका भौतिक सुखों के साधनों की प्राप्ति और उपभोग से अत्यन्त निकट सम्बन्ध है।" ("Econmics is a study of mankind in the ordinary business of life; it examines that part of the individual and social action which is most closely connected with the attainment and with the use of the material requisites of well-being.")[2]

मार्शल की विचारधारा का समर्थन करने वाले कुछ आधुनिक अर्थ-शास्त्रियों ने अर्थशास्त्र की परिभाषाएँ इस प्रकार दी हैं।—

(१) पीगू (Piguo) का मत है कि "अर्थशास्त्र आर्थिक कल्याण का अध्ययन है, इससे हमारा अभिप्राय सामाजिक कल्याण के उस भाग से है जिसे मुद्रा के माप दण्ड से प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से सम्बन्धित किया जा सकता है।" ("Economics is a study of material welfare, the range of enquiry becomes restricted to that part of social welfare that can be brought directly or indirectly into relation with the measuring rod of money") —(Piguo)

(२) प्रो० पैन्सन (Penson) का मत है कि अर्थशास्त्र भौतिक कल्याण का शास्त्र है।" ("Economics is the science of material welfare.")

(३) प्रो० ऐली (Ely) के मतानुसार, "अर्थशास्त्र वह विज्ञान है जिस में उन सामाजिक परिस्थितियों का अध्ययन किया जाता है जो मनुष्य के धन कमाने और धन का व्यय करने की क्रियाओं से पैदा होती है।" ("Econo-

---

1. Marshall,—'Economics of Industry' Page—1.
2. Marshall—"Principles of Economics"—Page—1.

mics is the science which treats of those social phenomena that are due to the wealth getting and wealth using activities of men.")

(४) प्रो० चैपमैन (Chapman) ने अर्थशास्त्र की परिभाषा करते हुए लिखा है कि "अर्थशास्त्र धन के उत्पादन, वितरण तथा उपभोग करने की विद्या है।" ("Economics is the science which studies of the wealth-earning and wealth spending activities of human being.")

(५) सर बैवरिज (Sir Beveridge) के शब्दों में "अर्थशास्त्र उन साधारण विधियों का अध्ययन है जिनके द्वारा मनुष्य अपनी भौतिक आवश्यकताओं की पूर्ति के लिए आपस में सहयोग करते है।" (Economics is the study of general methods by which men co-oeprate to meet their material needs.")

मार्शल तथा उनके अनुयायिओं की परिभाषाओं का अध्ययन करने के पश्चात् हम इस परिणाम पर आते है कि अर्थशास्त्र मुख्यतः मनुष्य का अध्ययन करता है तथा यह एक सामाजिक शास्त्र है। इस में केवल उन्हीं व्यक्तियों की आर्थिक क्रियाओं का अध्ययन किया जाता है जो सामाजिक, वास्तविक तथा सामान्य मनुष्य हैं।

**आलोचना**—पर्याप्त समय तक उपर्युक्त परिभाषाओं को उचित स्थान मिला परन्तु लन्दन स्कूल ऑफ इकोनोमिक्स (London School of Economics) के सुप्रसिद्ध अर्थ-शास्त्री प्रो० लिओनल रोबिंस (Lionel Robbins) की विचारधारा के प्रभाव से इनकी महत्ता कम होने लगी। रोविन्स ने इन सभी की कड़ी आलोचना की—विशेष रूप से मार्शल की परिभाषा की। इन्होंने कहा कि **सर्वप्रथम** तो ये परिभाषाएँ भौतिकता के जाल में फँसी हुई हैं। संसार में बहुत सी ऐसी वस्तुएँ हैं जो हमारी आवश्यकताओं की पूर्त्ति करती हैं और जिनकी पूर्त्ति सीमित है परन्तु इनसे यह आशय नहीं है कि वे भौतिक हैं। भौतिकता और अभौतिकता के बीच में किसी प्रकार की विभाजन रेखा खींचना कठिन है। उन्होंने कहा कि, "वह व्यक्ति जो थियेटर में नृत्य करता है उसका कार्य भी धन है और जो रसोइया में खाना बनाता है उसका कार्य भी धन है। परन्तु अर्थशास्त्र इन विभिन्न कार्यों का मूल्यांकन करता है।" अतः अर्थशास्त्र केवल भौतिकता से सम्बन्ध रखने वाले कारणों का ही

अध्ययन नहीं है वरन् अभौतिकता से सम्बन्ध रखने वाले कारणों अथवा वस्तुओं का अध्ययन करता है।

दूसरे स्थान पर उन्होंने कहा कि यह कहना कहाँ तक उचित है कि अर्थ-शास्त्र में केवल पार्थिव क्रियाओं का ही अध्ययन किया जाता है अपार्थिव क्रियाओं नहीं। उन्होंने कहा कि धन या सम्पत्ति से सम्बन्धित होने से कोई जनसाधारण का प्रयत्न पार्थिव या अपार्थिव नहीं हो जाता। यह तो केवल कार्य करने के ढंग पर निर्भर होता है। यह कहना अनुचित है कि केवल सामाजिक व्यक्तियों की क्रियाओं का अध्ययन किया जाता है क्योंकि मानव कल्याण के कुछ ऐसे भी सिद्धान्त हैं जो समाज में रहने वाले व्यक्तियों पर भी और जंगल इत्यादि में रहने वालों पर भी (i, e, isolated persons) लागू हो सकते हैं।

अन्त में उन्होंने कहा कि भौतिक कल्याण को पूर्ण रूप से मापा भी नहीं जा सकता है। उदाहरणार्थ दो व्यक्ति किसी वस्तु को खरीदने के लिए एकसी कीमत देते हैं परन्तु उन्हें प्राप्त होने वाली उपयोगिता भिन्न-भिन्न प्रकार की हो सकती है अर्थात् एक को अधिक और एक को कम। अतः यह कहना अनुचित है कि धन के द्वारा भौतिकता को मापा जा सकता है।

(इ) **सीमित साधनों का शास्त्र**—इस विचारधारा का समर्थन करने वालों में Lionel Robbins, Stigler, Cairncross, इत्यादि प्रमुख है। इन्होंने परम्परागत अर्थशास्त्रियों की परिभाषाओं का खण्डन करके अपने नये मत प्रस्तुत किए।

प्रो० रोबिन्स के मतानुसार, "अर्थशास्त्र वह विज्ञान है जो मानव व्यवहार का अध्ययन सीमित साधनों और साध्यों के सम्बन्ध के रूप में करता है जिनके वैकल्पिक प्रयोग भी हो सकते है।" ("Economics is the science that studies human behaviour as a relationship between ends and scarce means which have alternative uses") —Lionel Robbins

यह परिभाषा निम्न विशेषताओं का उल्लेख करती है जो कि आर्थिक विज्ञान के ढाँचे का प्रमुख ध्येय है।

(१) सर्वप्रथम मनुष्यों को आवश्यकताओ का अनुभव होता है तथा इन की कोई सीमा नहीं है।

(२) द्वितीय यह है कि समय, और इन आवश्यकताओं को पूर्ण करने के साधन सीमित हैं।

(३) अन्तिम यह कि इन सीमित साधनों का अनेक प्रकार से उपयोग हो सकता है।

बहुत से आधुनिक अर्थशास्त्रियों ने रोबिन्स की विचारधारा का समर्थन किया। स्टिगलर के अनुसार "अर्थशास्त्र उन नियमों का अध्ययन है जो प्रतिस्पद्धी आवश्यकताओं की अधिकाधिक प्राप्ति के लिए सीमित साधनों और उनके वितरण को नियंत्रित करता है।" ("Economics is study of the principles governing the allocation of scarce means among competing ends when the objetive of allocation is to maximise the attainment of the ends.)

प्रो० केयर्नक्रोस (Cairncross) के विचार भी रोबिन्स से मिलते-जुलते हैं। इनके अनुसार, "अर्थशास्त्र मानव व्यवहार पर अपूर्ण साधनों के प्रभाव का अध्ययन उन परिस्थितियों में करता है जब कि मानव के पास अपने सीमित साधनों के द्वारा प्रतिस्पर्द्धी आवश्यकताओं को पूर्ण करने के लिए उनमें वितरण की स्वतन्त्रता होती है।" ("Economics is the study of the influence of scarcity on human conduct in circumstances where men have freedom of choice in allocating scarce between competing wants)

**आलोचना**—परन्तु प्रो० रोबिन्स और उनके साथी भी समालोचकों की दृष्टि से न बच सके। डरबिन (Durbin), फ्रेजर (Fraser), वुटिन (Wooten) तथा बेवरिज (Beveridge) जैसे अर्थशास्त्रियों ने मार्शल के सिद्धान्तों की प्रबलता से रक्षा की। वुटिन (Wooten) का कथन है, "अर्थशास्त्रियों के लिए यह बहुत ही कठिन है कि वे अपने विवेचन से अर्थशास्त्र के आदर्श के महत्त्व का पूर्ण अपहरण करें।" (It is very difficult to divest their discussions completely of all normative significance)

प्रो० फ्रेसर (Fraser) का मत है कि, "अर्थशास्त्र मूल-सिद्धान्तों या साम्य-विश्लेषण से कहीं अधिक है।" (Economics is something more than a value theory or equilibrium analysis.")

प्रो० पीगू (Piguo) का कथन है कि, "जब हम मनुष्य के उद्देश्यों की देखभाल करते हैं तो वे कभी-कभी नीच और निराशाजनक प्रवृत्ति के प्रतीत हैं—तो उस समय हमारी मानसिक दशा एक दार्शनिक की सी नहीं

होनी चाहिए। हम ज्ञान का अध्ययन केवल ज्ञान के ही लिए नहीं करते वरन् हमारी प्रवृत्ति एक शरीर विज्ञानशास्त्री की सी होनी चाहिए जिसका ज्ञान पीड़ाओं को दूर करने में सहायता दे।" (When we watch the play of human motives that are ordinary—sometimes mean aud ignoble—our impulse is not that of philosophes impulse, knowledge for the sake of knowledge but rather the physiologist impulse; knowledge for the healing that knowledge may help to bring)[1]

(ई) **आवश्यकता हीनता सम्बन्धी शास्त्र**— इस मत के समर्थक भारतीय अर्थशास्त्री प्रो० J. K. Mehta हैं। इन्होंने अर्थशास्त्र की परिभाषा एक बिल्कुल नये ढग मे दी है जो प्राचीन भारतीय विचारों और संस्कृति की द्योतक है। प्रो० मेहता के अनुसार मनुष्य अधिकतम सन्तोष तभी प्राप्त कर सकता जबकि उसका अपनी आवश्यकताओं पर नियन्त्रण हो अर्थात् मनुष्य को सुख और शान्ति केवल आवश्यकता विहीनता की दशा में (State of wantlessness) ही सम्भव है। इसी मत मे सम्बन्धित उन्होंने अर्थशास्त्र की परिभाषा दी। प्रो० जे० के० मेहता के अनुसार, "अर्थशास्त्र उन मानवीय क्रियाओं का विज्ञान है जिसके द्वारा आवश्यकता विहीनता की अवस्था को प्राप्त करने का प्रयास किया जाता है।" ("Economics must, therefore, be defined as a science of human activities considered as an endeavour to reach the state of wantlessness.") अपनी पुस्तक Advanced Economic Theory में उन्होंने एक स्थान पर लिखा कि, "इस प्रकार यह कहा जा सकता है कि अर्थशास्त्र का सम्बन्ध इच्छाओं (Wants) की सन्तुष्टि से नहीं; वरन् आवश्यकताओ को कम से कम करने से है जिससे मानव प्रसन्नता और सुख प्राप्त कर सके।" ("It can, therefore, be maintained that elimination of wants is one universal aim of all behaviour.")

प्रो० जे० के० मेहता भी आलोचकों के पात्र है। इनके अनुसार उनकी परिभाषा में अव्यावहारिकता है तथा मानव जाति की प्रगति में बाधक है।

---

1. Piguo—'The Economics of Welfare' Page. 5.

उपर्युक्त विवेचना से स्पष्ट है कि अर्थशास्त्र की परिभाषाओं में पूर्णता की कमी है। आधुनिक समय में दो मत अधिक प्रचलित हैं। कुछ ऐसे अर्थशास्त्री हैं जो रोबिन्स के मत के अनुयायी हैं और कुछ मार्शल के। परन्तु अधिकतर अर्थशास्त्री मार्शल के मत को ही मानते हैं और उसका अनुसरण करते हैं। उचित सारांश प्राप्त करने के लिए हमें दोनों मतो को और भिन्न-भिन्न अर्थशास्त्रियों की परिभाषाओं से सारवस्तु को ग्रहण करना चाहिए। अतः "अर्थशास्त्र स्वीकारात्मक और आदर्शात्मक दोनों ही रूप में एक सामाजिक विज्ञान है।" ("Economics, therefore, is a social science with both its positive and normative aspects.")

## अर्थशास्त्र का क्षेत्र (Scope of Economics)

It is the definite and exact money measurement of the steadiest motives in business life which has enabled economics far to outrun every other branch of the study of man. —Marshall.

पिछले अनुच्छेदों में हम अर्थशास्त्र की परिभाषाओं पर विचार कर चुके हैं। अब हम उसके क्षेत्र का अध्ययन करेंगे। परिभाषा की तरह इसके क्षेत्र पर भी अर्थशास्त्री एक मत नहीं है। प्रो० जे० एन० कीन्स (J. N. Keynes) ने कहा है कि अर्थशास्त्र के क्षेत्र के विवेचन के लिए अधोलिखित बातें आवश्यक हैं।

(१) अर्थशास्त्र की विषय सामग्री (Subject matter of economics)
(२) अर्थशास्त्र की सीमाएँ (Limitation of economics)
(३) अर्थशास्त्र विज्ञान है या कला अथवा दोनों (Economics as a science or art or both)

## अर्थशास्त्र की विषय-सामग्री

सर्वप्रथम इसका उल्लेख हम परिभाषाओं में कर चुके हैं, परन्तु यहाँ पर पृथक् रूप से इसका वर्णन करना उचित है। Adam Smith तथा उसके समकालीन अर्थशास्त्रियों ने बताया कि अर्थशास्त्र में केवल धन का अध्ययन किया जाता है। परन्तु इसमें सुधार करते हुए मार्शल तथा इनके अनुयायियों ने इसे भौतिक कल्याण का विज्ञान कहा। इनके अनुसार मानव की उन्हीं

क्रियाओं का अध्ययन किया जाता है जो धन से सम्बन्ध रखती है अर्थात् जिन्हें प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूप से धन के माप-दण्ड से मापा जा सकता है। यह मनुष्य द्वारा धन को अर्जित करने, विनिमय करने, वितरण करने और उपभोग करने से सम्बन्धित सभी आवश्यकताओं और उनकी पूर्त्ति से प्राप्त होने वाली सन्तुष्टि का अध्ययन करता है। दूसरे शब्दों में अर्थशास्त्र समाज से सम्बन्ध रखने वाले सभी सामाजिक, वास्तविक और सामान्य मनुष्यों की धन उपार्जित (Wealth getting) और धन व्यय (Wealth using) सम्बन्धी क्रियाओं का अध्ययन करता है।

परन्तु प्रो० रोबिन्स ने इन परिभाषाओं को दोषी ठहरा कर यह कहा कि अर्थशास्त्र सीमित साधनों का विज्ञान है। उनके अनुसार केवल उन्ही आर्थिक पहलुओं का अध्ययन किया जाता है जिसका सम्बन्ध मूल्यांकन (Valuation) से है। दूसरे शब्दों में अर्थशास्त्र में मानव की क्रियाओं के केवल चयन करने के 'Choice-making' पहलु का ही अध्ययन करते है।

परन्तु प्रश्न यह उठता है कि अर्थशास्त्र मानव का एकान्तवासी रूप का अध्ययन करता है या सामाजिक सदस्य के रूप में। मार्शल के अनुसार अर्थ-शास्त्र सामाजिक व्यक्तियों की आर्थिक क्रियाओं का अध्ययन करता है। अतः अर्थशास्त्र एक सामाजिक विज्ञान है। इस में केवल समाज में रहने वाले व्यक्तियों की ही क्रियाओं का विवेचन किया जाता है अन्य साधु-सन्यासियों, जानवरों में रहने वाला टार्जन या टापू में अकेले रहने वाले रौविन्सन क्रूसो (Robbinson Cruso) की क्रियाओं का नहीं।

परन्तु प्रो० रोबिन्स के अनुसार अर्थशास्त्र के अन्तर्गत उन सब व्यक्तियों की क्रियाओं का अध्ययन किया जाता है जो सामाजिक सदस्य है अथवा समाज से बाहर रहते हैं। अर्थात् अर्थशास्त्र तो सम्पूर्ण मानव-व्यवहार का अध्ययन करता है जिनका सम्बन्ध सीमित आवश्यकताओं के सीमित साधनों से है यदि यह व्यवहार समाज के सदस्य के रूप में हो या समाज से बाहर। इसलिए यह एक केवल सामाजिक विज्ञान ही नहीं अपितु मानव विज्ञान भी है।

## अर्थशास्त्र की सीमाएं

इससे यह पता चल जाता है कि अर्थशास्त्र में क्या-क्या सम्मिलित है और क्या-क्या नहीं है जिसके कारण विषय का अध्ययन प्रकाश में आ जाता है।

**मार्शल के मतानुसार अर्थशास्त्र का निम्न सीमाओं के अन्तर्गत अध्ययन किया जाता है—**

(१) अर्थशास्त्र में केवल मनुष्यों की ही क्रियाओं का अध्ययन किया जाता है अन्य पशु पक्षियों की क्रियाएँ इसके क्षेत्र से परे हैं।

(२) इनमें भी केवल उन्हीं व्यक्तियों की क्रियाओं का अध्ययन किया जाता है जो सामाजिक है, वास्तविक है, सामान्य और औसतन है।

(३) इन सब सामाजिक, वास्तविक और सामान्य व्यक्तियों की केवल धन से सम्बन्ध रखने वाली क्रियाओं का अध्ययन किया जाता है अर्थात् जो धन से मापी जा सके।

(४) केवल वास्तविक व्यक्तियों की क्रियाओं का अध्ययन किया जाता है काल्पनिक इत्यादि का नही।

प्रो० रोबिन्स के मतानुसार—

(१) अर्थशास्त्र मे मार्शल की भाँति केवल मानवीय क्रियाओं का अध्ययन किया जाता है।

(२) इन्होंने दूसरे स्थान पर मार्शल के विपरीत यह कहा कि इसमें सामाजिक और असामाजिक दोनो की क्रियाओ का अध्ययन किया जाता है।

(३) इसमे धन से मापी जाने वाली और धन से न मापी जाने वाली दोनों प्रकार की क्रियाओं का अध्ययन किया जाता है।

(४) यह केवल एक असत्यात्मक विज्ञान है।

## अर्थशास्त्र विज्ञान और कला के रूप में
## (Economics as a science and Art)

"The English writers who have succeeded Adam-Smith have generally set out by defining Political Economy as a science and proceeded to treat it as an art ·····The modern economicst of France, Germany, Spain, Italy, and America·····all treat Political Economy as an art." —Senior

विज्ञान या कला के रूप में अर्थशास्त्र को समझने से पहले हमें इन दोनों शब्दों का अर्थ समझ लेना चाहिए।

**विज्ञान का अर्थ**—प्रकृति के किसी विभाग के सम्बन्ध में ज्ञान के क्रमबद्ध संग्रह को विज्ञान कहते हैं। (Science is a systematised body of knowledge concerning the relationship between cause and effect of particular phenomena)

इस प्रकार विज्ञान ज्ञान का वह भंडार है जिसमें निरीक्षण और प्रयोगों द्वारा प्रकृति की समानता का अध्ययन किया जाता है। परन्तु जानकारी प्राप्त करना ही आवश्यक नहीं है वरन् उसे क्रमबद्ध भी होना अत्यन्त आवश्यक है। इसीलिए Poincare ने कहा है कि "विज्ञान तथ्यों से इस प्रकार बना है जिस प्रकार पत्थरों से एक मकान बनाया जाता है, परन्तु केवल तथ्यों के एकत्रीकरण को उसी भांति विज्ञान नहीं कहा जा सकता जिस प्रकार पत्थरों के ढेर को मकान नहीं कहा जा सकता है।"[1]

विज्ञान को दो भागों में विभाजित किया गया है। वे इस प्रकार हैं—

(१) वास्तविक विज्ञान (Positive Science)

(२) आदर्शात्मक विज्ञान (Normative Science)

**वास्तविक विज्ञान**—यह वर्त्तमान या वास्तविक बातों का या वस्तुस्थिति का अध्ययन करता है। इसका क्षेत्र केवल 'क्या स्थिति है' i. e. ('what is') प्रश्न के उत्तर तक सीमित है। इसमें किन्हीं दो कारणों को और उनसे प्राप्त परिणामों के सम्बन्ध को प्रगट किया जाता है जैसे गेंद को ऊपर उछालना इसका कारण है और उसका नीचे आ गिरना इसका परिणाम है। इससे स्पष्ट है कि यह केवल वर्त्तमान की स्थिति का अध्ययन करता है, भविष्य की नहीं।

**आदर्श विज्ञान**—यह केवल वास्तविक स्थिति का ही अध्ययन नहीं करता वरन् अपना आदर्श भी प्राप्त करने की चेष्टा करता है। यह बताता है कि कौनसा आदर्श उचित है और कौनसा नहीं। यह 'क्या होना चाहिए?' ("what ought to be?") प्रश्न के उत्तर से सम्बन्ध रखता है।

---

1. "Science is built up of facts as a house is built of stones, but an accumulation of facts is no more a science than a heap of stones is a house."

—M. Poincare 'science and Hypothesis' p. 141.

**अर्थशास्त्र विज्ञान के रूप में**—विज्ञान की दोनो शाखाओं का अर्थ समझ लेने के पश्चात् प्रश्न यह उठता है कि अर्थशास्त्र कहाँ तक एक विज्ञान के रूप में है। अर्थशास्त्र एक वास्तविक विज्ञान भी है और आदर्श विज्ञान भी। वास्तविक विज्ञान के रूप में यह हमें आर्थिक क्रियाओं के कारण और उनसे प्राप्त होने वाले परिणामों के सम्बन्ध को बताता है। यह हमें अर्थशास्त्र के विभिन्न भागों जैसे उत्पादन, उपभोग, विनिमय, वितरण के अध्ययन में आने वाले भिन्न-भिन्न नियमों के कारण और परिणाम को प्रगट करता है। उपभोग के क्षेत्र में हमें यह बताता है कि प्रत्येक बढ़ती हुई इकाई से प्राप्त उपयोगिता क्रमशः कम होती जाती है। उत्पत्ति के क्षेत्र में यह बतलाता है कि श्रम और पूंजी की अधिकाधिक इकाइयों का उपयोग करने पर उत्पत्ति क्रमशः अनुपात में कम होती है। इसी प्रकार विनिमय और वितरण के क्षेत्र में बताता है कि मूल्य घटने पर माँग बढ़ जाती है और यदि पूंजी की पूर्त्ति बढ़ जाती है तो ब्याज की दर कम हो जाती है। इससे स्पष्ट है कि अर्थशास्त्र में भिन्न-भिन्न प्रकार के नियम पाये जाते है जो एक वास्तविक रूप ले लेता है।

अर्थशास्त्र एक आदर्श विज्ञान भी है। आदर्श विज्ञान के नाते यह हमें अधिकतम कल्याण करने की चेष्टा को सिखाता है। यह बतलाता है कि भिन्न-भिन्न आदर्शो को सामने रख कर हम समाज का कल्याण कर सकते हैं। किन-किन आवश्यकताओं पर अधिक व्यय करना चाहिए और किन-किन पर कम, जन संख्या किस सीमा तक बढ़नी चाहिए। लगान, मजदूरी तथा ब्याज की क्या उचित दरें होनी चाहिए आदि।

**कला का अर्थ**—कला से हमारा अभिप्रायः यह है कि अमुक लक्ष्य कैसे प्राप्त हो सकता है। अर्थात् यह "कैसे होना चाहिए" प्रश्न का उत्तर देती है। इस प्रकार कला हमें वास्तविक विज्ञान से आदर्श विज्ञान तक ले जाने के मार्ग को बतलाती है। विज्ञान हमारे सामने आदर्शों को रखता है और कला इन आदर्शों को प्राप्त करने के ढंग को बतलाती है।

**अर्थशास्त्र कला के रूप में**—यह एक कला भी है। इस रूप में यह बतलाती है कि धन की अधिकतम उत्पत्ति एवं व्यय करने से समाज का अधिकतम कल्याण हो सकता है। यह अनेक व्यावहारिक समस्याओं को सुलझाने के लिए भिन्न २ प्रकार के सुझाव देता है। जैसे खेती में कैसे वृद्धि की जा सकती है, किसानों की कैसे दशा सुधारी जा सकती है, सिंचाई के साधनों में कैसे विकास हो सकता है आदि।

## अर्थशास्त्र विज्ञान है या कला अथवा दोनों

अब प्रश्न यह उठता है कि अर्थशास्त्र विज्ञान है या कला अथवा दोनों। इसमें कोई सन्देह नहीं है कि अर्थशास्त्र एक विज्ञान भी है क्योंकि अन्य शास्त्रों की भाँति इसमें भी नियम पाये जाते हैं। दूसरे शब्दों में अर्थशास्त्र में मानव के उस व्यवहार का अध्ययन किया जाता है जिसका सम्बन्ध 'choice making' या 'valuation' से है और इसके नियमो में क्रमबद्ध संग्रह भी है। परन्तु इसके साथ-साथ यह कला भी है क्योंकि यह शास्त्र हम को अनेक व्यावहारिक समस्याओं को सुलझाने की विधि बतलाता है। प्रो० Piguo ने विज्ञान पक्ष पर प्रकाश डालते हुए ठीक ही कहा है, "When we watch the play of human motives that are ordinary.....our impulse is not that of philosopher's impulse. knowledge for the sake of knowledge but rather the physiologist impulse ; knowledge for the healing that knowledge may help to bring."[1] कला के पक्ष को महत्त्वपूर्ण बताते हुए Prof. Piguo ने ठीक ही कहा है, "Every science is both light bearing and fruit bearing but in some the light-giving aspect is more important ; and in economics latter is the case."[2] अन्त में हम कह सकते है कि अर्थशास्त्र विज्ञान भी है और कला भी।

### QUESTION

1. Define Ecoomics and give its scope and potenitalities.
2. Economics is both a Science and Art. Comment.
3. Comment on the following :—
   (a) Economics is the Science of wealth.
   (d) Economics is the Science of material welfare.
   (c) Economics is the Science of Scarce means.

---

1. *Piguo*—The economics of welfare. P. 5.
2. *Piguo*—The Economics of welfare. P. 1.

अध्याय २

# अर्थशास्त्र-शिक्षण के लक्ष्य तथा महत्त्व

## (Aims and Values of Teaching Economics)

"Every art is thought to aim at some good."

—Aristotle

जैसा कि हम गत अध्याय में देख चुके हैं कि अर्थशास्त्र एक कला भी है। यह कला के रूप में इस प्रश्न का उत्तर देता है कि "अमुक लक्ष्य कैसे प्राप्त हो सकता है", इस प्रकार यह शास्त्र हमें अनेक व्यावहारिक समस्याओं को हल करने की विधि बतलाता है और वास्तविक विज्ञान से आदर्श विज्ञान तक ले जाने के मार्ग को प्रशस्त करता है। जब अर्थशास्त्र एक कला है तो प्रश्न स्वतः ही उठ खड़ा होता है कि इसके द्वारा क्या अच्छाई प्राप्त होती है? दूसरे शब्दों में कह सकते हैं कि इस शास्त्र का किस अच्छाई को प्राप्त करने का लक्ष्य है? इसके उत्तर में कहा जा सकता है कि इस शास्त्र के अध्ययन का ध्येय मानवीय-हित है। क्योंकि व्यक्ति तथा समाज की उन्नति के लिए धन की नितान्त आवश्यकता होती है। इसके द्वारा व्यक्ति को उत्पत्ति के साधनों एवं वितरण सम्बन्धी ज्ञान प्राप्त होता है जिससे वह अपने नागरिक धर्म को बनाये रखता है। क्योंकि गरीबी नागरिक धर्म का नाश करती है अर्थात् दूसरे शब्दों में कहा जा सकता है कि गरीबी मानव को कर्त्तव्य विमुख कर देती है। जब नागरिकों की मौलिक आवश्यकताएँ पूर्ण नहीं की जायेंगी तो उनके

कर्त्तव्य-विमुख होने की सम्भावना बनी रहेगी। अर्थशास्त्र यह बतलाता है कि नागरिकता की सफलता के लिए समाज में उत्पादन के साधनों पर किसी एक वर्ग-विशेष अथवा थोड़े से व्यक्तियों का अधिकार नहीं होना चाहिए बल्कि उनका उपयोग समस्त जनता के कल्याण के लिए एवं जनता द्वारा होना चाहिए। तीसरे किसी भी राष्ट्र की उन्नति एवं विकास के लिए यह अनिवार्य है कि भावी नागरिकों का सर्वाङ्गीण हो। सर्वाङ्गीण विकास का अर्थ यह है कि व्यक्ति के सामाजिक, आर्थिक, नैतिक, बौद्धिक, शारीरिक आदि सभी भागों का पूर्ण विकास हो। व्यक्ति के सामाजिक, आर्थिक एवं बौद्धिक विकास के लिए अर्थशास्त्र की शिक्षा का अत्यन्त महत्त्वपूर्ण स्थान है। आज जिन राष्ट्रों में इस शिक्षा का पर्याप्त प्रचार एवं प्रसार है वे देश उतने ही उन्नत एवं समृद्ध हैं। इतिहास इस बात का साक्षी है कि इस शिक्षा के आधार पर इंग्लैण्ड ने विश्व के एक बड़े भूभाग पर अपना आधिपत्य स्थापित कर लिया था। अमेरिका तथा रूस ने शिक्षा का आश्रय लेकर विश्व के अन्य राष्ट्रों की अपेक्षा अपने को अधिक उन्नतिशील एवं समृद्धिशाली बनाया। इस प्रकार के विवेचन के आधार पर हम कह सकते है कि किसी राष्ट्र की उन्नति एवं विकास के लिए इस प्रकार की शिक्षा की अपेक्षा है।

समस्त ज्ञान अखण्ड है। वह पृथक्-पृथक् भागों में विभक्त नहीं किया जा सकता है, परन्तु पठन-पाठन की सुविधा के लिए मानव ने उसका वर्गीकरण कर लिया है और प्रत्येक वर्ग को एक विषय कहते हैं। परन्तु विषय-ज्ञान का विभाजन नहीं है, वरन् एक ज्ञान के अध्ययन के दृष्टिकोण का अन्तरमात्र है। फिर भी विषय का अपना एक उद्देश्य तथा एक विशिष्ट दृष्टिकोण होता है। उसके उच्च आदर्श हैं, जिनको प्राप्त करने के लिए वह प्रयत्नशील रहता है तथा उसकी एक श्रेष्ठ परम्परा है जिसका वह आदर करता है। अतएव किसी विषय को पढाने में ज्ञान के अतिरिक्त जब तक छात्र इन बातों को ग्रहण नही करता तब तक उस विषय का अध्यापन अपूर्ण रहता है। जब प्रत्येक विषय अपने शिक्षण के कुछ विशिष्ट लक्ष्य रखता है तो प्रश्न स्वतः ही उठता है कि अर्थशास्त्र-शिक्षण के क्या लक्ष्य है ?

## अर्थशास्त्र-शिक्षण के लक्ष्य (Aims of Teaching Economics)

हम जब किसी विषय का अध्ययन करते है तो इससे पहले उसके लक्ष्यों एवं महत्त्वों को जान लेना आवश्यक है क्योंकि लक्ष्य एक चेतनाभूत एवं क्रियाशील अभिप्राय होता है जिसको प्राप्त करना हमारे उस विषय के अध्ययन

का प्रमुख ध्येय होता है। इस प्राप्ति के मार्ग में वह सदैव हमारे समक्ष बना रहता है। इन लक्ष्यों तथा महत्त्वों के अभाव में उस विषय का अध्ययन सार्थक नहीं होगा। यही बात अर्थशास्त्र के विषय में भी है। यदि हम लक्ष्यों को निर्धारित नहीं करेंगे, तो उन्हें प्राप्त करने की योजना क्रियान्वित करना सम्भव नहीं होगा। दूसरे शब्दों में कहा जा सकता है कि बिना लक्ष्य के कोई कार्य नही किया जा सकता। शिक्षा के लक्ष्यों के लिए हमें समाज की ओर ध्यान देना पड़ता है ; अर्थात् शिक्षा के उद्देश्य समाज की व्यवस्था के अनुसार निर्धारित किए जाते है। जैसा समाज होगा उसके शिक्षालयों के वैसे ही लक्ष्य होंगे। इस प्रकार हम कह सकते है कि प्रत्येक विषय के लक्ष्य सामान्य शिक्षा के उद्देश्यों के आधार पर निर्धारित किये जाते हैं। प्रो० सी० ई० एम० जोड़ ने अपनी पुस्तक "About Education" में शिक्षा के अधोलिखित उद्देश्य बतलाये हैं—

(१) प्रत्येक लड़का या लड़की की अपनी जीविका कमाने के लिए योग्य बनाना। (To equip a boy or girl to earn his or her living.)

(२) उसको लोकतन्त्र में एक सफल नागरिक का कार्य करने के लिए योग्य बनाना। (To equip him to play his part as the citizen of a democracy.)

(३) उसको इस योग्य बनाना जिससे वह अपनी प्राकृतिक एवं अन्तर्हित शक्तियों एवं सामर्थ्यों का विकास एवं अच्छा जीवन व्यतीत कर सके। (To enable him to develop all the latent powers and faculties of his nature and so to enjoy a good life.)

शिक्षाशास्त्रियों का मत है कि शिक्षा का मुख्य लक्ष्य बालक के व्यक्तित्व का सम्पूर्ण विकास करना है। यदि शिक्षा के उपरोक्त लक्ष्यों को ध्यानपूर्वक देखा जाय तो प्रतीत होगा कि ये लक्ष्य किसी एक विशिष्ट विषय के अध्यापन से प्राप्त नहीं किये जा सकते वरन् इनकी प्राप्ति के लिए विभिन्न विषयों का प्रतिपादन करता है। परन्तु इन लक्ष्यों की प्राप्ति में अर्थशास्त्र बहुत ही सहायक है। अपनी जीविका कमाने के योग्य बनाने में अर्थशास्त्र बहुत ही सहायक है क्योंकि इस शास्त्र का सम्बन्ध वस्तुओं और अवसर के चयन से है। नागरिक अपने धर्म को सफलतापूर्वक तभी निभा सकता है जब उसकी मौलिक आवश्यकताओं की पूर्ति हो जायगी। मौलिक आवश्यकताओं की पूर्ति में इस शास्त्र का ज्ञान बड़ा लाभप्रद है। यहाँ तक कि बच्चे की अन्तर्हित शक्तियों के विकास

में इसका महत्त्वपूर्ण स्थान है। बालक के व्यक्तित्व का तब तक सम्पूर्ण विकास नहीं हो सकेगा जब तक उसका आर्थिक पक्ष ठीक प्रकार से विकसित न हो जायगा। इस प्रकार के विवेचन के आधार पर हम कह सकते हैं कि प्रत्येक विषय के लक्ष्य शिक्षा के लक्ष्यों के आधार पर निर्धारित होते हैं।

प्रो० पीगू (Piguo) ने अपनी पुस्तक 'The Economics of Welfare' में बतलाया है कि किसी विषय के अध्ययन के दो प्रमुख ध्येय हुआ करते हैं। वे इस प्रकार हैं—

(१) ज्ञान प्राप्त करना तथा

(२) व्यावहारिक जीवन की समस्याओं को सुलझाना।

उन्होंने बतलाया कि यदि किसी विषय में एक ध्येय का महत्त्व अधिक है तो दूसरे विषय में दूसरे ध्येय का महत्त्व अधिक होता है। परन्तु अर्थशास्त्र में इन दोनों उद्देश्यों का समन्वय है अर्थात् दूसरे शब्दों में हम कह सकते है कि यह शास्त्र हमें प्रकाश देता है तथा फल भी। प्रो० मार्शल (Marshall) ने बतलाया है कि "अर्थशास्त्र के अध्ययन का ध्येय प्रथमतः तो केवल ज्ञान के लिए ज्ञान प्राप्त करना है और दूसरे व्यावहारिक जीवन, विशेषतः सामाजिक जीवन में मनुष्य के पथ को प्रशस्त करना है।" (The aims of study of Economics are to gain for its own sake and to obtain guidance in the practical conduct of life and especially social life.")

प्रो० बाइनिंग तथा बाइनिंग (A. C. Binning and D. H. Binning) ने अर्थशास्त्र के अधोलिखित लक्ष्य निर्धारित किये है—

(१) सेकण्डरी स्कूल अर्थशास्त्र का ध्येय, आधुनिक अर्थशास्त्र के सिद्धान्तों को निरीक्षण एव क्षण-क्षण से सम्बन्धित रीतियों की सूझ के अनुसार अध्यापन कराना, होना चाहिए।

(२) छात्रों को दिन-प्रतिदिन के जीवन के लिए अर्थशास्त्रों के सिद्धान्तों को व्यवहार रूप में लाने के लिए शिक्षित करना अर्थात् दूसरे शब्दों में कह सकते हैं कि छात्रों को अर्थशास्त्र के सिद्धान्तों का व्यावहारिक जीवन में प्रयोग करने के लिए प्रशिक्षित करना।

(३) छात्रों को व्यावहारिक जीवन की समस्याओं को सुलझाने के योग्य बनाना।

(४) छात्रों में सामाजिक तथा आर्थिक वातावरण को समझने के प्रति स्पष्ट सूझ उत्पन्न करना।[1]

एम० पी० मुफात (M. P. Moffatt) ने अपनी पुस्तक 'Social Studies Instruction' में अर्थशास्त्र के निम्नलिखित लक्ष्य दिये हैं—

(१) छात्रों को उन आर्थिक स्थितियों तथा लाभ के सम्भाव्य साधनों से परिचित कराना जिससे वे अपने व्यवसाय का चयन कर सकें।

(२) छात्रों में कुशल उपभोक्ता की भावना का विकास करना।

(३) राष्ट्रीय आय में वृद्धि करने की क्षमता प्रदान करना।

(४) छात्रों में बजट के व्यावहारिक महत्त्व को समझने की क्षमता प्रदान करना।

(५) राष्ट्रीय रहन-सहन के स्तर को उच्च बनाने के लिए योग्यता प्रदान करना।

Lipstreu[2] ने अर्थशास्त्र-शिक्षण के अधोलिखित उद्देश्यों का प्रतिपादन किया है—

(१) भोजन, वस्त्र, निवास तथा स्वास्थ्य के क्रय एवं उपभोग में बुद्धिमानी के साथ वृद्धि करना। (To promote wiser purchasing and consumption of food, clothing, shelter and health.)

(२) छात्रों को उन अनुभवों को प्रदान करना जिनसे उनमें तर्क-संगत चयन करने की शक्ति का विकास हो। (To provide experiences that

---

1. "The aim of secondary school economics should be to teach modern economic principles by observation and through an understanding of current practices. Pupils should be trained to apply sound economic theory to everyday life. Of the economic problems of the present day, those connected with industry, the tariff, taxation, the expense of government, and the cost of living are but a few of the many that the citizen has to face continually. A thorough appreciation of these problems and a clear insight by the pupil into the social and economic environment are aims that, when achieved, are worthwhile and contribute largely to the main aims of education." —(Bining and Bining—'Teaching the Social Studies in Secondary Schools', Page 41.)

2. O. Lipstreu, "Experts look at Consumer Education in the Secondary School"—The School Review, L VII (March 1949), PP. 155-57—Quoted by Moffat in "Social studies Instruction", page—316-17.

will improve the ability of students to make rational choices.)

(३) कुशल उपभोक्ता की नागरिकता विकसित करना। (To develop intelligent consumer citizenship.)

(४) छात्रों को उन साधनों एवं सूचनाओं के सूत्रों से परिचित कराना जो एक उपभोक्ता के लिए सहायक होती हैं। (To aquaint the student with agencies and sources of information that are helpful to the consumer.)

(५) छात्रों में आर्थिक समस्याओं के लिए व्यापक सामाजिक विवेक उत्पन्न करना। (To develop a broad social intelligence in Economic problems.)

(६) उच्च स्तरीय मूल्यों एवं सूचियों को विकसित करना। (To develop high standards of Values and taste)

(७) लाभ की अर्थ-व्यवस्था में उपभोक्ता के कार्यों की सराहना करने की शक्ति विकसित करना। (To cultivate an appreciation of the role of consumer in a profit economy.)

(८) सहयोग की वृत्ति प्रोत्साहित करना जिससे आर्थिक-कल्याण में वृद्धि हो। (To promote cooperative attitudes that tend to increase the Economic well-being.)

(९) प्रचार की रीतियों के मूल्यांकन के साधनों को प्रदान करना। (To provide means of evaluating the techniques of advertising.)

(१०) राजकीय व्ययों के महत्त्व को समझने की शक्ति उत्पन्न करना। (To develop an understanding of the significance of public expenditures.)

(११) उपभोक्ता में अपने अवकाश के समय का उपयोग करने के लिए एक दर्शन उत्पन्न करना तथा इसके साथ ही साथ अच्छी क्रयशीलता की भावना का विकास करना जिससे वह अपनी व्यावसायिक रुचियों की संतुष्टि कर सके। (To develop in the consumer a philosophy about his use of leisure time, as well as good "buymanship" in satisfying his avocational interests.)

## भारतीय स्थितियों के अनुसार अर्थशास्त्र-शिक्षण के लक्ष्य (Aims of Teaching Economics According to Indian Conditions)

**भारतवर्ष में अर्थशास्त्र की शिक्षा की आवश्यकता**—भारतवर्ष एक नवोदित राष्ट्र (Rising Nation) है। शताब्दियों की परतन्त्रता के उपरान्त हमारा देश सन् १९४७ में स्वतन्त्र हुआ और उसने अपने जीवन के एक नवीन चरण में पदार्पण किया। भारतवर्ष ने लोकतन्त्र को राजनैतिक क्षेत्र में अपनाया। परन्तु लोकतन्त्र का अर्थ राजनैतिक क्षेत्र तक ही सीमित नहीं है वरन् वह जीवन यापन करने का एक ढंग (mode of life) भी है। लोकतंत्र प्रणाली को जीवन के समस्त क्षेत्रों में अपनाया जाना चाहिए। उदाहरणार्थ—सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक, धार्मिक और नैतिक आदि। क्योंकि लोकतन्त्र शासन का एक स्वरूप है, यह एक प्रकार की अर्थ-व्यवस्था (Economy) है, समाज की एक व्यवस्था, जीवन का एक पथ एवं इन समस्त वस्तुओं की एक मिश्रित व्यवस्था है। जब लोकतन्त्र एक प्रकार की अर्थ-व्यवस्था है तो भारतवर्ष के लिए अर्थशास्त्र की शिक्षा की नितान्त आवश्यकता है क्योंकि राजनैतिक लोकतन्त्र आर्थिक लोकतन्त्र के अभाव में सफल नहीं हो सकता। परन्तु आर्थिक लोकतन्त्र तभी स्थापित किया जा सकता है जब वहाँ के नागरिकों को अर्थशास्त्र का ज्ञान हो। यद्यपि हमारे देश में अर्थशास्त्र का अध्ययन कराया जाता है परन्तु उन्हें जो आर्थिक नियम एवं सिद्धान्त बताये जाते है वे भारतीय स्थितियों के अनुकूल नहीं है वरन् विदेशी वातावरण की सृष्टि है। ऐसी स्थिति में हमारे राष्ट्र को भारतीय अर्थशास्त्र एवं अर्थशास्त्रियों की नितान्त आवश्यकता है।

आज का भारतवर्ष निर्धन है। प्राचीन काल में यह चाहे कितना ही सम्पन्न एवं समुन्नत था, परन्तु मध्यकाल में इसकी प्रगति अवरुद्ध ही नहीं हो गई वरन् यह बहुत पिछड़ गया। अब पुनः भारतवर्ष आर्थिक विकास की ओर अग्रसर हो रहा है। इस समय उसके सामने दरिद्रता, शोषण, बेकारी, उद्योग-धन्धों की हीन दशा, कृषि की अवनति, जनाधिक्य (Over Population) राष्ट्रीय चरित्र का अभाव आदि अनेक जटिल समस्याएँ है। भारतवर्ष की अधिकांश जनता कठिन परिश्रम करने के उपरान्त भी भरपेट भोजन प्राप्त नहीं कर पाती। इन स्थितियों का एक कारण भौगोलिक-परिस्थितियाँ भी हैं। देश में समय-समय कभी अनावृष्टि कभी अतिवृष्टि कभी उपलवृष्टि के कारण और सिंचाई के अपर्याप्त साधनों के कारण पर्याप्त अन्न का उत्पादन नहीं

होता। भारतवर्ष एक कृषि-प्रधान देश होने पर भी, यहाँ का कृषि-उद्योग बड़ी दयनीय अवस्था में है। यह उद्योग वर्षा का जुआ बन गया है। औद्योगिक दृष्टि से भी भारतवर्ष का स्थान बहुत ही निम्न है। अतः देश की इन जटिल समस्याओं के सुलझाने, राष्ट्र की निर्धनता के निवारण तथा देश के आर्थिक विकास के लिये अर्थशास्त्र का ज्ञान परमावश्यक है।

उपरोक्त विवेचन के आधार पर कहा जा सकता है कि भारतवर्ष के लिये अर्थशास्त्र की सम्यक् शिक्षा की नितान्त आवश्यकता है। जब भारत के लिये इस शिक्षा की आवश्यकता है तो स्वतः ही यह प्रश्न उठता है कि भारत की स्थितियों के अनुसार अर्थशास्त्र-शिक्षण के क्या ध्येय होने चाहियें ? इसके उत्तर में अधोलिखित उद्देश्यों को निर्धारित किया जा सकता है—

(१) अर्थशास्त्र के अध्ययन से छात्रों को देश की आर्थिक स्थिति एवं समस्याओं से परिचित कराना, जिससे वे उनको हल करने तथा राष्ट्र के आर्थिक विकास में सहयोग प्रदान कर सकें।

(२) छात्रों को अर्थशास्त्र के सामान्य नियमों का ज्ञान कराना जिससे वे आर्थिक समस्याओं के सुलझाने में उनका उपयोग कर सकें तथा आवश्यकतानुसार नवीन नियमों के प्रतिपादन में सहयोग दे सकें। दूसरे शब्दों मे कहा जा सकता है कि समस्याओं के विश्लेषण के पश्चात् वे सामान्यीकरण कर सकें।

(३) छात्रों मे आर्थिक नागरिकता (Economic Citizenship) का विकास करना, जिससे वे उत्तरदायित्व की भावना से कार्य कर सकें। यदि वे आर्थिक क्षेत्र में नागरिक के कर्त्तव्यों एवं अधिकारों से परिचित हो जायेंगे तो देश में आर्थिक विषमताओं का निवारण हो जायगा।

(४) छात्रों को राष्ट्र की औद्योगिक एवं व्यापारिक उन्नति के हेतु अभीष्ट उपायों से अवगत कराना।

(५) छात्रों को शासन राज्य के कर-विषयक नियमों से पूर्णतः अवगत कराना तथा उनकी समीक्षा करने की क्षमता विकसित करना।

(६) छात्रों में मितव्ययिता की भावना उत्पन्न करना जिससे व्यावहारिक जीवन में बजट के महत्त्व को समझ सकें।

(७) दूसरे राष्ट्रों की आर्थिकसमस्याओं से अवगत कराकर उनके प्रति उदारता एवं सहानुभूति-पूर्वक विचार करने की शक्ति उत्पन्न करना जिससे उनका दृष्टिकोण व्यापक बन सके।

(८) छात्रों में वैज्ञानिक दृष्टिकोण (Scientific outlook) उत्पन्न करना जिससे वे प्रत्येक तथ्य का अन्ध अनुसरण न कर सकें वरन् उसको विचार एवं विश्लेषण करने के पश्चात् ही अपना सकें।

(९) सरकार द्वारा प्रदत्त आर्थिक आँकड़ों एवं घटनाओं की समीक्षात्मक दृष्टि से विश्वसनीयता की कसौटी पर जाँचने की क्षमता प्रदान करना।

(१०) छात्रो में आर्थिक जागरुकता उत्पन्न करना।

(११) देश की विभिन्न वस्तुओ के उत्पादन, वितरण, विनिमय एवं उपभोग के नियमों से छात्रों को अवगत कराना।

(१२) देश के रहन-सहन के स्तर एवं राष्ट्रीय आय की वृद्धि करने में छात्रों को सहयोगी नागरिक बनाना।

(१३) छात्रों को देश की सम्पत्तियो से परिचित कराकर उनके द्वारा अधिकतम लाभ उठाने की क्षमता उत्पन्न करना।

(१४) छात्रों में सहयोग, सहिष्णुता, उदारता, मितव्ययिता, सदाचारिता, एकता आदि गुणों का विकास करना जिससे वे सामाजिक उन्नति में सहयोग दे सकें तथा इन गुणों के विकास के द्वारा उनमें सामाजिक चेतना उत्पन्न करना।

(१५) अर्थशास्त्र के शिक्षण द्वारा छात्रों के ज्ञान में अभिवृद्धि करना जिससे वे आर्थिक पदों उदाहरणार्थ व्यय, भूमि, लगान, पूंजी, धन, श्रम, उत्पत्ति, आवश्यकता, आदि का ज्ञान प्राप्त कर सकें तथा उनके प्रति अपनी धारणाएँ स्थिर कर सकें। इसके अतिरिक्त उन्हें आर्थिक नियमो एवं प्रक्रियाओं से अवगत कराना। उदाहरणार्थ—समसीमान्त उपयोगिता नियम, (Law of Equi-marginal utility) क्रमागत उपयोगिता ह्रास नियम (Law of Diminishing utility), माँग तथा पूर्ति का नियम (Law of Demand and Supply) ग्रेशम का नियम (Gresham's Law) रहन-सहन का स्तर, (Standard of Living) पारिवारिक बजट, (Family Budget) सहकारिता (Cooperation) आदि।

## अर्थशास्त्र-शिक्षण के महत्त्व
## (Values of Teaching Economics)

जे० एच० डॉड[1] (J. H. Dodd) ने अर्थशास्त्र-शिक्षण के अधोलिखित महत्त्व बतलाये हैं—

---

1. J.H. Dodd, 'Economics in the Secondary Schools' P.P 7—Quoted by M. P Moffatt in 'Social Studies Instruction'—Page—311.

(१) अर्थशास्त्र-शिक्षण व्यवसाय या पेशे के चयन में सहायता प्रदान करता है।

(२) इसके द्वारा छात्र वैयक्तिक एवं पारिवारिक वित्तीय मामलों की व्यवस्था करना सीख जाते है।

(३) धन का सदुपयोग करना सिखाता है।

(४) उद्योग एव व्यवसाय के संगठन में सहायता प्रदान करता है।

(५) मताधिकार के अधिकारो एवं उत्तरदायित्वो को कार्यान्वित करना सिखाता है।

(६) अर्थशास्त्र-शिक्षण तत्कालीन सभ्यता के समझने में सहायता प्रदान करता है।

अर्थशास्त्र-शिक्षण के महत्त्वो को अधोलिखित दो भागो में विभक्त किया जा सकता है—

(१) सैद्धान्तिक महत्त्व (Theoritical Values)

(२) व्यावहारिक महत्त्व (Practical Values)

**(१) सैद्धान्तिक महत्त्व**—अर्थशास्त्र-शिक्षण के सैद्धान्तिक महत्त्वों को निम्नलिखित भागों में विभक्त कर सकते हैं—

(अ) सैद्धान्तिक ज्ञान-वर्द्धन (Expansion of Theoritical Knowledge.)

(ब) मानसिक शक्तियो का विकास (Development of Mental Powers.)

(स) व्यापक दृष्टिकोण (Broad mindedness)

(द) सापेक्षिक महत्त्व को समझने की शक्ति (Power of Understanding of Relative Importance.)

(य) विविध जटिलताओ का निराकरण (Solution of Various Complexities)

**(अ) सैद्धान्तिक ज्ञान-वर्द्धन**—अर्थशास्त्र-शिक्षण से छात्रों को विभिन्न आर्थिक पदों, नियमो तथा धारणाओं का ज्ञान प्राप्त होता है। इनके अध्ययन से वह इस बात के जानने में समर्थ होता है कि हमारे देश में किस प्रकार की आर्थिक व्यवस्था ? उत्पादन किन-किन साधनों के द्वारा होता है। समाज में धन का वितरण किस प्रकार होता है ? इन सबके ज्ञान से वह इस बात का अनुभव करने लगता है कि राष्ट्र की आर्थिक व्यवस्था में उसका क्या

स्थान एवं दायित्व है ? इसके अतिरिक्त वह देश की आर्थिक समस्याओं का वास्तविक रूप जानने में समर्थ होता है। विभिन्न राजनैतिक विचारधाराओं उदाहरणार्थ—समाजवाद, श्रेणी समाजवाद, श्रमिक संघवाद, पूँजीवाद, साम्यवाद आदि को समझने में इस शास्त्र के ज्ञान से सहायता प्राप्त करता है। उपर्युक्त विवेचन के आधार पर हम कह सकते है कि इस प्रकार छात्रों के सैद्धान्तिक ज्ञान में पर्याप्त रूप से वृद्धि हो जाती है।

**(ब) मानसिक शक्तियों का विकास**—समूह-मनोविज्ञान (Faculty Psychology) के समर्थकों के अनुसार मस्तिष्क विभिन्न विभागों का, अर्थात्—तर्कशक्ति, चिन्तनशक्ति, स्मरणशक्ति, विवेकशक्ति (Power of Discrimination) निर्णय शक्ति, अवलोकनशक्ति (Power of Observation) आदि का समूह है। अर्थशास्त्र के शिक्षण से इन शक्तियों का विकास होता है। जैसा कि हम गत अध्याय में देख चुके है कि अर्थशास्त्र एक विज्ञान है। यद्यपि यह प्राकृतिक विज्ञानों की भाँति विज्ञान नहीं है जिनमें सिद्धान्तों की सर्जना प्रयोगशाला में किये गये अवलोकन एवं परीक्षण द्वारा की जाती है। इस शास्त्र की प्रयोगशाला समाज और इसकी विषय-सामग्री मानव है जिसकी इच्छाओं, आचरणों, विचारों आदि में सदैव परिवर्तन होता रहता है। परन्तु इसमें 'आगमन तथा निगमन' विधियों का प्रयोग होता है। आगमन विधि के द्वारा छात्रो की अवलोकन-शक्ति का विकास होता है और निगमन विधि तर्कशक्ति के विकास में सहायता प्रदान करती है। अर्थशास्त्र के अध्ययन में छात्रों को विभिन्न समस्याओं के विभिन्न पक्षों पर विचार करना पड़ता है तथा उनके औचित्य एवं अनौचित्य का भी पता लगाना पड़ता है। इससे उनकी विचार एवं विवेकशक्तियों का विकास होता है। इसके अध्ययन में बालकों को तथ्यों का संकलन एवं उनको सम्बद्ध करना पड़ता है। जब उनको इस एकत्रित सामग्री में उपयोगी तत्त्वों का चयन करना पड़ता है तब उन्हें अपनी निर्णयशक्ति का प्रयोग करना पड़ता है। इससे उनकी निर्णयशक्ति विकसित होती है। इस प्रकार अर्थशास्त्र के शिक्षण से छात्रों की मानसिक-शक्तियों का पर्याप्त विकास होता है।

**(स) व्यापक दृष्टिकोण**—जैसा कि हम पिछले अनुच्छेदों में अध्ययन कर चुके हैं कि अर्थशास्त्र के द्वारा छात्रों के ज्ञान की वृद्धि होती है। इस ज्ञान के आश्रय से वह अपनी आर्थिक व्यवस्था को भलीभाँति समझ जाता है जिसमें वह अपना जीवन व्यतीत कर रहा है। इसके साथ-साथ विभिन्न देशों की

आर्थिक व्यवस्थाओं का तुलनात्मक अध्ययन करके इस निष्कर्ष पर पहुँचने में समर्थ हो जाता है कि मानव-कल्याण के लिए कौनसी आर्थिक व्यवस्था उपयुक्त होगी। इसके अतिरिक्त यह जान जाता है कि धन मनुष्य के लिए है न कि मनुष्य धन के लिए। वह व्यावहारिक समस्याओं का वैज्ञानिक दृष्टिकोण से हल करना सीख जाता है जिससे मानव दृष्टिकोण व्यापक हो जाता है।

**(द) सापेक्षिक महत्त्व को समझने की शक्ति**—अर्थशास्त्र-शिक्षण से छात्रों की बुद्धि तीक्ष्ण हो जाती है। इसके आधार पर वह अनेक घटनाओं एवं वस्तुओं में से उपयुक्त एवं उचित को निकालकर ग्रहण कर लेता है और अनावश्यक घटनाओं का परित्याग कर देता है। छात्र आर्थिक परिणामों के निकालने में विश्लेषण पद्धति का उपयोग करते हैं। जिस समय वे विश्लेषण करते हैं उनके समक्ष अनेक आवश्यक अनावश्यक बातें उपस्थित रहती हैं। वे बिना चयन के किसी परिणाम पर नही पहुँच सकते। अतः उन्हें इस सामग्री में से अनुपयोगी को निकालना पड़ता है। इस प्रकार छात्र इस क्रिया में इतने पटु हो जाते है कि मानवीय आचरण एवं व्यवहार को देखते ही यह बतला देते हैं कि कौनसा उपयुक्त है और कौनसा नही है। इस प्रकार छात्रों में अनेक तथ्यों के सापेक्षिक महत्त्व को पहचानने की शक्ति विकसित हो जाती है।

**(य) विविध जटिलताओं का निराकरण**—छात्र अर्थशास्त्र में विभिन्न समस्याओं का अध्ययन करते हैं तथा उनको सुगमतापूर्वक हल करने की विधियाँ खोजते हैं। इन समस्याओं के हल करने से उनमें समस्या हल करने की कला उत्पन्न हो जाती है। छात्र इसके आश्रय से अपने जीवन की विभिन्न जटिलताओं एवं समस्याओं का निराकरण करते हैं। आधुनिक युग विविधताओं तथा जटिलताओं से भरा हुआ है। जीवन के प्रत्येक क्षेत्र में हमें इन जटिलताओ तथा समस्याओं का सामना करना पडता है। अर्थशास्त्र के अध्ययन से हम इन जटिलताओं को सफलतापूर्वक हल करने में सफल होते है। इन समस्याओं को सुलझाने से छात्रों में विवेक एवं नागरिकता की भावना उत्पन्न होती है।

**(२) व्यवहारिक महत्त्व**—प्रो० पीगू (Pigou) के मतानुसार "अर्थशास्त्र का प्रमुख महत्त्व मस्तिष्क सम्बन्धी अठखेलियाँ खेलना नही है और न यह कि उसके द्वारा हमें ज्ञान केवल ज्ञान के लिए प्राप्त होता है बल्कि यह आचार-शास्त्र का साथी एवं व्यवहार का दास है।" इस प्रकार पीगू ने अर्थशास्त्र के व्यावहारिक महत्त्व पर बल दिया है। अर्थशात्र शिक्षण से प्राप्त व्यावहारिक महत्त्वों को अधोलिखित दो भागों में विभक्त किया जा सकता है—

(१) व्यक्तिगत महत्त्व ।

(२) सामाजिक महत्त्व ।

(१) **व्यक्तिगत महत्त्व**—व्यक्तिगत क्षेत्र में गृहस्वामी, व्यापारी, श्रमिक, राजनीतिज्ञ, समाजसुधारक आदि आते है । गृहस्वामी अर्थशास्त्र के ज्ञान से अपनी आय-व्यय को संतुलित करने का ढंग सीख जाता है । इस कार्य में उसको पारिवारिक बजट सम्बन्धी एन्जिल के नियम (Engel's Law) से पर्याप्त सहायता प्राप्त होती है । 'समसीमान्त उपयोगिता नियम' (Law of Equi-marginal utility) के ज्ञान से व्यक्ति कम से कम व्यय द्वारा अधिक से अधिक संतुष्टि प्राप्त करना सीख जाता है । इसके अतिरिक्त व्यक्ति 'उपभोक्ता की बचत' के सिद्धान्त से यह जान जाता है कि किन वस्तुओं पर धन का व्यय करने से उसको अधिक से अधिक संतुष्टि प्राप्त हो सकती है ? इस प्रकार अर्थ-शास्त्र के ज्ञान से व्यक्ति को निम्नलिखित व्यावहारिक महत्त्व प्राप्त होते है—

(१) सीमित आय के व्यय से अधिकतम संतुष्टि प्राप्त करने के साधनो का ज्ञान प्राप्त करता है ।

(२) व्यक्तिगत बजट के आधार पर व्यय करके अपनी आय का सदुपयोग करना सीखता है ।

(३) वस्तुओ के क्रय-विक्रय के सम्बन्ध में ज्ञान प्राप्त कर लेता है ।

(४) आय को वर्तमान तथा भविष्य की आवश्यकताओं पर व्यय करने के साधनों का ज्ञान प्राप्त करता है ।

(५) व्यक्ति अपनी बचत के विनियोजन (Investment) के विभिन्न ढंगों की जानकारी प्राप्त करता है ।

(६) व्यापारी मुद्रा प्रसार (Inflation) और संकुचन (Deflation) से प्राप्त होने वाले लाभों का ज्ञान प्राप्त करते है ।

(७) व्यापारी लोग अर्थशास्त्र से उन ढंगों को प्राप्त करते हैं जिनसे वे व्यवसाय में सफलता प्राप्त कर सकते है ।

(८) उत्पादक अर्थशास्त्र के ज्ञान से अपने उत्पादन-कार्य में बहुत सहायता प्राप्ता करता है । इसके ज्ञान से वे न्यून-उत्पादन तथा अधिक उत्पादन की समस्याओं से बच जाते हैं ।

(९) इसके ज्ञान से प्रबन्धक, बैंकर्स तथा संचालक सभी लोगों को लाभ प्राप्त होता है ।

(१०) इसके ज्ञान से छात्रों को मजदूरों की समस्याओं का ज्ञान हो जाता है तथा वे उनकी समस्याओं का हल निकालने में सफल होते है।

(११) इससे श्रमिकों को भी लाभ होता है। एक तो उनके ज्ञान का विकास होता है तथा दूसरे वे अपने जीवन-स्तर को उच्च करने में सफल होते है। अर्थशास्त्र के ज्ञान ने ही उनको अपनी माँगो की ओर जागृत किया है। श्रमिक अर्थशास्त्र के ज्ञान से अपने को श्रमिक संघो में सगठित करके पूँजीपतियो के शोषण से बचाते हैं।

(१२) छात्र इस विषय के ज्ञान से अपनी सरकार के कर-विषयक सिद्धान्तों की समीक्षा करके सुधार करवा सकते है।

(१३) देश के राजनीतिज्ञों के लिए भी अर्थशास्त्र के ज्ञान की बहुत आवश्यकता है। इसके ज्ञान से वे बजट, कर-नीति, मुद्रा-प्रसार एवं संकुचन, आयात-निर्यात आदि समस्याओं को सुलझा सकते हैं। इसके अतिरिक्त वे आर्थिक तथा राजनीतक विचारधाराओं में घनिष्ठता स्थापित करने में सफल होते हैं।

(१४) इसके ज्ञान से समाज सुधारक बहुत सी समस्याओं—जनसंख्या, संयुक्त परिवार व्यवस्था, दहेज प्रथा, जाति-प्रथा, बेकारी की समस्या को सुलझाने में सफल होते हैं।

(२) **सामाजिक महत्त्व**—अर्थशास्त्र एक सामाजिक विज्ञान है। इसमें किसी एक व्यक्ति की समस्याओं एवं क्रियाओं का अध्ययन नहीं किया जाता वरन् इसमें व्यक्ति की क्रियाओं का सामूहिक दृष्टिकोण से अध्ययन किया जाता है। इसके द्वारा विभिन्न सामाजिक समस्याओं के हल पर प्रकाश डाला जाता है। अर्थशास्त्र सदैव सामाजिक समस्याओं के निराकरण में सहायता प्रदान करता है। समाजवादी व्यवस्था, आर्थिक विकास योजनाएँ, अन्तर्राष्ट्रीय आर्थिक संस्थान आदि इस शास्त्र के अनुदान है। इससे आर्थिक विकास में पर्याप्त सहायता मिलती है। अर्थशास्त्र अधोलिखित सामूहिक समस्याओं पर प्रकाश डालता है—

(१) जनाधिक्य की समस्या।
(२) बेकारी।
(३) निर्धनता।
(४) मुक्त व्यापार नीति कब लाभप्रद है ?
(५) धन का समान वितरण क्यों लाभप्रद है ?

(६) उत्पादन की वृद्धि एवं उपभोग।

(७) वर्ग-संघर्ष किस प्रकार दूर किया जा सकता है ?

उपर्युक्त विवेचन के आधार पर कहा जा सकता है कि अर्थशास्त्र का हमारे व्यक्तिगत, राष्ट्रीय एवं सामाजिक जीवन में बहुत महत्त्व है। अतः अर्थशास्त्र के शिक्षण का ध्येय वैयक्तिक तथा सामाजिक जीवन को सुविकसित करना है।

## QUESTIONS

1. What are the aims of teaching Economics in Higher Secondary School ? (B. T. 1960)
2. Discuss the aims and values of teaching Economics with special reference to Indian conditions.
3. Discuss the aims of teaching Economics at the Higher Secondary School stage. (B. T. 1961)

अध्याय ३

# अर्थशास्त्र की पाठ्य-वस्तु के चयन एवं संगठन के सिद्धान्त

## (Principles of the subject-matter of Economics)

"Curriculum consists of all situations that the school may select and consciously organise for the purpose of developing the personality of its pupils, for making behaviour changes in them." —Payne.

गत अध्याय में हमने अर्थशास्त्र के लक्ष्यों का विवेचन किया है। इन लक्ष्यों की प्राप्ति के लिए एक उपयुक्त पाठ्य-क्रम का होना परम आवश्यक है। इसके अभाव में अर्थशास्त्र के अभीलसित लक्ष्यों की प्राप्ति नहीं की जा सकती। अतः यह देखना आवश्यक है कि अर्थशास्त्र के पाठ्य-क्रम में किन-किन सूचनाओं, क्रियाओं, विषयों (Contents) आदि को रखा जाय जिनके अध्ययन से अर्थशास्त्र के लक्ष्यों को प्राप्त किया जाय। परन्तु स्वतः ही यह प्रश्न उठता है कि इस पाठ्य-सामग्री का चयन किन आधारों पर किया जाना चाहिए। इस सम्बन्ध में नीचे कुछ सिद्धान्तों का प्रतिपादन किया गया है, जिनके आधार पर अर्थशास्त्र की पाठ्य-सामग्री का चयन होना चाहिए—

**(१) क्रिया का सिद्धान्त** (Principle of Activity)—अर्थशास्त्र की पाठ्य-वस्तु का चयन क्रिया के सिद्धान्त के अनुसार करना चाहिए क्योंकि यह एक मनोवैज्ञानिक तथ्य है कि बालक स्वक्रिया द्वारा बहुत कुछ सीखते हैं तथा

स्वक्रिया द्वारा प्राप्त किया हुआ ज्ञान ही स्थायी होता है। दूसरे, शिक्षाशास्त्रियों का मत है कि शिक्षा के पाठ्य-क्रम में चार एच (Four H) अर्थात् स्वास्थ्य (Health), मस्तिष्क (Head), हाथ (Hand) तथा हृदय (Heart) को स्थान मिलना चाहिए। दूसरे शब्दों में हम कह सकते हैं कि बालक को इन चारों 'एच' की शिक्षा प्रदान की जानी चाहिए। तीसरे, प्रयोजनवाद के अनुसार बालक अपने महत्त्वों का निर्माण स्वयं करता है। इसलिये उसे क्रिया-प्रधान पाठ्य-क्रम प्रदान करना चाहिए। चौथे, बालक स्वभावतः सक्रिय होता है, इस कारण यह आवश्यक है कि उसको क्रियाशील बनाये रखने के लिए पाठ्य-क्रम में विभिन्न क्रियाओं को स्थान मिलना चाहिए। अर्थशास्त्र में बहुत से ऐसे विषय हैं जिनको बालक सूक्ष्म-निरीक्षण के अभाव में ग्रहण नहीं कर सकता, उदाहरणार्थ—उद्योगों की दशाएँ एवं कार्य-प्रणाली, बाजारों की दशा, नगर तथा ग्राम्य जीवन के रहन-सहन की दशाएँ आदि। इसलिए अर्थशास्त्र के पाठ्य-क्रम में विभिन्न क्रियाओं का चयन किया जाय जिससे वे इन विषयों का ज्ञान सुगमता एवं पूर्णता के साथ प्राप्त कर सकें। हैडो रिपोर्ट का भी यही मत है कि शिक्षा को क्रिया तथा अनुभव के रूप में देखना चाहिए। इस प्रकार पाठ्य-क्रम अनुभव के पदों के रूप में संयोजित किया जाय।

(२) **रुचि का सिद्धान्त** (Principle of Interest)—इस सिद्धान्त के अनुसार उन्हीं तथ्यों को चुना जाना चाहिए जो बालक की रुचि के अनुकूल हों। दूसरे शब्दों में कहा जा सकता है कि बालक की रुचियों, वृत्तियों, योग्यताओं तथा कुशलताओं के अनुकूल पाठ्य-वस्तु का चयन किया जाना चाहिए। शिक्षा के मनोवैज्ञानिक आधार के अनुकूल पाठ्य-क्रम बाल-केन्द्रित होना चाहिए तथा पाठ्य-वस्तु का चयन बच्चों की प्रकृति के अनुकूल होना चाहिए। इसके विपरीत जो भी पाठ्य-वस्तु निर्धारित की जायगी वह लादी हुई हो जायगी जो कि लाभप्रद होने के स्थान पर हानिकारक सिद्ध होगी।

(३) **लचीलेपन तथा विविधता का सिद्धान्त** (Principle of Flexibility and Variety)—प्रकृति के समान मानव भी प्रगतिशील है। वह अपने अस्तित्व के लिए जन्म से ही अनेकों प्राकृतिक शक्तियों से संघर्ष करता है और उन पर विजय प्राप्त करके अपने चारों तरफ के वातावरण को अपने अनुकूल बनाने का प्रयास करता है। इस संघर्ष में वह जिन अनुभवों तथा तथ्यों की प्राप्ति करता है उनको पाठ्य-क्रम में स्थान मिलना चाहिए। ऐसा करने से शिक्षा का स्वरूप अधिक व्यावहारिक और जीवन से सम्बन्धित होगा।

पाठ्य-क्रम में लचीलापन अवश्य होना चाहिए। यदि पाठ्य-क्रम मे लोच नही होगा तो उसमें मानवीय अनुभवों को स्थान नहीं मिल सकेगा और शिक्षा के मुख्य लक्ष्यो की भी प्राप्ति नही हो सकेगी। शिक्षा का एक प्रधान उद्देश्य यह है कि मानवीय अनुभवों को संग्रहीत करके उन्हें सुरक्षित रखना तथा आने वाली सन्तति को उन्हें प्रदान करना। यदि पाठ्य-क्रम मे नवीन अनुभवो को स्थान प्रदान करने के लिए व्यवस्था होगी तो शिक्षा अपने उपर्युक्त कार्य को पूर्ण करने में सफल हो सकेगी। प्रयोजनवाद के अनुसार बालक अपने महत्त्वों को स्वयं निर्धारित करता है। इस कारण भी पाठ्य-क्रम मे इन अनुभवो या महत्त्वों को स्थान प्रदान करना चाहिए। इस आधार पर हम कह सकते हैं कि पाठ्य-क्रम में वातावरण, आवश्यकता, समय एव परिस्थिति तथा अनुभवो को उचित स्थान मिलना चाहिए। शिक्षा के मनोवैज्ञानिक आधार के अनुसार पाठ्य-क्रम में विविधता भी होनी चाहिए क्योकि समस्त बालक समान नही होते वरन् उनमें वैयक्तिक भेद पाये जाते हैं। इसलिए पाठ्य-वस्तु का चयन करते समय इस सिद्धान्त का सदैव ध्यान रखना चाहिए, जिससे बालक अपनी वैयक्तिक विभिन्नताओं के अनुसार अपने व्यक्तित्व का विकास कर सके।

(४) **चयन का सिद्धान्त** (Principle of Selectivity) इस सिद्धान्त के अनुसार आर्थिक जीवन के उन्ही तथ्यों का चयन किया जाना चाहिए जो प्रत्यक्ष रूप से बालक को आर्थिक एवं सामाजिक जीवन को समझने एव उसमे व्यवस्थित होने में सहायता प्रदान करे। दूसरे शब्दो में कहा जा सकता है कि अर्थशास्त्र के पाठ्य-क्रम के लिए उन विषयों, पदों, सूचनाओ आदि को चुना जाना चाहिए जो आर्थिक जीवन की व्याख्या एवं स्पष्टीकरण करते है।

(५) शिक्षा के प्रारम्भिक स्तर पर पाठ्य-क्रम सूचनात्मक एवं वर्णनात्मक होना चाहिए।

(६) उच्च स्तर पर अर्थशास्त्र का पाठ्य-क्रम आलोचनात्मक तथा प्रतिबिम्बात्मक होना चाहिए।

(७) पाठ्य-क्रम चारित्रिक रूप से व्यावहारिक होना चाहिए जिससे छात्रो को आर्थिक आचरण का शिक्षण प्राप्त हो सके। इसके लिए पाठ्य-क्रम में विभिन्न आर्थिक क्रियाओं को स्थान दिया जाना चाहिए जिससे छात्र उनमे उत्साहपूर्वक भाग ले सकें।

## तथ्यों का संगठन
## (Organization of Facts)

**अर्थशास्त्र की पाठ्य-वस्तु के चयन के पश्चात्** उसको इस भाँति संकलित किया जाय जिससे बालकों को उसे आत्मसात् करने में किसी प्रकार की कठिनाई का अनुभव न हो। स्वतः ही यह प्रश्न उठता है कि इस सामग्री को किन सिद्धान्तों के अनुकूल संगठित किया जाय जिससे बालक उसको सरलता एवं सुगमता से आत्मसात् कर सकें। इसके उत्तर में अधोलिखित सिद्धान्तों को प्रस्तुत किया जा सकता है—

(१) अर्थशास्त्र की पाठ्य-वस्तु को इस प्रकार संगठित किया जाय जिससे उस सामग्री का नागरिकशास्त्र, भूगोल, इतिहास तथा दूसरे सामाजिक विज्ञानों एवं विद्यालय के पाठ्य-क्रम के अन्य विषयों से सम्बन्ध स्थापित किया जा सके। यह सम्बन्ध शीर्षात्मक एवं अनुप्रस्थीय दोनों प्रकार से स्थापित होना चाहिए। विषय के विभिन्न अंगों का परस्पर सम्बन्ध **शीर्षात्मक समन्वय कहलाता है।** इस प्रकार का समन्वय दूसरे प्रकार से भी स्थापित किया जा सकता है, जैसा एक कक्षा में प्राप्त की हुई सामग्री दूसरी कक्षा की सामग्री को प्राप्त करने में सहायता प्रदान करती है। जब एक पाठ्य-वस्तु दूसरे विषयों की पाठ्य-वस्तुओं में पारस्परिक सम्बन्ध स्थापित करती है तब वह **अनुप्रस्थीय सम्बन्ध** कहलाता है। अर्थशास्त्र की पाठ्य-वस्तु का इस प्रकार संकलन करना चाहिए जिससे बालक दोनों प्रकार के समन्वय सम्बन्धो का लाभ प्राप्त कर सकें तथा पाठ्य-वस्तु को सरलता एवं सुगमता से ग्रहण कर सकें। इस प्रकार पाठ्य-वस्तु को संगठित करने के सिद्धान्तों को **एकीकरण का सिद्धान्त** कहते है।

(२) अर्थशास्त्र की पाठ्य-वस्तु के संगठन का एक अन्य आधार परिस्थिति है। इसका तात्पर्य यह है कि उसको संगठन में उन ठोस परिस्थितियों को आधार बनाया जाय जिनके सम्पर्क में बालक रहता है। इस प्रकार उसका अध्ययन जीवन की परिस्थितियों से प्रारम्भ किया जाना चाहिए। उसका अध्ययन राष्ट्र तथा अन्तर्राष्ट्रों से प्रारम्भ न किया जाय अपितु स्थानीय परिस्थितियों को आधार बना कर प्रारम्भ करना चाहिए।

(३) अर्थशास्त्र की पाठ्य-वस्तु का संकलन इस प्रकार किया जाय जिससे बालक शिक्षा के स्थानान्तरण के लाभों से वंचित न रह सकें।

(४) अर्थशास्त्र के पाठ्य-क्रम में पुनरावृत्ति के लिए भी स्थान होना चाहिए। यह इसलिए आवश्यक है कि इसकी पाठ्य-सामग्री में बहुत सी ऐसी

बातें हैं जिनका अध्यापन प्रारम्भ में अनिवार्य है परन्तु उस समय उनके विषय में विशिष्ट ज्ञान नहीं दिया जा सकता क्योंकि वह बालकों के मानसिक स्तर से बहुत उच्च होगा।

## हाई स्कूल कक्षाओं के अर्थशास्त्र के पाठ्य-क्रम का आलोचनात्मक अध्ययन (An Critical Estimate of Economics Syllabus of High School Classes)

(१) आधुनिक शिक्षा-पद्धति मे हाई स्कूल कक्षाओ के अर्थशास्त्र के पाठ्य-क्रम में सैद्धान्तिक तत्त्व अधिक निहित है। इसमें सैद्धान्तिकता पर बल दिया गया है। वस्तुतः इसमें सैद्धान्तिकता की अपेक्षा व्यावहारिकता को अधिक स्थान दिया जाना चाहिए। इसके लिए पाठ्य-क्रम-में प्रयोगात्मक कार्य को स्थान दिया जाय। उदाहरणार्थ—उद्योगों, बाजारों आदि का निरीक्षण कराकर छात्रों को सिद्धान्तों को समझाया जाय, छात्रो से श्रमिक, किसान तथा छात्र-बजट तैयार करवाये जायँ। छात्रों से विभिन्न रेखाचित्र, मानचित्र बनवाये जाने चाहिएँ।

(२) यह पाठ्य-क्रम क्रिया-प्रधान नही है। यदि क्रियाओं को स्थान भी दिया गया है तो केवल सैद्धान्तिक रूप में। उदाहरणार्थ-घरेलू उद्योग धन्धे, सहकारी बैंक, सहकारी दुकान आदि क्रियाओं का संयोजन किया जाय।

(३) इसमें रुचि तथा विविधता के सिद्धान्त को नहीं अपनाया गया है।

(४) अर्थशास्त्र के पाठ्य-क्रम में आत्मिक तत्त्व की प्रधानता है।

(५) अर्थशास्त्र का वर्तमान पाठ्य-क्रम बहुत संकुचित है।

(६) इसके द्वारा शैक्षिक जीवन के 'उपयोगिता' (Precise) नामक विभाग की पूर्त्ति नहीं होती। इसके द्वारा किशोर अवस्था के छात्रों की विभिन्न आवश्यकताओं तथा योग्यताओ की संतुष्टि नहीं होती।

(७) अर्थशास्त्र का पाठ्य-क्रम परीक्षा रूपी भयंकर सर्प से ग्रसित है।

## विभिन्न स्तरों पर अर्थशास्त्र के पाठ्य-क्रम की रूपरेखा (Outline Syllabus of Economics at different Stages)

**जूनियर स्तर :**— इस स्तर पर अर्थशास्त्र एक पृथक विषय नहीं होना चाहिए वरन् इसके आधारभूत सिद्धान्त सामाजिक अध्ययन नामक विषय के अन्तर्गत पढ़ाये जाने चाहिएँ। इन आधारभूत सिद्धान्तों के ज्ञान के अभाव में

बालक उच्च स्तर पर इनको नहीं समझ पायेगा। इस स्तर में कक्षा ६-७ तथा ८ आती हैं। इनके लिए निम्नलिखित विषय-सूची निर्धारित की जा सकती है—

(१) स्थानीय आर्थिक समस्याओं का व्यावहारिक ज्ञान।

(२) प्रदेशीय एवं राष्ट्रीय आर्थिक समस्याओं का संक्षिप्त परिचय।

(३) कृषि—कृषि में मशीनों के प्रयोग, खाद तथा विभिन्न फसलों का ज्ञान।

(४) खरेलू-उद्योग धन्धे—उनका सैद्धान्तिक एवं व्यावहारिक ज्ञान।

(५) श्रमिकों की समस्याओं का प्रारम्भिक ज्ञान।

(६) सहकारी क्रियायें—सहकारी दुकान, बैंक आदि का संचालन।

(७) डाक-व्यवस्था का ज्ञान

(८) मनोरंजन के साधनों का महत्त्व।

(९) प्रायोगिक कार्य—वन महोत्सव, आदि।

(१०) आवागमन के साधनों की जानकारी।

**हाई स्कूल स्तर**—इस स्तर पर पाठ्य-क्रम को दो प्रश्न पत्रों में बाँटा जाना चाहिए, उनकी विषय-सूची इस प्रकार है—

**प्रथम प्रश्नपत्र :**

(१) अर्थशास्त्र—अर्थ, विभाग, विषय-विस्तार तथा महत्त्व।

(२) अर्थशास्त्र के महत्त्वपूर्ण पदों (Terms) की परिभाषाएँ—उपयोगिता, अर्घ (value), मूल्य (Price), धन, आय, आदि आदि।

(३) उत्पत्ति के साधन—भूमि, श्रम, पूँजी, संगठन तथा साहस। इन साधनों का कृषि एवं उद्योग में महत्त्व।

(४) अदल-बदल (Barter)—क्रय-विक्रय, बाजार।

(५) आवश्यकताएँ—अर्थ, वर्गीकरण।

(६) पारिवारिक बजट।

(७) घरेलू उद्योग-धन्धे।

(८) श्रम तथा श्रमिकों की समस्याएँ।

(९) कृषि की आय का वितरण।

(१०) बटाई प्रथा तथा उसके दोष।

(११) ग्रामीण समस्याएँ—भूमि, भोजन, आवागमन, स्वास्थ्य, सफाई, शिक्षा, मनोरंजन, पशुपालन, ऋण, आदि की समस्याएं।

(१२) ग्राम तथा जिले का शासन—ग्राम पंचायत का महत्त्व।

(१३) सहकारी आन्दोलन।

(१४) व्यावहारिक कार्य ग्राम-पंचायतो का निरीक्षण, बाजारों तथा श्रमिको की बस्तियो की दशाओं का निरीक्षण। घरेलू उद्योग-धन्धों तथा सहकारी क्रियाओ का स्कूल मे सचालन, भारतीय छात्र बजट का निर्माण।

**द्वितीय प्रश्न-पत्र :**

(१) आर्थिक भूगोल—अर्थ, महत्त्व तथा क्षेत्र।

(२) मनुष्य तथा उसका वातावरण—भौतिक वातावरण तथा उसका आर्थिक जीवन प्रर प्रभाव।

(३) भारत की प्राकृतिक दशा—मिट्टी तथा उसकी बनावट, वर्गीकरण आदि। जलवायु, सिंचाई के साधन एवं उनकी आवश्यकता। वर्षा तथा उसका वितरण।

(४) भारत की प्रमुख फसले—खाद्य फसले, पेय फसले तथा अखाद्य फसलें।

(५) भारत की पशु-सम्पत्ति

(६) भारत के खनिज पदार्थ।

(७) वन-सम्पत्ति।

(८) शक्ति के साधन—मानव, पशु, हवा, लकड़ी, कोयला, तेल, पानी।

(९) उद्योग-धन्धों का स्थानीयकरण।

(१०) जनसंख्या—महत्त्व तथा वितरण।

(११) यातायात एवं संदेशवाहन के साधन—सड़के, रेले, नदियाँ, समुद्री यातायात, वायुयातायात, डाक, तार, टेलीफोन तथा बेतार के तार (Wireless)।

(१२) भारतीय व्यापार—अन्तर्देशीय एवं विदेशी।

(१३) भारतीय प्रसिद्ध नगर, बन्दरगाह एव हवाई अड्डे—इनका विकास एवं महत्त्व।

(१४) व्यावहारिक कार्य—मानचित्रो तथा चार्टो का निर्माण, विभिन्न उद्योगो का निरीक्षण, यातायात एवं संदेशवाहन के साधनों का छात्रों द्वारा उपयोग तथा उनकी कार्य-प्रणाली का उनके सम्मुख प्रदर्शन।

**इण्टरमीडियेट**—इस स्तर पर भी पाठ्य-वस्तु को दो भागो में विभाजित किया जाना चाहिए। यहाँ भी सैद्धान्तिक ज्ञान के साथ-साथ व्यावहारिक कार्य में प्रशिक्षण दिया जाना चाहिए।

**प्रथम भाग :**

**(१) विषय प्रवेश**—विषय-वस्तु, अर्थशास्त्र एक कला या विज्ञान, विषय-विस्तार, अर्थशास्त्र का अन्य विषयों से सम्बन्ध, आर्थिक जीवन का विकास, सामाजिक तत्त्व एवं भारतीय अर्थ-व्यवस्था।

**(२) उपभोग**—अर्थ एवं उसके भेद, उपभोग का महत्त्व, आवश्यकताएँ—अर्थ, वर्गीकरण। उपयोगिता—सीमान्त तथा कुल उपयोगिता, उपयोगिता ह्रास नियम, सम-सीमान्त उपयोगिता नियम, उपभोक्ता की बचत, माँग तथा पूर्त्ति का नियम, माँग की लोच, पारिवारिक बजट, आय का वितरण तथा व्यय का सामाजिक पक्ष।

**(३) उत्पत्ति**—उत्पत्ति तथा आवश्यकता में सम्बन्ध, उत्पत्ति के नियम, उत्पत्ति के साधन—

**भूमि**—भारत के प्राकृतिक उपहार, कृषि, उद्योग तथा वाणिज्य की दृष्टि से भूमि का उपयोग, उत्पत्ति के साधन के रूप में भूमि का महत्त्व एवं उसका उपयोग।

**श्रम**—भारत में जनसंख्या का घनत्व तथा वितरण, श्रम का अर्थ, भेद, एवं महत्त्व। श्रम की कार्य-क्षमता।

**पूंजी**—(चल एवं अचल) इमारत एवं मशीन, भारत में पूँजी, भारत में यातायात एवं आवागमन के साधन, सिंचाई व्यवस्था तथा इनका आर्थिक जीवन पर प्रभाव।

**प्रबन्ध एवं साहस**—अर्थ एवं महत्त्व, भारत में प्रबन्ध की वर्तमान स्थिति, उत्पत्ति के साधनों की कुशलता, कार्य-क्षमता की वृद्धि के उपाय, श्रम-विभाजन तथा मशीनों का विशेषीकरण, बड़े पैमाने पर उत्पत्ति एवं उसकी सीमाएँ, भारतीय कृषि, उत्तरप्रदेश के ग्रामीण उद्योग, शहरी तथा विस्तृत खेती एवं औद्योगिक संगठन का विकास।

**कर**—करों का विकास, प्रत्यक्ष एवं परोक्ष कर तथा उनमें भेद, केन्द्रीय एवं प्रान्तीय कर-प्रणाली, उत्तरप्रदेश की स्थानीय संस्थाओं की आय-व्यय की मदें।

**द्वितीय भाग :**

इसमें अर्थशास्त्र के दो प्रमुख विभाग अर्थात् विनिमय एवं वितरण रखे जाने चाहिएँ।

(१) **विनिमय**—आवश्यकता एवं विकास, बाजार, **अर्घ** निर्धारण करने का सिद्धान्त, द्रव्य का अर्थ, कार्य एवं भेद, मुद्रा, ग्रेशम नियम, साख, साखपत्र, भारतीय बैंक-व्यवस्था, सहकारिता ।

(२) **वितरण**—अर्थ एवं उसकी समस्या, लगान तथा उसके निर्धारण के सिद्धान्त, वेतन तथा मजदूरी, सूद एवं लाभ ।

व्यावहारिक कार्य--उपभोग के लिए चार बजट—कारीगर, श्रमिक, किसान, तथा छात्र के उपभोग बजट ।

(२) माँग, पूर्त्ति, आय-व्यय, बचत सम्बन्धी नियमों के रेखाचित्र ।

(३) स्कूल एवं स्थानीय उद्योग-धन्धों के व्यय का विवरण ।

(४) विभिन्न उद्योगों का निरीक्षण एवं उनके विकास के लिए सुझाव ।

## QUESTIONS

1. What principles would guide you in selecting and organizing the subject-matter of Economics ? Discuss fully.
2. Give a critical estimate of syllabus in Economics of the High School class. —(B. T. 1957, 1959).

अध्याय ४

# अर्थशास्त्र की शिक्षण-पद्धतियाँ

## (Methods of Teaching Economics)

Flexibility and initiative in dealing with problems are characteristics of any conception to which method is a way of managing material to develope a conclusion." —Dewey.
(Democracy and Education, Page 200.)

आधुनिक युग में शिक्षकों तथा शिक्षाशास्त्रियों के समक्ष एक गम्भीर प्रश्न यह है कि क्या शिक्षक को शिक्षण-पद्धतियों पर अधिकार करना चाहिए अथवा विषय-वस्तु पर ? इस प्रश्न के उत्तर में दो विरोधी मत है तथा शिक्षक और शिक्षा-शास्त्री दो वर्गों में विभाजित हो गये हैं। एक वर्ग के समर्थकों का कहना है कि शिक्षक को केवल विषय-वस्तु पर अधिकार करना चाहिए। इसके विपरीत दूसरा वर्ग इस बात का पक्षपाती है कि शिक्षक का शिक्षण-पद्धतियों पर अधिकार होना चाहिए। यदि इस विवाद के मूल्यों पर ध्यानपूर्वक देखा जाय तो स्पष्ट होगा कि शिक्षक को अपनी विषय-वस्तु के अधिकार के साथ-साथ शिक्षण-पद्धति के समस्त पक्षों का भी ज्ञान होना आवश्यक है, तभी वह उत्तम शिक्षण प्रदान कर सकता है। प्रो० बाइनिंग तथा बाइनिंग का कथन है कि विधिविधान को शिक्षण प्रक्रिया का निष्क्रिय पक्ष न मान कर शिक्षा का सक्रिय

पक्ष मानना चाहिए।[1] इस प्रकार कहा जा सकता है कि शिक्षण-विधि का शिक्षा में बहुत महत्त्वपूर्ण स्थान है। पद्धति वह मार्ग है जो ज्ञान को प्रदान करने के लिए अपनाया जाता है। इस प्रकार शिक्षण में पद्धति का वही महत्त्व है जो किसी निर्दिष्ट स्थान पर पहुँचने के लिए सत्य मार्ग का है। जिस प्रकार सत्य मार्ग के अभाव में एक व्यक्ति निर्दिष्ट स्थान पर नहीं पहुँच सकता उसी भाँति पद्धति के अभाव में ज्ञान प्रदान नहीं किया जा सकता है। पद्धति के अभाव मे शिक्षा के उद्देश्यों की प्राप्ति नही हो सकती है। इस प्रकार पद्धति का तात्पर्य एवं महत्त्व देखने के पश्चात् यह प्रश्न स्वतः ही उठता है कि उत्तम पद्धतियों के उद्देश्य क्या होने चाहिएँ ? माध्यमिक शिक्षा आयोग ने अधोलिखित उद्देश्य निर्धारित किये है—

(१) माध्यमिक शिक्षा आयोग के मतानुसार समस्त शिक्षण-पद्धतियों का उद्देश्य 'कार्य के लिए प्रेम विकसित करना' होना चाहिए। इसके साथ ही कार्य करने की इच्छा उत्पन्न करना भी उनका उद्देश्य होना चाहिए। यदि शिक्षण-पद्धतियाँ इन उद्देश्यों को विकसित करने में असफल रहती है तो उनके द्वारा प्रदान की गई शिक्षा न तो व्यक्ति को शिक्षित ही कर सकती है और न उसके चरित्र का निर्माण ही।

(२) शिक्षण-पद्धतियों का दूसरा मुख्य उद्देश्य सम्यक् चिन्तन करने की क्षमता उत्पन्न करना होना चाहिए। इसके द्वारा व्यक्ति शिक्षित तथा अशिक्षित के भेद को समझ सकता है और ग्राह्य एवं त्याज्य में अन्तर कर सकता है। मानसिक विकास के लिए भी इस क्षमता का होना परम आवश्यक है।

(३) शिक्षण-पद्धतियों को छात्रों की रुचियों के क्षेत्र को विशद एवं व्यापक बनाना चाहिए।

## अर्थशास्त्र-शिक्षण-पद्धतियों के मूलभूत सिद्धान्त

**(१) क्रिया या करके सीखने का सिद्धान्त**—(Principle of Activity or Learning by Doing)—प्रसिद्ध शिक्षाशास्त्री रूसो ने 'करके सीखने' के सिद्धान्त पर विशेष बल दिया है। उसका मत है कि बालक क्रिया द्वारा अधिक सीखता है और इस प्रकार सीखा हुआ ज्ञान चिरस्थायी होता है।

---

1. Methodology should be conceived as a dynamic function of Education and not as static aspect of the process of Teaching.—(Binning and Binning—Teaching the Social studies in Secondary Schools, page 46.)

यह एक मनोवैज्ञानिक सत्य है कि यदि किसी विषय का ज्ञान क्रियाओं द्वारा प्रदान किया जाय तो वह चिरस्थायी होगा, क्योंकि इसमें मस्तिष्क तथा हाथ का घनिष्ठ सम्बन्ध होता है। मनोवैज्ञानिकों का कथन है कि बच्चा स्वभाव से ही क्रियाशील होता है, वह कुछ न कुछ करता रहना चाहता है। उसकी रुचि अमूर्त विचारों व वस्तुओं के प्रति कम होती है। वह तो स्वभावतः ही क्रियाओं की ओर झुकता है। इसलिए शिक्षण में उन विधियों को ही अपनाना चाहिए जिनसे छात्र शारीरिक एवं मानसिक दोनों ही दृष्टियों से सक्रिय रह सकें। अर्थशास्त्र का सैद्धान्तिक विवेचन रुक्ष एवं अमूर्त होने के कारण बालक की ग्राह्य-शक्ति के परे होता है। इसलिए शिक्षकों को अर्थशास्त्र के शिक्षण के लिए उन्हीं विधियों को अपनाना चाहिए जिनके द्वारा बालक करके सीख सके। दूसरे शब्दों में यह कहा जा सकता है कि अध्यापक को उन्हीं विधियों को अपनाना चाहिए जिनके द्वारा हाथ तथा मस्तिष्क दोनों का सम्बन्ध स्थापित हो सके।

(२) **प्रेरणा का सिद्धान्त** (Principle of Motivation)—प्रेरणा सीखने की प्रक्रिया में बहुत ही आवश्यक उपादान है। प्रेरणा के द्वारा बालक में रुचि उत्पन्न की जाती है। जब बच्चे की रुचि विषय में उत्पन्न हो जाती है तब उसका उसमें ध्यान लगा रहता है। इस प्रकार वह अपने विषय में एकाग्रचित्त होकर कार्य करने लगता है। फलस्वरूप उसमें ज्ञान अर्जन करने की इच्छा सतत् रूप से बलवती रहती है। इसलिये अर्थशास्त्र की शिक्षण-पद्धतियों में प्रेरणा का तत्त्व होना अनिवार्य है जिससे वे स्वतः ही छात्रों को कार्य करने के लिए प्रेरित करती रहें।

(३) **जीवन से सम्बन्धित करने का सिद्धान्त** (Principle of Linking with Life) -शिक्षण-पद्धतियों के द्वारा जीवन की क्रियाओं को सरल एवं सुगम बनाया जाता है। अतः उनका जीवन से सम्बन्धित होना आवश्यक है। प्रो० ड्यूवी का मत है कि शिक्षा, जीवन है। इसलिए जीवन की समस्त क्रियाओं से शिक्षण-पद्धतियाँ सम्बन्धित होनी चाहिएँ। यदि जीवन की क्रियाओं से शिक्षण-पद्धतियों को सम्बन्धित नही किया जायगा तो बालक विषय-वस्तु को ग्रहण करने में सर्वथा असमर्थ रहेगा क्योंकि बालक जो कुछ भी नवीन ज्ञान अर्जित करता है वह उसके पूर्वानुभवों के आधार पर ही ग्रहण करता है। जब तक नवीन ज्ञान का उसके पूर्वानुभवों से सम्बन्ध नहीं जोड़ा जायेगा तब तक वह उसको ग्रहण नहीं कर सकेगा। बालक अपने वातावरण से भी

बहुत कुछ सीखता है, जब तक इस वातावरण का सम्बन्ध नवीन ज्ञान से सम्बन्धित नहीं किया जायेगा तब तक वह उसको नही सीख सकेगा। अर्थशास्त्र एक ऐसा विषय है जिसके द्वारा बालक के आर्थिक जीवन में आवश्यक परिवर्तन लाये जा सकते हैं। परन्तु ये परिवर्तन तभी लाये जा सकते है जब अर्थशास्त्र की शिक्षण-पद्धतियों का बालक के जीवन से घनिष्ठ सम्बन्ध स्थापित किया जाय, क्योंकि अर्थशास्त्र बालक के जीवन में व्याप्त है। उसको इसके नियमों एवं सिद्धान्तों के उपयोग की आवश्यकता व्यावहारिक जीवन में प्रत्येक पग पर होती है। अतः अर्थशास्त्र की शिक्षण-विधियों के चयन में इस सिद्धान्त को मुख्य स्थान प्रदान करना चाहिए।

(४) **सह-सम्बन्ध का सिद्धान्त** (Principle of correlation)— आधुनिक युग में मानसिक शक्ति-सिद्धान्त (Faculty theory) की धारणा भ्रमात्मक सिद्ध हो चुकी है। मनोवैज्ञानिकों ने यह प्रमाणित कर दिया है कि बालक किसी विषय का ज्ञान स्वतन्त्र रूप से ग्रहण नहीं करता बल्कि सम्बद्ध रूप में प्राप्त करता है। इसलिए यह आवश्यक है कि अर्थशास्त्र के शिक्षण में उन्हीं शिक्षण-पद्धतियों को ग्रहण किया जाय जो आपस में सुसम्बद्ध हों; क्योंकि कोई भी पद्धति अपने आप में पूर्ण नहीं होती। दूसरे इस सिद्धान्त का उपयोग अर्थशास्त्र के शिक्षण मे विभिन्न विषयों के साथ उसका सम्बन्ध स्थापित करके भी किया जाना चाहिए, क्योकि शिक्षा का मुख्य लक्ष्य बालक के व्यक्तित्व का विकास करना है। यह लक्ष्य तभी प्राप्त किया जा सकता है जब अर्थशास्त्र का ज्ञान पृथक रूप से प्रदान न करके अन्य विषयों के साथ सम्बन्ध स्थापित करके प्रदान किया जाय।

(५) **व्यक्तिकरण का सिद्धान्त** (Principle of Individualization) – कुछ शिक्षा-शास्त्रियो का मत है कि शिक्षा का उद्देश्य बालक की वैयक्तिकता (Individuality) का विकास करना है। इसके लिए विभिन्न वैयक्तिक पद्धतियों के द्वारा ज्ञान प्रदान किया जाना चाहिए, क्योंकि प्रत्येक बालक की रुचियाँ, प्रवृत्तियाँ, अभिरुचियाँ एवं क्षमताएँ भिन्न-भिन्न होती हैं। सामूहिक शिक्षण में बच्चे की वैयक्तिकता को पूर्ण विकास प्राप्त नही हो पाता। इस कारण बालक के शैक्षिक विकास में बाधाएँ उत्पन्न हो जाती हैं। फलस्वरूप उनका विकास उचित प्रकार मे नहीं हो पाता। अतः अर्थशास्त्र के शिक्षण में उन्हीं पद्धतियों को ग्रहण करना चाहिए जिनमे छात्रों में वैयक्तिता का विकास हो सके। यद्यपि यह सत्य है कि इन पद्धतियों के अपनाने में

प्रदान किया जाना चाहिए। जब समस्त बालक उस पाठ का अध्ययन समाप्त कर लेते हैं तब शिक्षक छात्रों की बोध-ग्राह्यता की बोधात्मक प्रश्नों द्वारा परीक्षा करता है। इस परीक्षा में क्षात्रों को अपनी पाठ्य-पुस्तक की सहायता नहीं लेने दी जाती है। इस विधि के अन्तर्गत सस्वर-पठन की प्रणाली को भी अपनाया जा सकता है। इस प्रक्रिया में अध्यापक कठिन शब्दों एवं स्थलों की व्याख्या करता चलता है तथा दृष्टान्तों एवं उदाहरणों की सहायता से उनको स्पष्ट कर देता है। इस प्रणाली में भी पाठ की समाप्ति के पश्चात् बोधात्मक प्रश्नों द्वारा परीक्षा ली जाती है और इनके उत्तरों की सहायता से वह एक संक्षिप्त श्यामपट पर सारांश तैयार कर देता है। शिक्षक इस सारांश को अपनी पुस्तिकाओं में लिखने के लिये छात्रों को आदेश देता है। इसके पश्चात् शिक्षक उन रूपरेखाओं को विस्तृत करने का भी आदेश दे सकता है जिससे छात्रों की अभिव्यंजना शक्ति विकसित हो जाय तथा वे विस्मृति के दोष से दूर रह सकें।

इस विधि का मूलभूत-सिद्धान्त शिक्षण प्रक्रिया की मितव्ययिता है। इसमें छात्र कम से कम समय में तथा बिना किसी कठिन प्रयास के अधिकतम ज्ञान की प्राप्ति कर लेता है। दूसरे इस विधि के द्वारा छात्रों को ज्ञान-राशि व्यवस्थित रूप से प्राप्त होती है, क्योंकि पाठ्य-पुस्तकों में ज्ञान-राशि किसी न किसी व्यवस्था पर आधारित होती है।

**प्रयोग** (Application)—सामान्यतः इस विधि का प्रयोग दो प्रणालियों के आधार पर किया जाता है। प्रथम एकाकी पाठ्य-पुस्तक प्रयोग तथा द्वितीय बहु पाठ्य-पुस्तक प्रयोग। एकाकी पाठ्य-पुस्तक प्रणाली में केवल एक ही पाठ्य-पुस्तक को आधार बनाया जाता है। इसके प्रयोग द्वारा अध्यापक छात्रों का ध्यान विषय-वस्तु पर आकृष्ट करने की आज्ञा प्रदान करता है। इस प्रणाली के विपक्ष में यह कहा जाता है कि इसके द्वारा छात्रों में मुद्रित पृष्ठों के प्रति दासता की भावना विकसित हो जाती है। वे उनमें लिखी विषय-वस्तु को ही सत्य एवं अकाट्य मानने लगते है। इस प्रकार उनके अध्ययन का दृष्टिकोण संकीर्ण बन जाता है। बहु-पाठ्य-पुस्तक प्रणाली में इस प्रकार के दोषों को दूर करने का प्रयत्न किया गया है। दूसरी प्रणाली में एक पुस्तक के स्थान पर बहु-पाठ्य-पुस्तकों का प्रयोग किया जाता है। इसके प्रयोग से सबसे बड़ा लाभ यह होता है कि छात्र एक पाठ्य-पुस्तक को ही अन्तिम निर्णायक शक्ति नहीं मानते वरन् अपने विषय का अध्ययन विभिन्न पुस्तकों द्वारा करके एक अन्तिम निष्कर्ष निकालना सीख जाते है।

**गुण** (Merits)—(१) पाठ्य-पुस्तक पद्धति छात्रों में अध्ययन की निपुणता बढ़ाती है तथा उनमें पढ़ने का स्वभाव उत्पन्न करती है क्योंकि पाठ्य-पुस्तकें छात्रों के दृष्टिकोण से ही लिखी जाती हैं।

(२) इसमें छात्र स्वयं सक्रिय रहकर ज्ञान अर्जित करते है।

(३) इसमे छात्रों में स्वाध्यायन की आदत का निर्माण होता है।

(४) इसके द्वारा छात्रों को अर्थशास्त्र की विषय-वस्तु का ज्ञान व्यवस्थित रूप से प्राप्त होता है।

(५) पाठ्य-पुस्तक पद्धति छात्रो के कार्य मे व्यवस्था उत्पन्न करती है।

(६) इसके द्वारा छात्रों तथा शिक्षकों के समय की बचत होती है।

(७) इसके द्वारा छात्रों की बोध-ग्राह्यता की साथ ही साथ परीक्षा होती चलती है।

(८) इस पद्धति के द्वारा छात्रों को इस बात का ज्ञान प्राप्त हो जाता है कि किसी प्रश्न के लिए कितनी विषय-सामग्री लिखनी है तथा उसको किस प्रकार प्रस्तुत करना चाहिए।

(९) इसके द्वारा छात्रो क स्मरण शक्ति का विकास होता है।

**दोष** (Demerits)—(१) यह पद्धति छात्रों में वैज्ञानिक दृष्टिकोण उत्पन्न नहीं करती है, तथा उनके मानसिक अन्तरिक्ष को व्यापक बनाने में असमर्थ रहती है।

(२) यह पद्धति छात्रों के पूर्वज्ञान को जाग्रत करने में असमर्थ रहती है।

(३) यह पद्धति शिक्षण के सूत्रों जैसे—'सरल से कठिन की ओर' 'मनोवैज्ञानिक से तर्क सम्मत क्रम की ओर,' 'ज्ञात से अज्ञात की ओर' 'विशिष्ट से सामान्य की ओर' 'विश्लेषण से संश्लेषण की ओर' आदि की उपेक्षा करती है।

(४) इस पद्धति द्वारा छात्रों में रटने की प्रवृत्ति उत्पन्न हो जाती है।

(५) इसके द्वारा छात्र पाठ्य-पुस्तकों के तथ्यों व भावों का अन्धानुकरण करने लगते है।

(६) इसके प्रयोग से कक्षा का वातावरण अरुचिकर तथा नीरस रहता है।

**सीमाएँ** (Limitations)—(१) इस विधि के प्रयोग में अच्छी पाठ्य-पुस्तकों का अभाव खटकता है।

(२) बहुधा पुस्तको का व्यवस्थापन, भाषा एवं शैली छात्रों के मानसिक स्तर के अनुसार नही होती। इस कारण बालक विषय-वस्तु को सुगमतापूर्वक ग्रहण नहीं कर पाते।

(३) इसके उपयोग से व्यावहारिकता के स्थान पर सैद्धन्तिकता का वातावरण उत्पन्न हो जाता है। अर्थशास्त्र में बहुत से व्यावहारिक उप-विषय हैं, जिनका शिक्षण व्यावहारिक रूप से होना चाहिए। परन्तु इस पद्धति के प्रयोग से उनकी व्यावहारिकता समाप्त हो जाती है।

(४) इसके उपयोग से छात्र शिक्षकों की आवश्यकता को भूल जाते हैं

**सुधार के लिये सुझाव** (Suggestions for its Improvement) - (१) इस पद्धति का प्रयोग कार्य-निर्धारण के लिये किया जाना चाहिए। परन्तु कार्य-निर्धारण इस प्रकार किया जाय जिसमें पाठ्य-पुस्तक के पाठ की समस्त बातों का समावेश भी हो जाय तथा वह उससे पृथक भी हो। इस प्रकार के कार्य-निर्धारण का मुख्य लाभ यह होगा कि छात्रों को अपने कार्य के पूर्ण करने के लिये विभिन्न सूत्रों की सहायता लेनी पड़ेगी, जिससे उनमें स्वक्रिया द्वारा ज्ञान अर्जित करने की आदत का निर्माण होगा। इस प्रकार हम कह सकते है कि इस विधि का उपयोग परम्परागत ढंग से न करके उपर्युक्त ढंग से करना चाहिए। जिससे हम वांछनीय लाभ प्राप्त कर सकें। अर्थशास्त्र के शिक्षण में इस रूप को ही अपनाना श्रेयष्कर होगा।

(२) पाठ्य-पुस्तको का चयन छात्रों की रुचि एवं मानसिक स्तर के अनुरूप करना चाहिए।

(३) पाठ्य-पुस्तकों में यथास्थान चित्र, रेखाचित्र, ग्राफ तथा मानचित्रों का उपयोग करना चाहिए—जिससे अमूर्तभाव मूर्तरूप धारण कर सकें।

(४) छात्रों की रटने की प्रवृति के स्थान पर समीक्षात्मक एवं तर्कात्मक प्रवृतियो पर बल दिया जाना चाहिए।

(५) छात्रों के मानसिक स्तर के अनुकूल सूक्ष्म एवं गहन विचारों की व्याख्या की जाय तथा उनके स्पष्टीकरण के लिए दृष्टान्तो एवं उदाहरणों का अवलम्बन लिया जाय।

(६) बोधात्मक प्रश्न सुस्पष्ट एवं नपे-तुले होने चाहिएँ।

(७) इस पद्धति के प्रयोग में व्यावहारिकता लाई जानी चाहिए।

(२) **व्याख्यान-पद्धति** - शिक्षण में इस पद्धति का प्रयोग प्राचीन काल से होता चला आ रहा है। आजकल भी भारतीय शिक्षालयों में इस पद्धति ने महत्त्वपूर्ण स्थान ग्रहण कर रखा है। व्याख्यान का तात्पर्य पाठ को भाषण के रूप में पढ़ाने से है। इसमें शिक्षक अपने मुख से बात कहकर पढ़ाता है।

इसको कथन-विधि के नाम से भी पुकारते हैं। व्याख्यान-विधि अर्थशास्त्र के शिक्षण में अपना अद्वितीय स्थान रखती है। इस विधि द्वारा शिक्षक गहन एवं सूक्ष्म विषय-वस्तु को सरल तथा सुबोध बनाता है। शिक्षक इसके प्रयोग में व्याख्यान के साथ-साथ स्वयं प्रश्नों द्वारा पाठ का विकास करता चलता है तथा छात्रों को भी प्रश्न पूछने के लिए प्रोत्साहित करके विषय-वस्तु की विवेचना करता है। शिक्षा की प्रगतिशील विचारधारा के समर्थकों का मत है कि यह पद्धति शिक्षण के लिए अनुपयुक्त है। उनका कहना है कि इसमें बालक निष्क्रिय श्रोता मात्र बना रहता है। परन्तु यह तर्क उपयुक्त सा प्रतीत नहीं होता क्योंकि यह पद्धति शिक्षा मनोविज्ञान के सिद्धान्तों के विपरीत नहीं है। इसमें बालकों की मानसिक क्रिया होती है। यदि शिक्षक पूर्ण तैयारी तथा रोचक ढंग से अपने व्याख्यान को अपने छात्रों के समक्ष प्रस्तुत करेगा और उनको सक्रिय रखने के लिए उनसे प्रश्न पूछता रहेगा एवं छात्रों को प्रश्न पूछने के लिए प्रोत्साहित करता रहेगा तो यह आरोप दूर किया जा सकता है। इस आरोप का दोषी शिक्षक है न कि पद्धति। इस पद्धति में बच्चे की कर्णेन्द्रिय जागरूक रहती है। इसके द्वारा हाथ तथा मस्तिष्क का भी सम्बन्ध स्थापित होता है। छात्र शिक्षक के व्याख्यान की मुख्य-मुख्य बातों को साथ-साथ अंकित करते चलते है। इस प्रकार इसमें बच्चे की कई इन्द्रियाँ सक्रिय रहती है। दूसरे व्याख्यान वक्ता के सम्पूर्ण व्यक्तित्व के साथ बालकों के मस्तिष्क में स्थान ग्रहण करता है।

**प्रयोग**—अब प्रश्न यह है कि अर्थशास्त्र शिक्षण में यह पद्धति कब प्रयुक्त की जाय ? इस विषय में हमारा यह निश्चित मत है कि इसका प्रयोग अधोलिखित अवसरों पर करना चाहिए—

(१) इसका प्रयोग किसी बड़ी इकाई या लम्बे प्रकरण का पुनर्विलोकन देने के लिए करना चाहिए।

(२) इसका उपयोग अर्थशास्त्र के लगभग प्रत्येक प्रकरण या विषय में छात्रों के अध्ययन को परिपूरित करने के लिए किया जाना चाहिए।

(३) व्याख्यान-पद्धति का प्रयोग बालकों के समय की बचत के लिए भी किया जाना चाहिए।

(४) इसके द्वारा विषय की व्याख्या एवं स्पष्टीकरण भी किया जाना चाहिए। उदाहरणार्थ—आर्थिक पदों की व्याख्या—धन, आवश्यकता, अर्हा (Value) आदि।

(५) किसी नवीन पाठ की प्रस्तावना से परिचित कराने के लिए भी व्याख्यान-पद्धति का उपयोग हो सकता है।

(६) छात्रों के स्वाध्ययन के लिए नवीन कार्य के निर्धारण के हेतु इस विधि का प्रयोग किया जाना चाहिए। इसके द्वारा उस निर्दिष्ट पाठ या पृष्ठों का संक्षिप्त परिचय तथा मुख्य बातों का ज्ञान दिया जा सकता है, जिससे छात्रों को यह ज्ञान हो जाय कि उन्हें इस पाठ या कार्य में किन-किन बातों का अध्ययन करना है।

(७) इस पद्धति का प्रयोग किसी विषय या प्रकरण का सारांश देने के लिए भी किया जा सकता है।

(८) छात्रों में पाठ या विषय के प्रति रुचि जागृत करने के लिए भी व्याख्यान-विधि का प्रयोग किया जाना चाहिए।

इस पद्धति के प्रयोग मे शिक्षक को परम्परागत ढंग को नही अपनाना चाहिए वरन् उसे वह व्याख्यान के साथ साथ विचारोत्तेजक, विकासात्मक एवं बोधात्मक प्रश्नों का सहारा लेना चाहिए। इसके अतिरिक्त उसे छात्रो की तार्किक एवं आलोचनात्मक शक्तियों के विकास के लिए वाद-विवाद पद्धति को भी अपनाना चाहिए। इस प्रकार के प्रश्नों से पाठ का स्वाभाविक एवं तर्कसम्मत विकास होता चलता है। उदाहरणार्थ यदि उत्पत्ति एवं उसके ढंगों के विषय में पढाना है तो विषय का विकास अधोलिखित ढंग से करना लाभ-प्रद होगा—

अध्यापक—कुम्हार मिट्टी कहाँ से प्राप्त करता है ?

छात्र – गड्ढों से।

अध्यापक—मिट्टी किसकी देन है ?

छात्र—प्रकृति की।

अध्यापक—कुम्हार मिट्टी से क्या बनाता है ?

छात्र—बर्तन।

अध्यापक—कुम्हार ने मिट्टी से बर्तन बनाने मे क्या कार्य किया ?

छात्र—मिट्टी का रूप परिवर्तित किया।

अध्यापक—इस परिवर्तित स्वरूप से पहले हमारे लिए मिट्टी की उपयोगिता क्या थी ?

**छात्र—कुछ नहीं या बहुत कम ।**

**अध्यापक—बर्तन बनने से मिट्टी की उपयोगिता पर क्या प्रभाव पड़ा ?**

छात्र—उपयोगिता में वृद्धि हुई ।

अध्यापक—कुम्हार ने इसमें क्या नवीन उत्पत्ति की है ?

छात्र—कुछ नही ।

इसके पश्चात् अध्यापक अपने व्याख्यान द्वारा यह स्पष्ट करेगा कि मनुष्य कोई ऐसा पदार्थ नहीं बना सकता है जो बिल्कुल नवीन हो । वह केवल विद्यमान पदार्थ की उपयोगिता मे वृद्धि कर सकता है । इसी उपयोगिता-वृद्धि को अर्थशास्त्र में **'उत्पत्ति'** कहते है । इस प्रकार शिक्षक अपने पाठ को बडे ही रोचक ढंग से छात्रों के समक्ष प्रस्तुत कर सकता है ।

**गुण**—(१) व्याख्यान-पद्धति द्वारा छात्रो मे किसी भाषण को ध्यानपूर्वक सुनने की आदत का निर्माण हो जाता है ।

(२) इसके द्वारा छात्रों की अभिव्यंजना, तर्क एवं चिन्तन शक्तियो का भी समुचित विकास हो जाता है ।

(३) यह पद्धति ज्ञानात्मक पाठ के लिए बहुत ही उपयोगी है ।

(४) इसके द्वारा आर्थिक जीवन के व्यावहारिक पक्षो पर सुगमतापूर्वक प्रकाश डाला जा सकता है ।

(५) इसमे शिक्षक एवं छात्र दोनो ही सक्रिय रहते है।

(६) इस पद्धति के द्वारा छात्र एवं शिक्षक के बीच ज्ञान का प्रत्यक्ष आदान-प्रदान होता रहता है ।

(७) इसके द्वारा शिक्षण मे समय की भी बचत होती है ।

(८) इसके द्वारा गहन एवं भ्रामक विचारों का सरलतापूर्वक स्पष्टीकरण कर दिया जाता है ।

**दोष**—(१) इस पद्धति के विरुद्ध यह आरोप लगाया जाता है कि यह छात्रों को निष्क्रिय श्रोता बनाती है ।

(२) इस पद्धति में अध्यापक का एकाधिकार होता है जिसके कारण शिक्षण की सजीवता एवं रोचकता नष्ट हो जाती है ।

(३) इसके द्वारा प्रदान किया गया ज्ञान स्थायी एवं वास्तविक नहीं होता ।

(४) यह निम्न स्तर के छात्रो के लिए अनुपयुक्त है क्योंकि इसमें उनके मानसिक स्तर, प्रवृतियों, रुचियों एवं शक्तियों का ध्यान नहीं रखा जाता।

(५) इसमें बालक को 'केन्द्र बिन्दु' मानकर नहीं चला जाता जबकि यह प्रगतिशील शिक्षा की एकमात्र माँग है। इसमें अध्यापक का स्थान श्रेष्ठ और बालक का गौण रहता है।

(६) इसके द्वारा छात्रों को सैद्धान्तिक ज्ञान तो प्राप्त हो जाता है परन्तु वे व्यावहारिक जीवन मे उसका उपयोग करना नहीं सीख पाते।

**सीमाएँ**—(१) इस पद्धति की सफलता दो बातों पर निर्भर है—प्रथम पाठ्य-वस्तु का चयन, तथा उस पाठ्य-वस्तु के प्रस्तुतीकरण करने के ढंग पर। हमारे देश में इन दोनो ही बातो का अभाव है। प्रस्तुतीकरण करने का ढंग वक्ता के ऊपर निर्भर होता है। इसके लिए कुशल एवं विद्वान शिक्षको की आवश्यकता है। इस पद्धति का प्रयोग ऐसे ही शिक्षको द्वारा होना चाहिए। साधारण बुद्धि के शिक्षक के हाथो मे पद्धति विकृत हो जाती है।

(२) इस पद्धति के छात्रों की परीक्षा सरलतापूर्वक नही हो पाती। इसमे न तो छात्रो को अपनी ग्राह्यता का ज्ञान हो पाता है और न शिक्षक का अपनी सफलता का।

(३) इस पद्धति के द्वारा शिक्षण को सजीव बनाने वाले उपकरण शिक्षक को उपलब्ध नही हो पाते।

(४) इसमे बालक के मौलिक चिन्तन को ठेस पहुंचती है क्योंकि छात्र अपने शिक्षक के वाक्यों को श्रेष्ठ एवं चिरन्तन सत्य के समान मानने लगते है।

(५) इसके द्वारा बालक की कौतुहल प्रवृत्ति की संतुष्टि नही हो पाती।

(६) बहुत से अध्यापक अपनी कमियों को छिपाने के लिए इसके स्थान पर मुख्य बातें लिखवाना ही शुरू कर देते हैं।

**सुझाव**—(१) व्याख्यान बालकों की आयु तथा मानसिक स्तर के अनुसार होना चाहिए।

(२) माध्यमिक स्तर पर इसका उपयोग कम ही करना चाहिए।

(३) शिक्षक को व्याख्यान देते समय छात्रो के अवधान विस्तार का ध्यान रखना चाहिए।

(४) इस पद्धति का प्रयोग केवल नवीन पाठ की भूमिका के लिए ही किया जाय तो बहुत ही लाभप्रद होगा।

(५) व्याख्यान क्रमबद्ध होना चाहिए।

(६) व्याख्यान की भाषा तथा शैली छात्रों के मानसिक स्तर तथा आयु के अनुसार होनी चाहिए।

(७) शिक्षक को प्रश्न करने की रीति को जानना चाहिए जिससे वह छात्रों का ध्यान अपनी ओर आकर्षित कर सके तथा व्याख्यान की सफलता को भी आकलन कर सके। इस रीति के प्रयोग से शिक्षण मे सजीवता लाई जा सकती है।

(८) शिक्षक की व्याख्यान देने की गति तीव्र नही होनी चाहिए। वह नीरसता के वातावरण को दूर करने के लिए अपने व्याख्यान मे हास्य का पुट लगाये।

(९) शिक्षक का स्वर तथा उच्चारण शुद्ध होना चाहिए क्योंकि छात्रों में अनुकरण प्रवृत्ति अधिक होती है। यदि वह शब्दो का उच्चारण अशुद्ध करेगा तो बालक भी उसकी अनुकृति करेगे।

(१०) व्याख्यान को रोचक एव सजीव बनाने के लिए अध्यापक को दृष्टान्तो, उदाहरणो तथा बालक के व्यावहारिक जीवन की घटनाओं का आश्रय लेना चाहिए। इस प्रकार हम कह सकते है कि शिक्षक को व्याख्यान का सम्बन्ध बालको के व्यावहारिक जीवन से स्थापित करना चाहिए।

**प्रयोगशाला विधि**—शिक्षा में वैज्ञानिक प्रवृत्ति ने प्रत्येक विषय के लिए अपनी प्रयोगशाला स्थापित करने को बाध्य किया है। जिस प्रकार प्राकृतिक विज्ञानो के लिए प्रयोगशालाओ की आवश्यकता होती है उसी प्रकार सामाजिक विषयो के लिए भी आधुनिक काल की विचारधारा के अनुसार प्रयोगशाला का होना आवश्यक है। इसके पक्ष में यह कहा जा सकता है कि यदि प्रत्येक विषय की प्रयोगशाला पृथक रूप से स्थापित की जायगी तो उससे छात्रो के लिए उस विषय के लिए एक ऐसा आनन्दमय वातावरण स्थापित हो जायगा, जिसमें वे सरलता एवं सुगमता से क्रिया द्वारा सीख सकते है। अर्थशास्त्र भी एक विज्ञान है चाहे वह प्राकृतिक विज्ञानों की भाँति इतना शुद्ध विज्ञान न हो परन्तु विज्ञान की उदार परिभाषा के अन्तर्गत यह भी विज्ञान ही है। इस कारण अर्थशास्त्र के लिए भी एक प्रयोगशाला की आवश्यकता है। दूसरे, यदि इसकी व्यवस्था नहीं होगी तो शिक्षक को अर्थशास्त्र की सामग्री को एक कक्ष से दूसरे कक्ष में ले जाने में पर्याप्त समय लगेगा तथा उस सामग्री के टूटने-फूटने का भी डर रहेगा। तीसरे, प्रयोगशाला के द्वारा अर्थशास्त्र का वातावरण स्थापित

किया जाता है जो उसकी शिक्षा के लिए अति आवश्यक है। आधुनिक शैक्षिक विचारधारा के अनुसार अध्यापक का यह परम कर्त्तव्य है कि वह छात्रों के लिए ऐसा वातावरण या ऐसी स्थिति उत्पन्न करे जिसमें छात्र स्वक्रिया द्वारा ज्ञान अर्जित कर सकें। इस प्रकार प्रयोगशाला वह साधन है जिसके द्वारा अर्थशास्त्र का शिक्षक बालकों की शिक्षा के लिए उपयोगी स्थिति एवं वातावरण उत्पन्न कर सकता है। अब केवल प्रश्न यह है कि अर्थशास्त्र की प्रयोगशाला में किन-किन वस्तुओं का समावेश होना चाहिए? इसके उत्तर में हम अधोलिखित बातों को प्रस्तुत कर सकते है—

(१) सामान्य कक्ष से एक बड़ा कक्ष होना चाहिए जिसमें एक समय मे ३० या ४० बालक स्वाध्ययन कर सकें। इसके अतिरिक्त उसमें प्रायोगिक कार्य करने के लिए मेज तथा कुर्सियों की व्यवस्था भी होनी चाहिए--

(२) श्यामपट।

(३) अर्थशास्त्र की पाठ्य-पुस्तको, विशेष अध्ययन के लिए पुस्तके तथा अन्य सहायक पुस्तकों की व्यवस्था अल्मारियो में होनी चाहिए। ये अल्मारियाँ दीवार में हों तो अच्छा होगा क्योकि लकड़ी की अल्मारियो मे पर्याप्त मात्रा में स्थान घिरेगा।

(४) सूचनापट।

(५) चार्ट, मॉडल, चित्र, मानचित्र और रेखाकृतियाँ, आदि।

(६) अर्थशास्त्र से सम्बन्धित पत्र-पत्रिकाएँ।

(७) फिल्म तथा स्लाइड्स।

(८) प्रोजेक्टर तथा स्क्रीन।

(९) रेडियो तथा

(१०) शब्द-कोष।

**प्रयोग**—इस पद्धति के प्रयोग के लिए शिक्षक कार्यों का निर्धारण करता है। अध्यापक कार्य का निर्धारण करके उसके विषय में एक रूपरेखा प्रस्तुत करता है जिसमें वह यह भी बता देता है—कि इस कार्य की पूर्त्ति में अमुक-अमुक वस्तुओं की सहायता अपेक्षित है तथा अमुक-अमुक स्थान से सामग्री प्राप्त की जा सकती है। इस पद्धति में शिक्षक का स्थान एक पथ-प्रदर्शक, मित्र एवं दार्शनिक का हो जाता है। इन सूचनाओ को ग्रहण करने के पश्चात् छात्र वैयक्तिक रूप से प्रयोगशाला में बैठकर अपना-अपना कार्य करते हैं। इस प्रकार उन्हें अपनी वैयक्तिक विभिन्नताओं के अनुसार कार्य प्राप्त हो जाता है जिससे

उनकी वैयक्तिक विशेषता का विकास सम्भव हो जाता है। इस पद्धति में निर्धारित कार्य को पूर्ण करने के लिए भी समय निर्धारित कर दिया जाता है। जो बालक अपने कार्य को अवधि से पूर्व पूर्ण कर लेता है उसे दूसरा कार्य दे दिया जाता है।

**गुण**—(१) इसके द्वारा छात्र स्वक्रिया द्वारा ज्ञान अर्जित करते है।

(२) इसके प्रयोग से छात्र पुस्तकालय का उपयोग करना सीख जाते है।

(३) इस पद्धति के द्वारा वर्तमान परीक्षा प्रणाली के दोषों को दूर किया जा सकता है। इन कार्यों की पूर्ति के आधार पर छात्रों को एक कक्षा से दूसरी कक्षा के लिए उन्नति प्रदान की जाती है। प्रयोगशाला में प्रत्येक बालक की उन्नति का लेखा रहता है जिसमें अध्यापक उनके विकास को लिखता रहता है। इन उन्नति के लेखों के आधार पर उनको उन्नति प्रदान की जाती है।

(४) इस पद्धति के प्रयोग से सामूहिक शिक्षण के दोषो को दूर किया जा सकता है।

(५) इसके प्रयोग से छात्रो में स्वाध्ययन की आदत का निर्माण होता है।

**दोष तथा सीमाये**—(१) यह पद्धति बहुत व्ययपूर्ण है। यह भारत जैसे निर्धन देश के लिए उपयुक्त नही है क्योंकि यहाँ तो सामान्य कक्ष भी उपलब्ध नही हो पाते। अतः विशेष कक्षो या प्रयोगशालाओ की व्यवस्था का कार्य एक स्वप्न के समान है।

(२) भारतवर्ष मे छात्रोपयोगी पत्र-पत्रिकाये तथा पाठ्य-पुस्तके पर्याप्त मात्रा में उपलब्ध नही है जिनको प्रयोगशाला में रखा जा सके।

(३) यदि प्रयोगशाला मे उचित ध्यान नही दिया गया तो यह पद्धति यान्त्रिक बन सकती है।

(४) इस क्षेत्र मे कुशल एवं प्रशिक्षित शिक्षको का अभाव।

(५) इस पद्धति के प्रयोग से छात्रो द्वारा अर्जित किया ज्ञान शृङ्खलाबद्ध एवं सुसंगठित नहीं होता।

**(४) योजना पद्धति**—इस पद्धति के जन्मदाता श्री डब्लू० एच० किलपैट्रिक (W. H. Kilpatric) है। ड्यूवी के प्रयोजनवाद के सिद्धान्तो के आधार पर इस पद्धति का निर्माण किया गया है। इस पद्धति का निर्माण विद्यालय के परम्परागत एवं शुष्क वातावरण को दूर करने के लिए किया गया है। इसमें

छात्रों की क्रियाशीलता को महत्त्वपूर्ण स्थान दिया गया है। प्रोजेक्ट शब्द की परिभाषा विभिन्न प्रकार से की गई है। किलपैट्रिक के मतानुसार "प्रोजेक्ट वह सहृदयपूर्ण अभिप्राययुक्त क्रिया है जो पूर्ण संलग्नता के साथ सामाजिक वातावरण में की जाय।"[1] प्रो० स्टीवेन्सन के अनुसार "प्रोजेक्ट एक समस्या-मूलक कार्य है जिसका समाधान उसके प्रकृत वातावरण में रहते हुए ही किया जाता है।"[2] प्रो० बैलार्ड के मतानुकूल "प्रोजेक्ट वास्तविक जीवन का एक छोटा-सा भाग है जिसको शिक्षालय मे प्रतिपादित किया जाता है।"[3] इन परिभाषाओं से यह स्पष्ट है कि योजना वास्तविक जीवन में रहकर ही पूर्ण की जाती है अर्थात् वह अपने स्वाभाविक वातावरण में ही पूर्ण होनी जाती है। अतः प्रत्येक ऐसी समस्या बालक के दैनिक जीवन से सम्बन्धित्त होनी चाहिए। इसमें योजना का चयन व सम्पादन बालको द्वारा ही होता है। इसमें समस्या छात्रों के समक्ष प्रत्यक्ष रूप से प्रस्तुत नही की जाती वरन् ऐसी परिस्थितियाँ उत्पन्न की जाती है जिनमें बालक अपने अनुभवो के आधार पर उनका चयन करता है। योजना के सम्पादन एवं चयन मे शिक्षक तथा उसकी इच्छा का कोई स्थान नही है। उसका स्थान केवल पथ-प्रदर्शक एव मित्र जैसा होता है। अर्थशास्त्र के शिक्षण के लिए यह पद्धति बहुत ही लाभदायक है। इसके द्वारा छात्रो को अपने आर्थिक जीवन की समस्याओं को हल करने की शिक्षा सुगमता-पूर्वक दी जा सकती है। इसमे छात्र परस्पर सहयोग व आत्म-परिश्रम एवं सूझ-बूझ से कार्य को सम्पादित करते हैं। इस प्रकार समाज मे रहते हुए छात्रो मे शिक्षा तथा सामाजिक गुणो अर्थात् सहयोग, सहकारिता, सहानुभूति, प्रेम आदि का विकास होता है।

योजनाये दो प्रकार की होती है—(१) व्यक्तिगत तथा (२) सामूहिक। प्रयोजनवाद सामूहिक योजना का पक्षपाती है। परन्तु अर्थशास्त्र-शिक्षण में दोनों प्रकार की योजना का उपयोग किया जा सकता है। सामूहिक योजनाओं के उपयोग से छात्रो में सामाजिकता के सद्गुणो का विकास किया जा सकता है। इसमे समस्त छात्र सहकारिता एवं सहयोग के साथ कार्य करते है। व्यक्तिगत

1. "A project is a whole hearted purposeful activity proceeding in a social environment."

2. "A project is a problematic act carried to completion in its natural setting."

3. "A project is a bit of real life that has been imparted into the school."

योजनाओं में छात्र पृथक-पृथक रूप से योजनाओं को पूर्ण करते हैं। विषय के अनुसार योजनाओ का वर्गीकरण इस प्रकार किया जा सकता है—

(१) अभ्यासात्मक।

(२) समस्यात्मक।

(३) उपभोगात्मक।

(४) उत्पादनात्मक।

**प्रयोग**—योजना पद्धति का प्रयोग अर्थशास्त्र-शिक्षण में बहुत ही लाभदायक है। इसके प्रयोग मे आर्थिक जीवन की व्यावहारिक समस्याओ के स्वरूप को सरलतापूर्वक भलीभाँति समझा जा सकता है। इसके सफल प्रयोग के लिए क्रमशः सात स्तरो को पार करना पड़ता है।

(१) परिस्थिति उत्पन्न करना (Creation of the Situation)।

(२) योजना का चयन (Selection of the Project)।

(३) उद्देश्य-निरूपण (Purposing)।

(४) योजना पूर्ण करने का कार्यक्रम (Plan of the Project)।

(५) कार्य-क्रम को क्रियान्वित करना (Execution of the Plan)।

(६) कार्य का निर्णय (Judgement of the work)।

(७) कार्य का लेखा (Recording)।

योजना पद्धति के प्रयोग को निम्नांकित उदाहरण द्वारा स्पष्ट किया जा सकता है—

**योजना**—सहकारी बैंक का सचालन।

(१) शिक्षक छात्रो को ऐसी स्थिति मे रखेगा जिससे वे अपनी बचत के सदुपयोग पर विचार कर सके। इस प्रकार शिक्षक योजना के चयन के लिये स्वाभाविक परिस्थितियां उत्पन्न कर देगा। फलस्वरूप छात्र अपनी बचत का सदुपयोग करने का प्रयत्न करेंगे।

(२) इन परिस्थितियो मे उपस्थित छात्र सहकारी बैंक खोलने के लिये तत्पर होंगे।

(३) इसके पश्चात् समस्त छात्र मिलकर इसके उद्देश्यो का निर्धारण करेंगे।

(४) तदुपरान्त छात्र सहकारी बैंक के स्थापन एवं संचालन के लिये एक व्यवस्थित कार्य-क्रम की रूपरेखा बनायेंगे।

(५) इसके पश्चात् समस्त छात्र विचार करके उसको क्रियान्वित करने के लिए आपस में कार्य-विभाजन कर लेंगे।

(६) तदुपरान्त समस्त कार्य का मूल्यांकन करेंगे।

(७) अन्त में, सहकारी बैंक का सुनिश्चित रूप अपनी योजना के हल के रूप में प्रस्तुत करेंगे। इसमें उसकी समस्त कार्य-प्रणाली का ब्यौरा लिखित रूप में प्रस्तुत किया जायगा।

अर्थशास्त्र-शिक्षण में योजना पद्धति के प्रयोग के बहुत अवसर है—उदाहरणार्थ सहकारी संघ की दुकान, सिंचाई के साधन, हमारा भोजन, यातायात के साधन आदि।

**गुण**—(१) योजना पद्धति के द्वारा छात्रो को सहयोग के साथ रहने, विचार करने तथा कार्य करने के लिए प्रोत्साहित किया जाता है जिससे वे समान अभिप्रायो को प्राप्त करने में सफल होते है। इसके द्वारा छात्रो में उत्तम सामाजिक गुणो एवं आदतों का विकास किया जाता है जिससे वे समाज की आर्थिक स्थिति को सुधारने में सहायक हो सके तथा उसमें सफलतापूर्वक अपना जीवन व्यतीत कर सके। इसके द्वारा छात्रों में व्यावहारिक गुणों का भी विकास होता है जिससे वे अपने व्यावहारिक जीवन को श्रेष्ठ बनाने में सफल होते हैं।

(२) इसके द्वारा विभिन्न विषयों में सरलता से समन्वय स्थापित किया जा सकता है, इसके अतिरिक्त पाठ्य-क्रम में भी एकीकरण स्थापित किया जा सकता है क्योंकि योजना एक अभिप्राययुक्त क्रिया होती है जिसको सामाजिक पर्यावरण में रहकर पूर्ण किया जाता है। इस प्रकार पाठ्य-क्रम का वास्तविक जीवन से सम्बन्ध स्थापित होता है जो इसका विशेष गुण है।

(३) इस पद्धति के द्वारा रटने की प्रवृत्ति को निरुत्साहित किया जाता है और छात्रों को चिन्तन, तर्क तथा निर्णय के आधार पर समस्या सुलझाने के लिए प्रोत्साहित किया जाता है। इस प्रकार उनमें स्वाध्याय की आदत का निर्माण होता है।

(४) यह पद्धति सीखने के सिद्धान्तो पर आधारित है, उदाहरणार्थ अभ्यास, तत्परता तथा परिणाम का नियम। इस कारण यह पद्धति मनोवैज्ञानिक सिद्धान्तों के अनुकूल है।

(५) बालकों में इस विधि के द्वारा सतत् प्रयत्नशीलता तथा रचनात्मक सक्रियता का विकास होता है।

(६) योजना पद्धति के अन्तर्गत शिक्षालय के जीवन को वास्तविक जीवन से सम्बन्धित किया जाता है। वे अपनी योजनाओं की पूर्त्ति सामाजिक पर्यावरण

में करते हैं जिससे वे व्यावहारिक जीवन की शिक्षा प्राप्त कर लेते है और बाद में उनको जीवन की कठिनाइयों को सुलझाने में कोई कठिनाई नहीं होती। इस सम्बन्ध के कारण बालक स्वयं अपने मूल्यों का निर्माण करता है।

(७) इस पद्धति में स्वक्रिया पर बल दिया जाता है। छात्र इसके द्वारा स्वानुभव द्वारा ज्ञान प्राप्त करते हैं।

(८) इस पद्धति के प्रयोग से कक्षा-शिक्षण के दोषों का निवारण किया जा सकता है। इसमें छात्र वैयक्तिक एवं सामूहिक रूप से अपनी योग्यता, रुचि तथा क्षमता के अनुसार कार्य करते है।

(९) इस पद्धति के प्रयोग से छात्रों मे सामाजिक गुणों, आदतों तथा अभिरुचियों का विकास होता है।

(१०) इस पद्धति से द्वारा छात्रों को श्रम करने के लिए प्रोत्साहित किया जाता है जिससे वे श्रम के महत्त्व को समझ सकें और राष्ट्र एवं विश्व के श्रमिकों का आदर कर सकें।

**दोष एवं सीमाएँ**—(१) इस पद्धति के द्वारा शिक्षण करने से ज्ञान खण्डो में विभाजित करके प्रदान किया जाता है। दूसरे शब्दों मे यह कहा जा सकता है कि इसके द्वारा क्रम तथा तारतम्य के साथ ज्ञान प्रदान नहीं किया जाता।

(२) यह पद्धति बहुत व्ययपूर्ण है। इसके प्रयोग के लिए विभिन्न उपकरणों, उपादानो, साधनों, पुस्तकों, पत्रिकाओं आदि की आवश्यकता है। इस कारण भारतवर्ष जैसे निर्धन देश में इसका प्रयोग पर्याप्त मात्रा मे नही किया जा सकता।

(३) इस पद्धति के द्वारा शिक्षण करने में समय बहुत लगता है। अर्थशास्त्र को इतना समय, समय-तालिका में प्राप्त नही होता।

(४) इस पद्धति के विरुद्ध एक आक्षेप यह भी लगाया जाता है कि इसके प्रयोग से शिक्षालय का सम्पूर्ण कार्य निष्क्रम हो जाता है।

(५) अर्थशास्त्र की पुस्तके योजनाओं के आधार पर नही लिखी जाती है। इस कारण योजनाओं की पूर्ति के लिए सामग्री उपलब्ध नही हो पाती। इस लिए भी योजना पद्धति को नही अपनाया जाता।

(६) यह पद्धति छात्रो के लिए बहुत कष्ट-साध्य है।

**(५) तर्क प्रधान पद्धति विधि**—अर्थशास्त्र-शिक्षण के लिए यह पद्धति बहुत उपयोगी सिद्ध हो सकती है, परन्तु इस पद्धति का उपयोग निम्न कक्षाओं में नहीं किया जा सकता है। अर्थशास्त्र-शिक्षण के लिए इस पद्धति का प्रयोग

उच्चतर माध्यमिक एव विश्वविद्यालयी स्तरो पर किया जा सकता है। इस पद्धति के प्रयोग के लिए अधोलिखित स्तरों को अपनाना चाहिए—

(१) **कारण तथा परिणाम**[1]—इस स्तर पर शिक्षक के द्वारा पाठ के विषय में छात्रो के समक्ष तथ्य प्रस्तुत किये जाते है या स्वयं छात्र उस पाठ के विषय मे तथ्यो को एकत्रित करते है। तथ्यो के एकत्रित करने के पश्चात् छात्र स्वयं उनसे सम्भावित परिणाम निकालने का प्रयत्न करते है। परन्तु इस कार्य मे शिक्षक उनका पथ-प्रदर्शन करेगा। अर्थशास्त्र में इस पद्धति प्रयोग के लिए बहुत से अवसर प्राप्त है। उदाहरणार्थ—मजदूरो की हीन दशा, कृषि की हीन दशा आदि। मजदूरो की हीन दशा के कारणो के ज्ञान मे इस परिणाम पर पहुंच सकते है कि अन्याय तथा अत्याचार विद्रोह को जन्म देता है। जब मिल-मालिक तथा सरकार मजदूरो की दशा को सुधारने के लिये कोई प्रयत्न नही करती तब वे विद्रोह, हडताल आदि का ही सहारा लेते है। आर्थिक इतिहास इस बात का साक्षी है।

(२) **तुलनात्मक अध्ययन**— इस स्तर पर छात्र उन तथ्यो का तुलनात्मक अध्ययन करेगे। उदाहरणार्थ मजदूरों की हीन दशा के कारणो के विषय में उन्होने तथ्य एकत्रित किये। इस स्तर पर वे इन तथ्यो की तुलना विभिन्न देशो के मजदूरो की दशा से कर सकते है।

(३) **आलोचना**—इस स्तर पर तथ्यो का आलोचनात्मक अध्ययन किया जायगा। शिक्षक इस कार्य मे छात्रों का पथ-प्रदर्शन करेगा और उनको सतर्क करेगा कि वे जल्दी मे कोई सामान्य नियम या सारांश न निकाले। इसके विपरीत धैर्य के साथ समस्त तथ्यो की आलोचना करके कोई नियम या सारांश बनावे।

(६) **समस्या पद्धति**—समस्या पद्धति योजना पद्धति से पर्याप्त समानता रखती है। इन दोनो पद्धतियो मे अन्तर इस बात का है कि योजना पद्धति में प्रायोगिक कार्य को महत्त्व प्रदान किया जाता है। यह प्रायोगिक कार्य एक वास्तविक स्थिति मे सम्पन्न किया जाता है जब कि समस्या पद्धति मे मानसिक निष्कर्षों पर अधिक बल दिया जाता है। दूसरे शब्दो में यह कहा जा सकता है कि योजना पद्धति मे शारीरिक एवं मानसिक दोनो प्रकार की क्रियाएँ सन्निहित होती है जब कि समस्या पद्धति में केवल मानसिक हल ही प्रदान

1 Cause and Effect.

**किया जाता है। इस प्रकार समस्या पद्धति में किसी समस्या या प्रश्न को एक विशेष स्थिति में वैज्ञानिक ढंग से हल किया जाता है।** अतः इस पद्धति का सबसे प्रमुख गुण मानसिक क्रिया एवं आलोचनात्मक चिन्तन है। अर्थशास्त्र-शिक्षण में इस पद्धति का महत्त्वपूर्ण स्थान है क्योंकि इसका प्रमुख ध्येय बालकों को जीवन की वास्तविक समस्याओं से परिचित कराना है। अतः इस पद्धति के द्वारा अर्थशास्त्र के विभागों अर्थात उपभोग, विनिमय, उत्पादन, वितरण व राजस्व आदि का समस्याओं के प्रसंग में व्यावहारिक ज्ञान छात्रों को प्रदान किया जाता है। इस प्रकार इसके द्वारा सैद्धान्तिक विवेचना नहीं की जाती वरन् केवल उन्हीं सिद्धान्तों का अध्ययन कराया जाता है, जो कि समस्याओं के अध्ययन में प्रसंगवश आ जाते हैं।

**प्रयोग**—इस पद्धति में शिक्षक या तो स्वयं समस्या छात्रों को दे देता है या छात्र स्वयं प्रस्तुत कर देते हैं। समस्या एक छात्र के द्वारा भी प्रस्तुत की जा सकती है तथा कई छात्र उसको सामूहिक रूप से भी रख सकते हैं। परन्तु इसके प्रयोग में इस बात पर बल दिया जाता है कि छात्र समस्या को अपनी समझकर हल करने के लिये तत्पर रहें। दूसरे शब्दों में कह सकते हैं कि छात्रों को समस्या में अपनत्व अनुभव करना चाहिए। इसके अतिरिक्त समस्या ऐसी चुनी जानी चाहिए जो छात्रों के आर्थिक जीवन से सम्बन्धित हो। दूसरे समस्या छात्रों की रुचि एवं मानसिक स्तर के अनुकूल होनी चाहिए। इसके प्रयोग की निम्नलिखित बातों का विशेष ध्यान रखना चाहिए—

(१) समस्या का चयन तथा उसका प्रस्तुतीकरण।

(२) समस्या से सम्बन्धित तथ्यों का एकत्रीकरण एवं व्यवस्था।

(३) तथ्यों की जाँच तथा सम्भावित हलों का निर्णय।

(४) तथ्यों का विश्लेषण, आलोचना तथा उनके आधार पर परिणाम निकालना।

(५) परिणामों का मूल्यांकन तथा सामान्य नियमों का निर्माण।

(६) समस्या का लेखा।

उदाहरण—

**समस्या**—भारत में कृषि।

**प्रस्तुतीकरण**—शिक्षक छात्रों के समक्ष इस समस्या को उनके वास्तविक जीवन से सम्बन्धित करके प्रस्तुत करेगा। बालकों से भारत में कृषि की आवश्यकता एवं महत्त्व के विषय में प्रश्न पूछे जायेंगे; **इस प्रकार समस्या** की

आवश्यकता को छात्रों के समक्ष स्पष्ट किया जायगा। इसके पश्चात् इस समस्या के अध्ययन के हेतु एक रूपरेखा तैयार की जायगी। वह इस प्रकार की होगी—

(१) समस्या की आवश्यकता एवं महत्त्व।

(२) कृषि की हीन दशा के कारण—

(अ) प्राकृतिक कारण।

(ब) आर्थिक कारण—(१) छोटे-छोटे तथा बिखरे हुए खेत (२) लगान-पद्धति का दोषपूर्ण होना (३) कृषि-श्रम की कार्य-क्षमता (४) पूँजी की कमी (५) कृषि उपजों के भंडारो की कमी (६) दोषपूर्ण संठगन (७) किसानों की ऋण-ग्रस्तता एवं साख का अभाव।

(स) कृषकों की अशिक्षा।

(द) कृषकों की रूढ़िवादिता एवं कुरीतियाँ।

(य) सिचाई के साधनों का अभाव।

(र) वैज्ञानिक कृषि-यन्त्रों के प्रयोग का अभाव।

(ल) खाद की समस्या।

(म) अच्छे बीजों का अभाव।

(प) जनसंख्या का दवाब।

(३) हीन-दशा के कारणों को दूर करने के उपाय—

(१) आर्थिक खेत बनाना।

(२) सामूहिक खेती।

(३) सहकारी खेती।

(४) चकबन्दी।

(५) कृषिकों को शिक्षित करना।

(६) खाद की समस्या को हल करने के उपाय।

(७) पूँजी तथा बाजारों की व्यवस्था करने के लिए उपाय।

(८) सिचाई के साधनों में वृद्धि।

(९) वैज्ञानिक यन्त्रों की उपलब्धि और प्रयोग।

(१०) फसल को विभिन्न प्रकार के कीड़ों से बचाने के उपाय।

(११) यातायात के साधनों में सुधार।

**(४) अध्ययन के हेतु आवश्यक सामग्री—**

(१) सरकार द्वारा अभी तक किये गये उपाय।

(२) प्रथम तथा द्वितीय पंचवर्षीय योजनाओं की प्रगति का विवरण।

(३) उपयोगी पुस्तकें तथा पत्रिकाएँ।

(४) कृषि सम्बन्धी अनुसंधानों का अध्ययन।

(५) जनसंख्या की वृद्धि को रोकने के उपाय—परिवार-नियोजन, आदि।

(६) समस्त शासकीय प्रयत्नों का समीक्षात्मक अध्ययन।

रूपरेखा तैयार करने के उपरान्त छात्र अपेक्षित सामग्री का संग्रह करेंगे। इस कार्य में शिक्षक छात्रों को सहयोग प्रदान करेगा। इसके पश्चात् छात्र समस्या का अध्ययन करना प्रारम्भ करेंगे तथा समस्त एकत्रित तथ्यों का आलोचनात्मक अध्ययन करके निष्कर्ष निकालने का प्रयत्न करेंगे। इनका निर्माण वाद-विवाद द्वारा भी कराया जा सकता है। परिणाम निकालने के उपरान्त छात्र इस समस्या को पूर्णरूप से लेख-बद्ध करेंगे। इस प्रकार छात्र स्वानुभव द्वारा ज्ञान अर्जित करने में सफल हो सकते हैं।

**गुण**—(१) इस पद्धति के प्रयोग से छात्र 'सबसे उत्तम क्या है' ? के विषय में सोचना, निर्णय, मूल्यांकन, तुलना तथा चयन करना सीख जाते हैं।

(२) इसके द्वारा छात्र अपने भावी जीवन की आर्थिक समस्याओं को हल करने लिये तत्पर किये जाते हैं।

(३) इस पद्धति के प्रयोग से छात्र समस्या हल करने की पद्धति को सीख जाते है।

(४) इसके द्वारा छात्र तथ्यो को संग्रह एवं व्यवस्थित करना सीख जाते हैं।

(५) इससे बालको में स्वाध्ययन की आदत का निर्माण होता है।

(६) इसके द्वारा राष्ट्रीय एवं सामाजिक समस्याओं के आर्थिक पक्षों को समझने की सूझ का विकास होता है।

(७) इससे छात्रों में वैज्ञानिक दृष्टिकोण उत्पन्न हो जाता है तथा वे मुद्रित पृष्ठों का अन्धानुकरण नही करते।

(८) इसके प्रयोग से छात्र स्वक्रिया द्वारा ज्ञान अर्जित करते हैं।

**दोष तथा सीमाएँ**—(१) यह पद्धति जूनियर स्तर के छात्रों के लिये व्यवहार्य नहीं है।

(२) यदि इस पद्धति का प्रयोग बारम्बार किया गया तो यह नीरस एवं यांत्रिक बन जाती है।

(३) इस पद्धति में समय बहुत लगता है, जब कि अर्थशास्त्र को समय-तालिका में आवश्यकतानुसार भी समय प्राप्त नहीं हो पाता है।

(४) इसमें सदैव संतोषजनक परिणाम प्राप्त नहीं हो पाते।

(५) इस पद्धति के प्रयोग के लिए निर्देशात्मक सामग्री की बहुत आवश्यकता होती है, जब कि हमारे शिक्षालयों में इस प्रकार की पुस्तकों, पत्रिकाओं आदि का अभाव पाया जाता है।

(६) इसमें छात्रो की विभिन्न रुचियों को कोई महत्त्व प्राप्त नहीं हो पाता।

(७) इसके प्रयोग के लिये प्रतिभाशाली एवं कुशल शिक्षकों की आवश्यकता है। यदि इसको सामान्य स्तर के शिक्षकों द्वारा संचालित किया गया तो हित की अपेक्षा अहित होने की सम्भवना बनी रहेगी।

**सुझाव**—(१) समस्या का चयन छात्रों की आर्थिक परिस्थितियो के संदर्भ से करना चाहिए तथा इनके चयन में छात्रों का परस्पर सहयोग प्राप्त करना चाहिए।

(२) समस्याओं के हल के लिए अपेक्षित सामग्री को सुगमतापूर्वक उपलब्ध बनानी चाहिये।

(३) समस्याओं के विश्लेषण एवं संश्लेषण में क्षात्रों को पथ प्रदर्शित किया जाय।

(४) समस्याओं को स्पष्ट ढंग से प्रस्तुत किया जाय।

**(७) व्याप्तिमूलक व निगमन विधि**—अर्थशास्त्र-शिक्षण में इन पद्धतियो का प्रयोग बतायत से होता है। यदि ध्यानपूर्वक देखा जाय तो ये विधियाँ न होकर एक प्रकार से अर्थशास्त्र-शिक्षण की रीतियाँ हैं क्योंकि इनके द्वारा अर्थशास्त्र के सिद्धान्तों का प्रतिपादन होता है। दूसरे शब्दों में हम कह सकते हैं कि ये प्रणालियाँ अर्थशास्त्र के सिद्धान्तों को जानने के लिए एक प्रकार से पहुँच (Approch) का कार्य करती हैं। नीचे दोनों विधियों का प्रथक-प्रथक क्रम से विवेचन प्रस्तुत किया जा रहा है—

**(अ) व्याप्ति मूलक**—प्रो० जे० एम० कीन्स [1] के मतानुसार "व्याप्तिमूलक रीति में हम अनेक दृष्टान्तों के आधार पर एक सामान्य नियम प्रतिपादित करते हैं। इस प्रकार इसमें हम विशिष्ट से सामान्य की ओर (From Particular to General) जाते हैं।" दूसरे शब्दों में हम कह सकते

1. J. M. Keynes.

हैं कि इसमें विषय से सम्बन्धित घटनाओं का अवलोकन किया जाता है। इसके उपरान्त इन घटनाओं में जो बातें समान पाई जाती हैं उनके आधार पर एक सामान्य नियम का निर्माण किया जाता है। इस पद्धति के प्रमुख अंग इस प्रकार है—

(१) निरीक्षण या अवलोकन (Observation)

(२) तथ्यों का संग्रह (Collection of facts)

(३) प्रयोग (Experiment)

इस रीति में सर्वप्रथम विभिन्न घटनाओं एवं तथ्यों का अवलोकन व अध्ययन किया जाता है। इसके उपरान्त उनका संग्रह एवं वर्गीकरण करके समान तथ्यों की खोज की जाती है। इसके पश्चात् समान तथ्यों के आधार पर सामान्य नियम का निर्माण किया जाता है और फिर इस सिद्धान्त के सत्यापन की प्रयोग द्वारा जांच की जाती है।

**गुण**—(१)यह पद्धति आर्थिक जीवन की वास्तविक घटनाओं के निरीक्षण पर अवलम्बित है। इसलिए इसके द्वारा निर्मित किये गये सिद्धान्त विश्वसनीय होते है।

(२) यह पद्धति सक्रिय (Dynamic) है। इसके द्वारा आर्थिक जीवन के प्रगतिशील तथ्यो से निष्कर्ष निकाले जाते है।

(३) यह पद्धति निगमन विधि के पूरक के रूप में कार्य करती है अर्थात् इसके द्वारा निगमन प्रणाली से निकाले हुए निष्कर्षो की सफलतापूर्वक जाँच की जा सकती है।

(४) इसके प्रयोग से नियमों को सुगमतापूर्वक समझा जा सकता है।

**दोष**—(१) इसके द्वारा बनाये हुए नियम सदैव सत्य नहीं होते अर्थात् अपर्याप्त आँकड़ों पर बनाये गये नियमों की असत्यता की सम्भावना बनी रहती है।

(२) अर्थशास्त्र एक सामाजिक विज्ञान है जिसमे मानव की आर्थिक क्रियाओं का अध्ययन किया जाता है। इस कारण प्राकृतिक विज्ञानों की अपेक्षा इसमें इस पद्धति का प्रयोग सीमित है क्योकि मानव पर प्रयोग करना कठिन है।

(३) परिस्थितियों में परिवर्तन हो जाने पर इस रीति के द्वारा बनाये हुए नियम या सिद्धान्त अव्यावहारिक हो जाते हैं।

(४) इस पद्धति में आँकड़ों का संग्रह, वर्गीकरण, विश्लेषण आदि किया जाता है। इस कार्य को कुशल एवं सिद्धहस्त व्यक्ति ही कर सकता है। इस कारण इसके प्रयोग में सामान्य व्यक्ति के लिए अनेक कठिनाइयाँ आती है।

(५) अर्थशास्त्र के कई विभागों अर्थात् वितरण, विनिमय आदि की समस्याओं को सुलझाने में इस पद्धति का प्रयोग बहुत सीमित है। इनको निगमन रीति से सफलतापूर्वक एवं सुगमता से सुलझाया जा सकता है।

**(ब) निगमन रीति**—अर्थशास्त्र शिक्षण में रिकार्डो, 'मिल' आदि प्रतिष्ठित अर्थशास्त्रियों ने निगमन रीति को अपनाया था। इसमें स्वतः सिद्ध तथ्यों को आधार मानकर सिद्धान्तों का निर्माण किया जाता है। निगमन पद्धति में सामान्य से विशिष्ट की ओर (From General to Particular) चलते हैं। प्रो० जेवेन्स ने इस पद्धति का मुख्य लक्षण इस प्रकार बताया था कि इसमें एक ज्ञान से दूसरे ज्ञान को ग्रहण किया जाता है। इसमें किसी विषय की विवेचना के लिए न तो प्रयोग करने पड़ते हैं और न तथ्यों का एकत्रीकरण। इस पद्धति का तर्क ही एकमात्र साधन है।

**गुण**—(१)यह पद्धति बहुत सरल है, क्योंकि इसमें एक व्यापक सत्य के आधार पर एक विशिष्ट सत्य का निर्माण किया जाता है। दूसरे इसका प्रयोग सामान्य व्यक्ति भी कर सकता है।

(२) यह पद्धति विश्वसनीय है क्योंकि यह तर्क की कसौटी पर खरी उतरती है। दूसरे शब्दों में कहा जा सकता है कि इसमें निश्चितता पायी जाती है।

(३) इसका उपयोग आँकड़ों के अभाव में भी किया जा सकता है।

(४) अर्थशास्त्र के शिक्षण के लिए यह बहुत उपयुक्त है क्योंकि इसमें प्रयोग नहीं करना पड़ता। दूसरे मनुष्य पर प्रयोग करना भी कठिन है। इसलिए भी यह बहुत उपयोगी है।

(५) इसके द्वारा बनाये गये सिद्धान्त पक्षपात-रहित होते हैं।

**दोष**—(१) इस पद्धति में आधारभूत तथ्य की सत्यता को जाँचने के लिये कोई व्यवस्था नहीं है। इस कारण इसके निष्कर्षों के अवास्तविक एवं असत्य होने की सम्भावना रहती है। उदाहरणार्थ—यदि आधारभूत तथ्य ही अवास्तविक है तो उस पर आधारित निष्कर्ष भी अवास्तविक होंगे।

(२) इस पद्धति में निर्धारित नियमों को अटल मान लिया जाता है जब क परिवर्तनशील जगत में मानवी मान्यताएँ भी परिवर्तनशील होती हैं।

(३) इस रीति के समर्थकों में कट्टरता पाई जाती है। वे अपने सिद्धान्तों को सार्वदेशिक व सार्वकालिक मानते है, जबकि व्यावहारिक जगत में स्थिति

इसके विपरीत पाई जाती है ; क्योंकि जगत् में विभिन्न राजनैतिक तथा सामाजिक कारणों के कारण परिवर्तन होता रहता है। इसलिए उनके नियम प्रत्येक परिस्थिति एवं समय में लागू नहीं हो सकते।

**प्रयोग**— अर्थशास्त्र-शिक्षण में ये दोनों विधियाँ पृथक-पृथक रूप से प्रयोग में नहीं लायी जानी चाहिएँ ; बल्कि इनका समन्वित रूप ग्रहण किया जाय। इस प्रकार का प्रयोग बहुत उपयोगी होगा। प्रो० वेगनर (Wagner) ने ठीक ही कहा है कि "निगमन तथा व्याप्ति मूलक रीतियों में किस को चुना जाय, इस प्रश्न का उत्तर यही हो सकता है कि दोनों के समन्वित रूप को ग्रहण किया जाय।" यह समन्वित पद्धति प्रो० सोमलर (Sohmoller)की इस विचारधारा पर सैद्धान्तिक रूप से अवलम्बित है, "वैज्ञानिक अध्ययन के लिये व्याप्तिमूलक एवं निगमन विधियाँ दोनो इस प्रकार आवश्यक है जिस प्रकार चलने के लिए दाहिने तथा बाँये दोनों पैरों की आवश्यकता पड़ती है।"[1] इस पद्धति के प्रयोग के लिये अर्थशास्त्र में बहुत से अवसर हैं—उदाहरणार्थ— उपयोगिता ह्रास-नियम, उपभोक्ता की बचत का सिद्धान्त, माँग तथा पूर्त्ति का नियम, ग्रेशम का नियम आदि। इसका प्रयोग अधोलिखित उदाहरण से स्पष्ट हो जायगा—

उदाहरण—

**प्रकरण**—"ग्रेशम का नियम"

अध्यापक छात्रों के समक्ष एक नयी एवं उत्तम कटोरी तथा एक घिसी हुई पुरानी कटोरी प्रस्तुत करके—

अध्यापक—इन दोनों बराबर मूल्य की कटोरियो में से आपको कौनसी कटोरी पसन्द है ?

छात्र—नयी एवं उत्तम कटोरी।

अध्यापक—यह आपको क्यों पसन्द है ?

छात्र—क्योकि यह सुन्दर एवं मजबूत है।

अध्यापक—यदि इन दोनों में से एक अनावश्यक है तो आप कौनसी कटोरी अलग करेंगे ?

---

1. "Induction and Deduction are both needed for Scientific thought as the right and left foot are both needed for walking." Sohmoller—Quoted by Dr. Marshall in his book—'Economics of Industry', page 419.

छात्र—घिसी एवं पुरानी कटोरी।

एक बढ़िया एवं घटिया रुमाल प्रस्तुत करके

अध्यापक—इन दोनों रुमालों में से आपको कौनसा रुमाल पसन्द है ?

छात्र—बढ़िया रुमाल।

अध्यापक—यह रुमाल आपको क्यों पसन्द है ?

छात्र—सुन्दर, आकर्षक एवं मजबूत हैं।

अध्यापक—इसमें से आप कौन-सा रुमाल अपने पास रखना पसन्द करेंगे ?

छात्र—बढ़िया रुमाल।

अध्यापक—इन कटोरी एवं रुमाल के उदाहरणों से आप क्या निष्कर्ष निकालते हैं।

छात्र—मनुष्य स्वभाव से सुन्दर एवं मजबूत को अपने पास रखना चाहता है।

एक नया तथा साफ नोट और एक पुराना एवं फटा सा नोट प्रस्तुत करके—

अध्यापक—यदि आपको इनमें से एक नोट लेना है तो आप कौनसा लेंगे ?

छात्र—साफ एवं नया नोट।

अध्यापक—यदि आपके पास ये दोनों नोट है और इनमें से आप एक खर्च करना चाहते है तो कौनसा खर्च करेंगे।

छात्र—पुराना एवं फटा हुआ नोट।

अध्यापक—जब आपने अच्छा नोट अपने पास रख लिया तो चलन में कौनसा नोट गया ?

छात्र—पुराना नोट।

एक शुद्ध चाँदी का रुपया तथा एक मिश्रित धातु का रुपया प्रस्तुत करके—

अध्यापक—यदि ये दोनों रुपये बराबर मूल्य पर चलन में हों तो कौनसा रुपया पहले खर्च करना पसन्द करेंगे ?

छात्र—मिश्रित धातु का रुपया।

अध्यापक—इस नोट तथा रुपये के उदाहरण से आप क्या निष्कर्ष निकालते हैं ?

छात्र—यदि चलन में खराब तथा अच्छी मुद्रा होती है तो बुरी मुद्रा अच्छी मुद्रा को चलन से बाहर कर देती है।

अध्यापक—इस स्वभाव की रानी ऐलिजाबेथ प्रथम के आर्थिक परामर्शदाता

सर टामस ग्रेशम ने व्याख्या की जिसको 'निकृष्ट मुद्रा प्रस्चिलन नियम' अथवा 'ग्रेशम का नियम' कहते हैं।

अध्यापक—यदि एक ही धातु के टंक कुछ हल्के एवं घिसे तथा कुछ नवीन शुद्ध तथा सम्पूर्ण वजन के चलन में हों तो लोग कौन से टंकों को चलन में देंगे ?

छात्र—हल्के तथा घिसे टंकों को।

अध्यापक—ऐसा क्यों होता है ?

छात्र—हल्के तथा घिसे टंकों के संग्रह करने से बाद में हानि होने की सम्भावना के कारण।

अध्यापक—अतः यह नियम किस दशा में लागू होता है ?

छात्र—जब एक समय में अच्छी तथा बुरी मुद्रा के टंक चलन में हों।

**गुण**—व्याप्तिमूलक एवं निगमन की समन्वित पद्धति द्वारा शिक्षण से निम्नलिखित लाभ प्राप्त किये जा सकते हैं—

(१) इस पद्धति के प्रयोग से छात्र स्वक्रिया द्वारा ज्ञान अर्जित करते हैं। इस प्रकार अर्जित किया हुआ ज्ञान स्थायी होता है।

(२) इसके द्वारा छात्रों की विश्लेषणात्मक शक्तियों का विकास होता है।

(३) इसके प्रयोग से छात्र अपने अवलोकन, चिन्तन, निर्णय आदि पर विश्वास करना सीख जाते हैं।

(४) यह पद्धति मनोवैज्ञानिक है।

**दोष**—(१) इसके द्वारा छात्रों मे श्रेष्ठ नागरिकता एवं प्रजातांत्रिक गुणों का विकास नहीं किया जा सकता।

(२) इस पद्धति के प्रयोग से अर्थशास्त्र के व्यावहारिक पक्षों की शिक्षा प्रदान नही की जा सकती।

(३) इसका प्रत्येक विषय के शिक्षण के लिए प्रयोग नही किया जा सकता है।

(४) इसकी प्रयोग बहुलता से यह पद्धति यांत्रिक एवं नीरस बन जाती है।

(८) **विश्लेषणात्मक एवं संश्लेषणात्मक पद्धति**—विश्लेषण वह क्रिया है जिसमें प्रतिपाद्य-पाठ्य-वस्तु पर विचारात्मक प्रश्न किये जाते हैं जिससे पाठ्य-वस्तु के सब तत्वों पर प्रकाश डाला जाता है और उसकी सूक्ष्माति-सूक्ष्म विवेचना की जाती है। इसमें प्रश्नों का बाहुल्य रहता है। इस कारण बहुत से लोग इस पद्धति को प्रश्नोत्तर पद्धति के नाम से भी पुकारते हैं। विश्लेषण के उपरान्त

जब तक हम पाठ्य-विषय के विभिन्न अंशों का सश्लेषण नहीं करेंगे तब तक छात्रों का ज्ञान निश्चित, सम्बद्ध, स्पष्ट एवं मानस पटल पर स्थाई नहीं हो सकेगा। संश्लेषण का अर्थ किसी वस्तु के विभिन्न अंशों से प्रारम्भ करके सम्पूर्ण की ओर चलने से है। दूसरे शब्दों में कह सकते हैं कि विश्लेषण का अर्थ किसी वस्तु को सरलतम अंशों में विभाजित करना है तथा संश्लेषण का अर्थ विभिन्न अंशों को एक वस्तु के रूप में निर्मित करना है। अर्थशास्त्र-शिक्षण में विश्लेषण-संश्लेषण पद्धति का प्रयोग बहुत ही लाभप्रद है।

**प्रयोग**—इस पद्धति के प्रयोग के लिए अर्थशास्त्र-शिक्षण में बहुत से अवसर उपलब्ध है। इसका प्रयोग नवीन पाठ के प्रस्तुतीकरण के लिए बहुत ही उपयोगी है। उदाहरणार्थ—उत्पत्ति, उपभोग, राजस्व आदि। इसके प्रयोग में यह आवश्यक नहीं है कि सम्पूर्ण विश्लेषण छात्रों द्वारा ही करवाया जाय। परन्तु इसमें कभी-कभी शिक्षक को भी सहयोग प्रदान करना चाहिए, क्योंकि छात्र सभी प्रश्नों के उत्तर देने में असमर्थ रहते हैं। जब वे किसी प्रश्न का उत्तर नहीं दे पावें तब शिक्षक को उस विषय के विश्लेषण में छात्रो को सहायता देनी चाहिए।

**गुण**—(१) इस पद्धति के प्रयोग से छात्रों में मौलिकता का विकास होता है।

(२) इसके द्वारा छात्रों में तर्क, स्मरण, निर्णय आदि शक्तियाँ विकसित होती हैं।

(३) इस विधि में मनोवज्ञानिकता तथा तार्किकता का सुन्दर समन्वय है।

(४) इसके द्वारा विषय-वस्तु को रोचक एवं सजीव ढंग से प्रस्तुत किया जाता है, जिससे उसमें छात्रों की रुचि भी बनी रहती है।

(५) इसके द्वारा छात्रों को स्वावलम्बी तथा कार्य-कारण सम्बन्ध स्थापित करने के योग्य बनाया जाता है।

**(६) समाजीकृत-अभिव्यक्ति-पद्धति**—वेस्ले (Wesley) के अनुसार समाजीकृत अभिव्यक्ति एक आदर्श है जो शिक्षण में ऐसे प्रयोग की कल्पना करता है जिसमें कक्षा के समस्त क्षात्र सहयोग एवं सद्भावना से ज्ञान अर्जित कर सकें। इसके द्वारा कक्षा के पर्यावरण की औपचारिकता को समाप्त किया जाता है तथा इसके स्थान पर स्वाभाविकता उत्पन्न की जाती है, जिसमें छात्र अपनी प्रकृति, रुचि तथा सहयोग के साथ ज्ञानोपार्जन कर सकें। इस पद्धति का

मूलभूत सिद्धान्त समाजीकरण है। अर्थशास्त्र-शिक्षण के लिये यह पद्धति बहुत लाभप्रद है क्योंकि अर्थशास्त्र एक सामाजिक विज्ञान है, जिसका ध्येय छात्रों में सामाजिकता उत्पन्न करना है।

**प्रयोग**—इस विधि का प्रयोग छात्रों, शिक्षक तथा विषय के उद्देश्यों पर निर्भर है। इस पद्धति के प्रयोग के लिए कक्षा में बैठने की व्यवस्था परम्परागत विधि से नहीं वरन् चन्द्राकार ढंग से की जाती है और शिक्षक का स्थान भी इनमें ही होता है, उसके लिए परम्परागत ढंग की भाँति विशेष स्थान नहीं होता है। सामाजिक-अभिव्यक्ति पद्धति को सामाजिक वाद-विवाद के नाम से भी पुकारा जाता है। प्रो० बाइनिंग तथा बाइनिंग ने वाद-विवाद के विषयों की योजना चार प्रकार की बतलाई है जो इस प्रकार है—

(१) औपचारिक वर्ग-योजना (Formal Group Plan)
(२) अनौपचारिक-वर्ग-योजना (Informal Group Plan)
(३) आत्म-निर्देश वर्ग-योजना (Self-directing Group Plan)
(४) सेमीनार वर्ग योजना (Seminar Group Plan)

प्रथम के अन्तर्गत छात्र व्यवस्थित रूप से समस्याओं पर वाद-विवाद करते हैं। इसमें एक सभापति का निर्वाचन किया जाता है। यह छात्रों द्वारा ही निर्वाचित होता है। द्वितीय के अन्तर्गत कोई व्यवस्थित योजना नहीं होती। छात्र तथा शिक्षक स्वच्छन्द रूप से किसी भी समस्या पर विचार कर सकते हैं। इसमें समस्या व प्रस्ताव प्रस्तुत करने के लिए सभापति की आज्ञा लेना कोई आवश्यक नहीं है। तीसरे प्रकार की योजना में छात्र ही समस्याओं पर वाद-विवाद करके उनका स्वयं हल निकालते हैं। इसमें शिक्षक को बहुत कम बोलना पड़ता है। यह छोटी कक्षाओं के लिए उपयोगी नहीं है। विचार-गोष्ठी योजना में कोई समस्या किसी एक वर्ग को दे दी जाती है। यह वर्ग उसके विषय में पूर्ण अन्वेषण करके उसको वाद-विवाद तथा आलोचना के लिए विचार-गोष्ठी में रखता है। तब उस पर सब लोग अपने-अपने विचार प्रकट करेंगे। कुछ उसके पक्ष में बोलते हैं तथा कुछ विपक्ष में। अन्त में उस समस्या के निराकरण के लिए सुझाव दिए जाते हैं। यह विश्वविद्यालीय स्तर के लिए उपयोगी है। अर्थशास्त्र-शिक्षण में इसका प्रयोग अधोलिखित रूप से किया जा सकता है।

**उदाहरण**—

**प्रकरण**—'पारिवारिक बजट'

हाई स्कूल स्तर पर औपचारिक वर्ग-योजना को अपनाना लाभप्रद होगा। इससे एक विनय की समस्या उत्पन्न नहीं हो पावेगी। दूसरे छात्र विभिन्न सभाओं तथा समितियों का संगठन एवं संचालन की प्रक्रिया का ज्ञान प्राप्त कर लेंगे। शिक्षक आर्थिक दृष्टि से समाज के निम्न परिवारों के आधार पर छात्रों को अधोलिखित वर्गों में विभक्त करेगा—

(१) निर्धन परिवारों से सम्बन्धित वर्ग।

(२) मध्यम श्रेणी के परिवारों से सम्बन्धित वर्ग।

(३) धनी परिवारों से सम्बन्धित वर्ग।

इस वर्गीकरण के उपरान्त तीनों वर्ग एक सभापति का निर्वाचन करेंगे। वह सभा की कार्यावाही का संचालन करायेगा। तीनो वर्ग पृथक-पृथक रूप से परिवारों की आय के अनुसार खर्च की मदें मालूम करेंगे। इसके आधार पर पारिवारिक बजट की रूपरेखा तैयार की जायेगी।

**गुण**—(१) इसके द्वारा छात्र योजना बनाना सीख जाते हैं।

(२) इसके द्वारा छात्रों में उत्तरदायित्व पूर्ण करने तथा स्वस्थ चिन्तन की शक्ति उत्पन्न होती है।

(३) छात्रों मे आत्म-विश्वास उत्पन्न किया जाता है।

(४) छात्र वाद-विवाद में भाग लेना सीख जाते है।

(५) छात्रों में सहयोग की भावना विकसित की जाती है।

(६) इसके द्वारा छात्र आर्थिक समस्याओं को हल करना सीख जाते हैं।

(७) इस पद्धति के द्वारा शिक्षक अपने छात्रो के गुणों तथा दोषों को जानने में समर्थ होता है।

(८) यह पद्धति मनोवैज्ञानिक है। इसमें जो भी समस्या ली जाती है वह उनके जीवन से सम्बन्धित होती है और उनको उनकी रुचियों एवं प्रवृत्तियों के अनुकूल शिक्षा प्रदान की जाती है।

(९) छात्रों में शिक्षक तथा दूसरों के लिये आदर एवं सम्मान की भावना विकसित की जाती है।

(१०) इसके प्रयोग से आत्माभिव्यक्ति के लिए पर्याप्त अवसर प्राप्त होते हैं।

(११) छात्रों के समान उद्देश्यों एवं रुचियों की खोज की जाती है।

(१२) छात्रों में स्वतन्त्र विचारणा की नींव डाली जाती है।

(१३) छात्रों की प्रेरणा-शक्ति को प्रोत्साहित किया जाता है।

(१४) छात्र अपने विचारों तथा निर्णयों को संगठित एवं लिखित रूप में रखना सीख जाते है।

**दोष**—(१) इसके प्रयोग में कुछ थोड़े छात्र ही क्रियाशील हो पाते हैं।

(२) इसके द्वारा छात्र व्यर्थ के वाद-विवादों में भाग लेना सीख जाते हैं। और वितर्क की आदत पड़ जाती है।

(३) इसमें समय का दुरुपयोग बहुत होता है।

(४) इसके प्रयोग से पाठ्य-वस्तु का क्रमबद्ध ज्ञान प्राप्त नहीं हो पाता।

(१०) **निरीक्षित-अध्ययन पद्धति**—अमेरिका में इस पद्धति का प्रचलन १९वीं शताब्दी के अन्त में आरम्भ हो गया था। इसका प्रयोग परम्परागत पद्धति के दोषों को दूर करने के लिये किया गया। इस पद्धति का महत्त्व इसलिए भी बढ़ा कि इसके विपक्षियों ने भी इसका एक पृथक विधि के रूप में प्रयोग न करके अन्य पद्धतियों के साथ किया था। यह अध्ययन कक्षा या अध्ययनशाला में पूर्व निर्धारित कार्य के सम्बन्ध में किया जाता है और उनका शिक्षकों के द्वारा निरीक्षण एवं निर्देशन किया जाता है। इस पद्धति को निर्देशित-अध्ययन पद्धति (Directed Study Method) के नाम से भी पुकारा जाता है। सामाजिक विषयों के शिक्षण में यह पद्धति बहुत उपयोगी सिद्ध हुई है। इसलिए अर्थशास्त्र शिक्षण पद्धति में निरीक्षित-अध्ययन पद्धति को स्थान मिलना आवश्यक है। इसमें छात्रों को कार्य दे दिया जाता है। इसके उपरान्त छात्र अपने-अपने कार्य में संलग्न हो जाते है और शिक्षक उनके कार्य का निरीक्षण करता है। इसके अतिरिक्त वह निर्देशन भी प्रदान करता है। इसके लिए पृथक रूप से एक और शिक्षक भी नियुक्त किया जा सकता है। छात्र शिक्षक से अपनी कठिनाइयों एवं समस्याओं का समाधान कराते रहते हैं। कुछ विद्वानों का मत है कि इस पद्धति के प्रयोगों से छात्रों की शिक्षालय की समस्त क्रियाओं का निरीक्षण एवं निर्देशन किया जाता है। परन्तु यह ठीक सा प्रतीत नही होता।

**प्रयोग**—प्रो० बाइनिंग तथा बाइनिंग [1] ने इस प्रयोग के लिए अधोलिखित योजनाएँ प्रस्तुत की हैं—

(१) सम्मेलन योजना (Conference Plan)

(२) विशिष्ट शिक्षक योजना (Special Teacher Plan)

(३) काल-विभाजन योजना (Divided Period Plan)

(४) द्वि-काल योजना (Double Period Plan)

---

1 A. C. Binning and D. H. Binning, 'Teaching the Social Studies in Secondary School's, Page,—112-16.

(५) सामयिक योजना (Periodical Plan)

(१) **सम्मेलन योजना**—इस पद्धति के द्वारा पिछड़े हुए बालकों की शिक्षा बहुत ही उपयुक्त ढंग से हो जाती है। इसमें उन बालकों की शिक्षा के लिये प्रबन्ध किया जाता है जो कक्षा के अन्य विद्यार्थियों के साथ नहीं चल पाते। शिक्षक प्रतिदिन स्कूल में रहता है जो शिक्षक समय के बाद इनको इस पद्धति द्वारा शिक्षा प्रदान करता है।

(२) **विशिष्ट शिक्षक योजना**—यह योजना सम्मेलन योजना से सम्बन्धित है। इसमें छात्र को विशिष्ट अध्यापक या अतिरिक्त शिक्षक नियुक्त करके सहायता प्रदान की जाती है। इसके द्वारा छात्रों को अतिरिक्त अध्ययन एवं निर्देशन प्राप्त हो जाता है।

(३) **काल-विभाजन योजना**—इस योजना के अन्तर्गत छात्रों को अध्ययन के हेतु कार्य दे दिया जाता है और उसका निर्देशन एक शिक्षक द्वारा किया जाता है तथा निरीक्षण दूसरे शिक्षक द्वारा। यह योजना बहुत मितव्ययी है, क्योंकि निरीशण करने वाला शिक्षक कम से कम समय में बहुत से छात्रों की कठिनायों एवं सीमाओं को जानने में समर्थ हो जाता है और इसी प्रकार निर्देशन करने वाला अध्यापक भी कम समय में अधिक से अधिक बालकों को निर्देशन कर देता है।

(४) **द्वि-काल योजना**—इसमें एक ही पाठ्य-वस्तु द्वि-समय-चक्रों (Double Periods) के लिये प्रदान कर दी जाती है। प्रथम समय-चक्र में छात्रों को निर्धारित कार्य से सम्बन्धित बातों का ज्ञान कराया जाता है तथा दूसरे में वे निरीक्षित या निर्देशित अध्ययन करते हैं। मेबेलइ सिम्पसन ने ९० मिनट के अन्दर समय को अधोलिखित रूप में विभक्त किया है[1] :—

पुनर्निरीक्षण ..... .....२५ मिनट
कार्य निर्धारण .....२५ मिनट
शारीरिक व्यायाम.....५ मिनट
निर्धारित कार्य का अध्ययन....३५ मिनट

---

1. The Review . ..... 25 Minutes
The Assignment ..... .. 25 Minutes
Physical Exercises ..... ..... 5 Minutes
Study of Assignment..... .. 35 Minutes
Mabel E. Simpson, Quoted by Binning and Binning in his book 'Teaching the Social Studies in Secondary Schools', page 115.

**(५) सामयिक योजना**—निरीक्षित अध्ययन की यह योजना क्रमिक रूप से प्रयुक्त न करके सामयिक रूप से प्रयोग में लायी जाती है। शिक्षक इसका प्रयोग महीने में एक या दो बार कर सकता है।

उदाहरण—

**प्रकरण**—'माँग तथा पूर्त्ति का नियम'

अध्यापक इस पद्धति के प्रयोग के लिए छात्रों को दो भागो में विभक्त कर सकता है अर्थात् पिछड़े बालकों का वर्ग तथा सामान्य बालकों का। दूसरे वह समस्त छात्रों को एक वर्ग के रूप में रखकर अपने कार्य का निर्धारण करेगा। माँग तथा पूर्त्ति के विषय में शिक्षक सर्वप्रथम पूरी कक्षा के समक्ष एक सूक्ष्म विवेचना प्रस्तुत करेगा। इसके उपरान्त व्यवहार में आने वाली वस्तुओं की माँग तथा पूर्त्ति की दृष्टि से पाठ्य-वस्तु की ओर इंगित करेगा तत्पश्चात् इसके अध्ययन के लिए अध्ययन सामग्री के सूत्रों को बताएगा। इस जानकारी के उपरान्त छात्र अपने-अपने कार्य में संलग्न हो जायगा। अध्यापक निरीक्षण करेगा और उनकी वैयक्तिक एवं सामूहिक दोनों ही रूप से कठिनाइयों एवं समस्याओं का समाधान करेगा।

**गुण**—(१) इस पद्धति का सबसे प्रमुख गुण यह है कि इसके प्रयोग से वैयक्तिक-भिन्नता के अनुकूल शिक्षा प्रदान की जाती है।

(२) इसके द्वारा गुरु तथा शिष्य के सम्बन्ध उत्तम हो जाते है।

(३) इसके प्रयोग से छात्रों में विभिन्न कुशलताओं, गुणों तथा आदतों का विकास हो जाता है।

(४) इसके द्वारा पिछड़े हुए बालकों को शिक्षा उपयुक्त ढंग से दी जाती है।

(५) यह पद्धति विनय की समस्या का हल करने में बहुत सहायक है।

**दोष तथा सीमाएँ**—(१) इस पद्धति के लिए अधिक समय की अपेक्षा है।

(२) यह व्यय-साध्य एवं कष्ट-साध्य दोनों ही है।

(३) इसके द्वारा छात्रों की आत्म-निर्भरता पर आघात पहुँचता है।

**अर्थशास्त्र की शिक्षण विधियों को देखने के उपरान्त हम कह सकते हैं कि अर्थशास्त्र की शिक्षा के उद्देश्यों की पूर्त्ति किसी एक विधि केअवलम्बन से नहीं हो सकती है। अतः अर्थशास्त्र के शिक्षक का परम कर्त्तव्य हो जाता है कि वह**

विषयानुसार, छात्रों के मानसिक स्तर, रुचियों तथा आवश्यकताओं के अनुकूल इन पद्धतियों का प्रयोग सतर्कता के साथ करे। यदि वह सतर्क नहीं रहेगा तो वह अपने उद्देश्यों की पूर्त्ति में सफल नहीं हो सकता।

## QUESTIONS

1. What are the methods of teaching Economics ? Which method will you prefer and why ?

2. What do you mean by Socilized Recitation Method and how it can be practised in Economics teaching ?

3. Distinguish Pro ect and Problem Method. Give their use in the teaching of Economics.

4. Which method do you think better for High School classes and why ? Give reasons in the support of your answer ?

5. Discuss the importance use of Supersised study Method in the teaching of Economics.

6. What kind of traditional methods are used in the teaching of Economics ?

अध्याय ५

# अर्थशास्त्र-शिक्षण की रीतियाँ

## (Techniques of Teaching Economics)

"All techniques should be in line with the democratic process and relate to the goals desired in the study of a topic. Techniques are employed for getting the learning under way with guidence from the teacher. They should be selected as a means of serving the best purpose at a particular time with the resultant of growth for the individual."—M. P. Moffatt. ('Social Study Instruction')

गत अध्याय में उन पद्धतियों का वर्णन किया गया है जो अर्थशास्त्र-शिक्षण के लिये प्रयोग में लायी जाती हैं। इन पद्धतियों के अन्तर्गत कुछ विशिष्ट रीतियों का प्रयोग अर्थशास्त्र के अध्यापन में किया जाता है। ये रीतियाँ ज्ञानार्जन में बहुत ही उपयोगी सिद्ध होती हैं। विभिन्न रीतियाँ, विभिन्न उद्देश्यों के लिये, भिन्न-भिन्न अवसरों पर प्रयोग में लायी जाती है। वस्तुतः इन सबका अभिप्राय ज्ञानार्जन को प्रभावशाली, ग्राह्य, बोधगम्य एवं रोचक बनाना होता है। अर्थशास्त्र-शिक्षण में अधोलिखित रीतियाँ प्रयोग में लायी जाती हैं :—

(१) प्रश्न रीति (Questioning Technique)
(२) अभ्यास रीति (Drill Technique)
(३) कहानी-कथन-रीति (Story-telling Technique)

(४) कार्य-निर्धारण रीति (Assignment Technique)

(५) कथन रीति (Narration Technique)

(६) अवलोकन रीति (Observation Technique)

(७) नाटकीय रीति (Dramatising Technique)

(८) उदाहरण रीति (Illustration Technique)

(९) परीक्षा रीति (Examination Technique)

(१) **प्रश्न रीति**— अर्थशास्त्र शिक्षण में प्रश्न रीति का बहुत महत्त्वपूर्ण स्थान है। इसके द्वारा सीखने की प्रक्रिया को प्रभावोत्पादक बनाया जाता है। प्रश्नों का परम्परागत ध्येय बालक के ज्ञान का जाँचना था। परन्तु आधुनिक शैक्षिक प्रक्रिया में प्रश्न महत्त्वपूर्ण स्थान रखते हैं तथा इस रीति के द्वारा बहुत से प्रयोजनों की पूर्त्ति की जाती है। प्रश्नों के मुख्य प्रयोजनों को नीचे दिया जा रहा है—

(१) छात्रों में कार्य के प्रति कौतूहल एवं रुचि जाग्रत करना।

(२) सीखने की प्रक्रिया में इनके द्वारा पथ-प्रदर्शन करना।

(३) विचार-प्रक्रिया को प्रोत्साहित करना।

(४) निर्धारित कार्य के लिये उत्प्रेरणा प्रदान करना।

(५) छात्रों की आवश्यकताओं, अभिरुचियों तथा तात्कालिक समस्याओं का ज्ञान प्राप्त करना।

(६) कार्य के मुख्य बिन्दुओं पर प्रकाश डालना।

(७) छात्रों के अर्जित ज्ञान तथा उन्नति को मापना।

(८) आर्थिक जीवन की समस्याओं को समझने के लिए उनके मस्तिष्क को तत्पर बनाना।

(९) अन्वेषण तथा अनुसंधान के लिए प्रोत्साहित करना।

(१०) प्रश्नों के द्वारा तथ्यों का ज्ञान तथा अनुभवों को व्यवस्थित करने में सहायता प्रदान करना।

(११) मौखिक रूप में अभिव्यंजना शक्ति का विकास करना।

(१२) छात्रों के दोषों तथा कठिनाइयों का पता लगाना।

(१३) छात्रों को ज्ञान के पुनर्विलोकन तथा प्रयोग के अवसर प्रदान करना।

(१४) वैयक्तिक शिक्षा प्रदान करना।

**प्रश्नों का वर्गीकरण**—मानसिक प्रक्रियाओं के आधार के अनुसार हम प्रश्नों का अधोलिखित रूप से वर्गीकरण कर सकते हैं। इस प्रकार के प्रश्नों के द्वारा मानसिक प्रक्रियाएँ उत्तर देते समय उत्तेजित एवं प्रखर होती हैं—

(१) स्मृत्यात्मक प्रश्न।
(२) तर्कात्मक प्रश्न।
(३) सूचनात्मक प्रश्न।
(४) परीक्षात्मक प्रश्न।
(५) तुलनात्मक प्रश्न।
(६) विचारात्मक प्रश्न।
(७) व्याख्यात्मक प्रश्न।
(८) निर्णयात्मक प्रश्न।
(९) विश्लेषणात्मक प्रश्न।

शिक्षण प्रक्रिया के आधार पर प्रश्नों को अधोलिखित वर्गों में विभाजित किया जा सकता है—

(अ) प्रस्तावनात्मक प्रश्न।
(ब) विकासात्मक प्रश्न।
(स) पुनर्वृत्यात्मक प्रश्न।

एक अन्य आधार (१) के अनुसार प्रश्नों का वर्गीकरण निम्नलिखित ढंग से भी किया जा सकता है—

(१) विवरणात्मक।
(२) प्रकरणात्मक।
(३) समस्यात्मक।

## अर्थशास्त्र-शिक्षण में प्रयुक्त होने वाले प्रश्नों के प्रकार एवं लक्षण

**(अ) प्रस्तावनात्मक प्रश्न**—ये प्रश्न छात्रों के नवीन ज्ञान को पूर्वज्ञान से सम्बन्धित करने की दृष्टि से पूछे जाते हैं। दूसरे शब्दों में कह सकते हैं कि इनका मुख्य ध्येय छात्रों के पूर्वज्ञान की परीक्षा लेना होता है। उदाहरणार्थ—'उत्पत्ति एवं उसके ढंग' नामक प्रकरण में प्रस्तावनात्मक प्रश्न इस प्रकार पूछे जाते हैं—

(१) मनुष्य की मुख्य-मुख्य आवश्यकताएँ कौन-कौन सी है? (रोटी, कपड़ा, मकान आदि)

(२) इन आवश्यकताओं की पूर्ति किस साधन के द्वारा की जाती है ? (धन)

(३) किसान धन किस प्रकार कमाता है ? (अनाज उत्पन्न करके)

**(ब) विकासात्मक प्रश्न**—इस प्रकार के प्रश्नों की सहायता से प्रस्तावित पाठ को विकसित किया जाता है। उपर्युक्त प्रस्तावित प्रकरण इस प्रकार के प्रश्नों द्वारा विकसित किया जा सकता है—

(१) कुम्हार मिट्टी कहाँ से प्राप्त करता है ? (गड्ढों से)

(२) मिट्टी किसकी देन है ? (प्रकृति)

(३) कुम्हार मिट्टी से क्या बनाता है ? (बर्तन)

(४) कुम्हार ने मिट्टी से बर्तन बनाने में क्या किया ? (मिट्टी का रूप परिवर्तित किया)

(५) इस परिवर्तित स्वरूप से पहिले हमारे लिये मिट्टी की उपयोगिता क्या थी ? (कुछ नहीं)

(६) बर्तन बनाने से मिट्टी की उपयोगिता पर क्या प्रभाव पड़ा। (उपयोगिता में वृद्धि)

(७) कुम्हार ने इसमें किस नवीन पदार्थ की उत्पत्ति की। (कुछ नहीं)

(८) लकड़ी किसकी देन है ? (प्रकृति)

(९) बढ़ई लकडी की मेज किस प्रकार बनाता है ?

(१०) बढ़ई ने इसमें किस नवीन पदार्थ की डत्पत्ति की है ?

(११) बढई ने लकड़ी की मेज बनाकर क्या किया ?

(१२) इससे आप किस निष्कर्ष पर पहुँचते हो ? (मनुष्य कोई नवीन पदार्थ नहीं बना सकता) वरन् वह केवल विद्यमान पदार्थ की उपयोगिता में वृद्धि कर सकता है)।

अध्यापक अपने कथन के द्वारा यह बतायेगा कि अर्थशास्त्र में इसी उपयोगिता वृद्धि को 'उत्पत्ति' कहते हैं।

**(स) विचारात्मक या विचारोत्तेजक प्रश्न**—इन प्रश्नो के द्वारा छात्रों के मस्तिष्क को विचारने के लिए क्रियाशील बनाया जाता है। 'उत्पत्ति तथा उसके ढंग' नामक प्रकरण में अधोलिखित विचारात्मक प्रश्न पूछे जा सकते हैं—

(१) चमार चमड़े की उपयोगिता कैसे बढ़ाता है ?

(२) बढ़ई लकड़ी की उपयोगिता किस प्रकार बढ़ाता है ?

**(द) पुनर्वृत्यात्मक प्रश्न**—ऐसे प्रश्न पाठ की आवृति मे सहायक सिद्ध होते हैं। ऐसे प्रश्नों को पाठ की प्रत्येक अन्विति के पश्चात् पूछा जाता है।

इनके द्वारा पाठ के प्रमुख तथ्यों को दोहराया जाता है। दूसरे इनके द्वारा छात्रों को पाठ की मुख्य बातों को समझने एवं आत्मसात् करने का अवसर प्रदान किया जाता है। उदाहरण के लिए 'विनिमय के रूपों' की विवेचना के उपरान्त अधोलिखित प्रश्न किये जा सकते हैं—

(१) विनिमय से तुम क्या अर्थ समझते हो ?

(२) वस्तु-विनिमय में मनुष्य को क्या-क्या कठिनाइयाँ उठानी पड़ती हैं ?

(३) इन कठिनाइयों को मनुष्य ने किस प्रकार दूर किया ?

(४) रुपये के प्रचलन से मनुष्य वस्तुएँ किस प्रकार बदलते हैं ?

**(य) परीक्षात्मक या बोध प्रश्न**—इनके द्वारा छात्रों के अर्जित ज्ञान की परीक्षा ली जाती है। इनका ध्येय यह जानना होता है कि बालकों ने पठित-वस्तु को किस हद तक आत्मसात् कर लिया है। उदाहरण के लिए निकृष्ट मुद्रा परिचलन के नियम की विवेचना करने के उपरान्त शिक्षक इस प्रकार के प्रश्न पूछ सकता है—

(१) निकृष्ट मुद्रा परिचलन नियम किसने प्रतिपादित किया ?

(२) इस नियम का अभिप्राय क्या है ?

(३) यह नियम किन-किन दशाओं में लागू होता है ?

(४) इस नियम की क्या-क्या सीमाएँ है ?

**(र) समस्यात्मक प्रश्न**—इस प्रकार के प्रश्न पाठ के प्रारम्भ या अन्त में पूछे जा सकते हैं। प्रारम्भ में इस प्रकार के प्रश्नों द्वारा छात्रों के समक्ष एक समस्या उत्पन्न कर दी जाती है जिससे बालकों का मस्तिष्क उसके समाधान के लिए उत्तेजित हो जाता है। उदाहरणार्थ—'कारखानों का स्थानीयकरण क्यों होता है ?' 'भारतीय किसान निर्धन क्यों है ?' आदि।

## प्रश्न रीति में ध्यान देने योग्य बातें

(१) प्रश्न निश्चित, सरल एवं संक्षिप्त होने चाहिएँ।

(२) साधारण एवं सरल भाषा में स्पष्ट रूप से प्रस्तुत किये जायँ।

(३) प्रश्नों की भाषा बालक के मानसिक स्तर तथा शारीरिक विकास-स्तर के अनुकूल हो।

(४) प्रश्न का एक मुख्य अभिप्राय हो।

(५) प्रश्न समस्त छात्रों को चिन्तन करने के लिए प्रोत्साहित करे, चाहे उत्तर एक से ही पूछा जाय।

(६) प्रश्न एक केन्द्रीय विचार से सम्बन्धित हो।

(७) अर्थशास्त्र-शिक्षण में प्रत्यक्ष प्रश्न जिनमें उत्तर 'हां' या 'नहीं' में आता हो, प्रतिध्वन्यात्मक तथा अनिर्दिष्टात्मक प्रश्नों का प्रयुक्त नहीं करना चाहिए। उदाहरणार्थ—

क्या डाक्टर को अर्थशास्त्र की दृष्टि से एक उत्पादक कहा जा सकता है ?

आवश्यकताओं की पूर्त्ति के लिए धन का उपयोग ही अर्थशास्त्र में उपभोग कहलाता है। उपभोग किसे कहते हैं ?

(८) शिक्षक का प्रश्न करने का ढंग ऐसा हो कि वह परिणामों की प्रभावोत्पादकता पर प्रत्यक्ष रूप से प्रकाश डाले।

(९) प्रश्न पर्याप्त आत्मविश्वास के साथ पूछे जाने चाहिएँ।

(१०) प्रश्नों को दुहराना दोषपूर्ण है।

(११) प्रश्न सजीवता, स्फूर्ति एवं तारतम्य के साथ किये जायें।

(१२) प्रश्नों का वितरण समस्त कक्षा में किया जाय जिससे छात्रों का व्यक्तिगत रूप से सहयोग प्राप्त किया जा सके। शिक्षक इस बात का भी ध्यान रखे कि उस छात्र से भी प्रश्न पूछे जायें जो कार्य में अरुचि दिखा रहा है।

(१३) प्रश्न करने के उपरान्त बालकों को सोचने के लिए समय दिया जाय।

(१४) शिक्षक प्रथमतः समस्त कक्षा के समक्ष अपना प्रश्न रखे और उसके प्रश्चात् किसी भी बालक को उसका उत्तर देने के लिए सम्बोधित करे।

**(२) अभ्यास रीति**—यह रीति थार्नडाइक के अभ्यास के नियम पर आधारित है। इस नियम के अनुसार बालक किसी तथ्य की जितनी बार आवृति करेगा वह उतना ही उसके मस्तिष्क में स्थायी बनेगा। इस प्रकार अभ्यास शब्द का तात्पर्य पुनर्वृत्यात्मक या आवृतिमूलक कार्यों से है, जिनमें बिना किसी प्रयास के बालक अभिव्यक्ति करता है। एम० पी० मुफात (M. P. Moffatt) का कहना है कि अभ्यास के द्वारा बालकों में आदतों का निर्माण, कुशलताओं की प्राप्ति तथा उनको किसी परीक्षा के लिए तत्पर बनाया जा सकता है। अभ्यास रीति का अर्थशास्त्र-शिक्षा में कितनी सीमा तक प्रयोग किया जा सकता है—यह पाठ्य-सामग्री के ऊपर निर्भर है। जितने उस पाठ्य-सामग्री में स्मरण तथा ग्रहण करने के लिए अवसर होंगे, उतनी ही सीमा तक इस रीति का उपयोग किया जा सकता है। अर्थशास्त्र में हम इस रीति का प्रयोग किसी प्रकरण की रूपरेखा को ग्रहण करने, किसी प्रश्न के

उत्तर को स्मरण करने, रेखाचित्र, मानचित्र (जिनमें विभिन्न फसलें, मार्ग, कारखाने आदि प्रस्तुत किए जायें) रिपोर्ट आदि तैयार करने के लिए कर सकते हैं। आर्थिक पदों की परिभाषा एवं नियमों को समझने एवं ग्रहण करने के लिए भी इस रीति का सफलतापूर्वक प्रयोग किया जा सकता है।

(३) **कहानी-कथन-रीति**—इसमें कहानी कहना, बातचीत करना, भाषण देना आदि बातों का समावेश होता है, क्योंकि इन सब में वाणी का उपयोग करना पड़ता है। अर्थशास्त्र-शिक्षण में इस रीति का प्रचलन बहुत कम है। इसका मुख्य कारण शिक्षकों के द्वारा इसकी उपयोगिता को न समझना है। परन्तु यह रीति छात्रों की कल्पना-प्रियता एवं कौतूहल की भावना को तृप्त करने में बहुत सहायक होती है। अर्थशास्त्र-शिक्षण में इस रीति का उपयोग लाभकारी होगा। अर्थशास्त्र का शिक्षक इस रीति का उपयोग ग्रामीण समस्याओं, भारतीय जीवन के रहन-सहन के स्तर तथा उपयोगिता ह्रास नियम के अध्यापन में कर सकता है। इस रीति के द्वारा वह बालकों के ध्यान को अपनी ओर आकर्षित करने में सफल हो सकता है। अफलातून ने इस रीति को बालकों की शिक्षा के लिए बहुत ही उपयोगी बतलाया था। यह रीति मनोवैज्ञानिक है, क्योंकि कल्पना की उड़ान में बालकों की बहुत सी नैसर्गिक प्रवृत्तियों का अनजान में ही विकास किया जा सकता है। इस रीति का उपयोग करते समय अर्थशास्त्र के शिक्षक को अधोलिखित बातों का ध्यान रखना चाहिए—

(१) कहानी कहने का ढंग रुचिकर, स्वाभाविक तथा भावपूर्ण होना चाहिए अर्थात् उसमें कृत्रिमता नहीं आनी चाहिए।

(२) अध्यापक जिस कहानी को अपने छात्रों को सुनाना चाहता है उसकी पाठ्य-वस्तु पर उसका पूर्ण अधिकार हो। इसके अतिरिक्त उसे वह कहानी छात्रों के समक्ष मौखिक रूप से प्रस्तुत करनी चाहिए। वह उसे पढ़कर न सुनाए।

(३) कहानी की भाषा, शैली तथा विषय-वस्तु बालकों के मानसिक स्तर, रुचि, अवस्था एवं स्वाभाविक प्रवृतियों के अनुसार होनी चाहिए।

(४) कहानी की विषय-वस्तु को छात्रों के आर्थिक जीवन से सम्बन्धित किया जाय।

(५) कहानी सुनाते समय शिक्षक को अपने मुख्य ध्येय को नहीं भुलाना चाहिए।

(६) कहानी को क्रमानुसार सुनाया जाय।

(७) शिक्षक को कहानी सुनाने में छात्रों की सहायता लेनी चाहिए। उनको सतर्क तथा सक्रिय बनाये रखने के तथा अपनी शिक्षण-वस्तु को बोधगम्य बनाने के लिए प्रश्नों का भी उपयोग करते रहना चाहिए। इस प्रकार छात्रों की कल्पना एवं चिन्तन-शक्तियों का विकास किया जा सकता है।

(४) **कार्य-निर्धारण रीति**—शिक्षण-कला में कार्य-निर्धारण एक प्रयोगात्मक रीति है। सामान्यतः इसका प्रयोग पाठ की समाप्ति के उपरान्त किया जाता है। परन्तु इसका प्रयोग पाठ के आदि में भी किया जा सकता है। कार्य-निर्धारण दो प्रकार का होता है। प्रथम, परम्परागत कार्य-निर्धारण, जो पाठ्य-पुस्तकों पर आधारित होता है तथा दूसरा आधुनिक कार्य-निर्धारण जो छात्रों की रुचियों, आवश्यकताओं तथा योग्यताओं पर आधारित होता है। दुर्भाग्यवश भारतवर्ष में प्रथम प्रकार के कार्य-निर्धारण को ही अपनाया जाता है। इसीलिए इस रीति की कटु आलोचना की गई है। आलोचकों का कथन है कि इसके द्वारा बालकों के स्वाभाविक मानसिक विकास में बाधा पहुँचती है। इस कारण उनका जीवन नीरस व शुष्क बन जाता है। इसके द्वारा छात्रों के स्वास्थ्य को भी हानि पहुँचायी जाती है। परन्तु ये दोष कार्य-निर्धारण रीति के नहीं हैं वरन् उसके प्रयोग के हैं। यदि कार्य-निर्धारण बालकों की रुचियों, आवश्यकताओं एवं प्रवृत्तियों के अनुसार किया जाय तो ये दोष दूर हो सकते हैं। अर्थशास्त्र-शिक्षण में द्वितीय प्रकार के कार्य-निर्धारण का ही उपयोग किया जाना चाहिए। आधुनिक कार्य-निर्धारण में छात्रों को योजनाओं, समस्याओं, इकाईयों की सूची में से अपनी योग्यता, रुचि तथा आवश्यकता के अनुसार उन्हें चुनना पड़ता है। इनका विकेन्द्रीकरण छोटे-छोटे प्रकरणों, क्रियाओं तथा मुख्य प्रतिवेदन कार्य-निर्धारणों के रूप में किया जा सकता है। एम० पी० मुफात का कथन है कि—"आज का कार्य-निर्धारण एक ऐसी क्रिया या कार्य है जिससे कार्य करने के सम्बन्ध में बालक या बालकों के वर्ग तथा शिक्षक में समझौता रहता है।"[1] उसने आगे लिखा है कि कार्य-निर्धारण के लिए अभ्यास-पुस्तिकाएँ, गाइडशीट, स्क्रेप बुक्स तथा रूपरेखाओं के बनाने के कार्य दिए जाएँ। यदि पाठ्य-पुस्तकों के आधार पर ही कार्य-निर्धारण किया जाय तो वह ऐसा होना चाहिए जिससे छात्रों को विचार करने के लिए अवसर

1. "To-day's assignment might be defined as an agreement between the pupil (or group) and the teacher of work to be done."—M. P. Moffatt.

बान किए जाएँ। इस रीति के द्वारा अर्थशास्त्र का शिक्षक सीखने की प्रक्रिया ो प्रभावोत्पादक बना सकता है। अर्थशास्त्र में आधुनिक कार्य-निर्धारण रीति ा उपयोग निम्नलिखित कार्य देकर किया जा सकता है—

**योजनाएँ**—(१) हमारा भोजन

(२) हमारा ग्राम

(३) सहकारी संघ की दुकान

(४) सहकारी बैंक

(५) सिंचाई के साधन

**समस्याएँ**—(१) मानव ने आर्थिक उन्नति किस प्रकार की है ?

(२) भारतवर्ष में खाद्यान्न का अभाव क्यों है ?

(३) भारतीय किसान निर्धन क्यों है ?

(४) भारतीय श्रमिकों की हीन दशा क्यों है ?

(५) भारत में रहन-सहन का स्तर निम्न क्यों है ?

(५) **कथन-रीति**—कथन के द्वारा बालक पर्याप्त मात्रा में ज्ञान अर्जित करता है। बालकों की रुचियों तथा उनकी सीखने की प्रक्रिया को इस रीति के द्वारा प्रोत्साहित किया जाता है। कथन का मुख्य लक्ष्य छात्रों को किसी अप्रत्यक्ष वस्तु का ज्ञान प्रदान करना है। इस रीति के द्वारा वर्णित वस्तु या सामग्री को सरल, सुगम, स्पष्ट तथा सुबोध बनाया जा सकता है। प्रत्येक बात या तथ्य प्रश्नों द्वारा बालकों से नहीं निकलवाया जा सकता। अतः प्रश्नोत्तर रीति की पूर्ति 'कथन' द्वारा की जाती है। जब न प्रश्न पूछने से तथा न व्याख्या करने से, हमारा मन्तव्य सफल होता है तब उस समय कथन हमारी सहायता करता है। सामाजिक विषयों के शिक्षण में इस रीति का प्रयोग बहुत लाभकारी सिद्ध हुआ है। अर्थशास्त्र के शिक्षक को इस रीति का कुशलता एवं सतर्कता के साथ प्रयोग करना चाहिये। अध्यापक को इस रीति का प्रयोग करते समय अधोलिखित बातों का ध्यान रखना चाहिए—

(१) कथन बालकों की आयु तथा मानसिक स्तर के अनुसार होना चाहिए तथा शिक्षक कथन करते समय उनके अवधान विस्तार का ध्यान रखे।

(२) कथन अधिक लम्बे न हों तथा शिक्षक को उनके बाहुल्य पर भी रोक लगानी चाहिए।

(३) कथन की भाषा तथा शैली छात्रों के मानसिक स्तर तथा आयु के अनुकूल होनी चाहिए।

(४) कथन करते समय शिक्षक को प्रश्नोत्तर रीति, तथा सहायक सामग्रियों का भी उपयोग करना चाहिए।

(६) **अवलोकन-रीति**—निरीक्षण ज्ञानार्जन का वह सुबोध एवं प्रभावशाली साधन है जिसके द्वारा बालक स्वयं क्रियाशील रहकर किसी वस्तु या तथ्य का पता लगा सकता है। जो ज्ञान बालक अवलोकन द्वारा प्राप्त करता है, वह स्थायी होता है तथा उसके सम्पूर्ण ज्ञान का एक अंग बन जाता है। अर्थशास्त्र-शिक्षण में इस रीति के प्रयोग से छात्रों के आर्थिक जीवन से सम्बन्ध स्थापित किया जा सकता है। इसमें छात्रों की अवलोकन, निर्णय, चिन्तन, आत्मबोधन तथा स्वतन्त्रतापूर्वक व्यंजना शक्ति का विकास होता है। अर्थशास्त्र-शिक्षण में इस रीति के उपयोग के लिए बहुत अवसर प्राप्त है। इसका उपयोग अधिक होना चाहिए। परन्तु दुर्भाग्यवश हमारे देश के शिक्षालयों में इसका प्रयोग किञ्चित भी नहीं किया जाता। उद्योगों, माँग-पूर्त्ति के नियम, मूल्य-निर्धारण बाजार व बैंक-व्यवस्था आदि का ज्ञान इस रीति के प्रयोग से सरलतापूर्वक करा सकते है। अर्थशास्त्र के शिक्षक को इस रीति का प्रयोग करते समय अधोलिखित बातो पर ध्यान देना आवश्यक है—

(१) निरीक्षण कराते समय शिक्षक छात्रों को स्वतन्त्रतापूर्वक निरीक्षण करने की आज्ञा दे दे; परन्तु साथ ही साथ उनका पथ-प्रदर्शन एवं उनके कार्यों का निरीक्षण करता रहे।

(२) निरीक्षण की जिस स्थिति का चयन किया जाय, उसका चयन बालकों के मानसिक स्तर को ध्यान में रखकर करना चाहिए।

(३) शिक्षक जिस उद्योग, या कारखाने या बाजार का छात्रों को निरीक्षण कराना चाहता है उसे उनको दिखाने से पूर्व उसका स्वयं निरीक्षण कर लेना चाहिए।

(४) निरीक्षण के हेतु चयन की हुई परिस्थितियाँ छात्रों के आर्थिक जीवन से सम्बन्धित हों।

(५) निरीक्षण काल में शिक्षक उनके प्रश्नों का भी उत्तर देता रहे तथा उनसे स्वयं प्रश्न करता रहे। परन्तु प्रश्न ऐसे होने चाहिएँ जिनसे छात्रों को विषय-वस्तु के ज्ञानार्जन में सहायता मिले तथा वे उसका पूर्ण ज्ञान प्राप्त कर सकें।

(६) निरीक्षण करने के पश्चात् अध्यापक छात्रों के ज्ञान की परीक्षा ले तथा सम्बन्धित विषय पर एक छोटा सा वाद-विवाद करवा दे। तदुपरान्त उसे स्वयं विषय की गहन, सूक्ष्म एवं विस्तृत विवेचना करनी चाहिए। इसके पश्चात् छात्रो से उसके विषय में लिखवाये।

(७) **उदाहरण रीति**—मौखिक शिक्षण में इस रीति का विशेष महत्त्व है। उदाहरणों के द्वारा शिक्षक पाठ को रोचक तथा ग्राह्य बनाने में समर्थ होता है। आधुनिक शिक्षा में इन उदाहरणों पर अधिक बल दिया जा रहा है। इनके द्वारा छात्रों की रुचि एवं ध्यान को आकृष्ट करने में सहायता मिलती है। इनके प्रयोग से छात्रों का मानसिक विकास किया जा सकता है। इस कारण हमारी सरकार इनके ऊपर बहुत ध्यान दे रही है। हमारा केन्द्रीय शिक्षा-विभाग शिक्षालयों को विभिन्न प्रकार के प्रदर्शनात्मक उदाहरण प्रदान कर रहा है, जिनके द्वारा पाठ्य-वस्तु को बनाया जाता है। इन उदाहरणों का अर्थशास्त्र-शिक्षण में ही महत्त्वपूर्ण स्थान नहीं है वरन् सभी विषयों में है। उदाहरणों को अधोलिखित श्रेणियों में विभक्त किया जा सकता है :-

(१) मौखिक उदाहरण (Oral Illustrations)
(२) प्रदर्शनात्मक उदाहरण (Visual Illustrations)
(३) लाक्षणिक उदाहरण (Symbolic Illustrations)

(१) **मौखिक उदाहरण**—इन उदाहरणों का उपयोग सूक्ष्म तथा सामान्य सिद्धान्तों की व्याख्या करने के लिए होता है। अर्थशास्त्र-शिक्षण में इन उदाहरणों का मुख्य प्रयोग जटिल नियमों एवं विचारो के स्पष्टीकरण के लिए किया जाता है। शिक्षक को इनका उपयोग करते समय यह ध्यान रखना चाहिए कि वे सरल एवं ग्राह्य हो। उदाहरण छात्रो के व्यावहारिक जीवन से सम्बन्धित होने चाहिएँ तथा पाठ में इनकी बाहुल्यता भी नहीं होनी चाहिए।

(२) **प्रदर्शनात्मक उदाहरण**—इनका उपयोग बालकों की कल्पना-शक्ति को विकसित करने के लिए किया जाता है। इनका अर्थशास्त्र-शिक्षण में महत्त्वपूर्ण स्थान है क्योंकि ये बालकों के अवधान को प्रत्यक्ष रूप से आकर्षित करते है। इन उदाहरणों में विषय-वस्तु का स्थूल रूप प्रतिपादित किया जाता है। इनके द्वारा अर्थशास्त्र की प्रयोगशाला या विशेष कक्ष में प्रभावोत्पादक एवं उपयुक्त वातावरण स्थापित किया जा सकता है। अर्थशास्त्र-शिक्षण में अधोलिखित प्रदर्शनात्मक उदाहरण प्रयोग में लाये जा सकते हैं—

(१) चित्र (Pictures)
(२) प्रतिरूप (Models)
(३) रेखाकृति (Diagrams)
(४) मानचित्र (Maps)
(५) चार्ट (Chart)
(६) ग्राफ़ (Graph)
(७) रेखाचित्र (Sketches)

(३) **लाक्षणिक उदाहरण**—इनके अन्तर्गत वे उदाहरण आते हैं जो अर्थशास्त्र के तथ्यों को समझाने के लिए शिक्षक द्वारा विभिन्न ढाँचों के रूप में प्रयोग में लाये जाते है। ये सांकेतिक होते हैं, क्योंकि ये तथ्यों के सम्बन्ध को प्रकट करते है।

उपर्युक्त उदाहरणों का विस्तृत विवेचन पृथक रूप से अगले अध्याय में किया जायगा।

(८) **नाटकीय या अभिनय रीति**–इस रीति के प्रयोग से छात्रों की सृजनात्मक शक्तियों का विकास किया जाता है। शिक्षण मे इस रीति का प्रयोग आधुनिकतम है। अर्थशास्त्र-शिक्षण में इस रीति के उपयोग के लिए कम अवसर मिलते है। फिर भी अर्थशास्त्र का शिक्षक कुछ पाठों को इस रीति की सहायता से पढ़ा सकता है। उदाहरणार्थ—बाजार, ग्रामीण-समस्याएं, विनिमय आदि। इसके द्वारा छात्रों को स्वक्रिया द्वारा शिक्षा प्राप्त करने के लिए अनेक अवसर प्रदान किये जाते है। इस रीति के प्रयोग से पाठ की सूक्ष्मातिसूक्ष्म विवेचना हो जाती है। इसमें छात्र क्रियाशील रहते है। यह बालको की इन्द्रियो को शिक्षित एवं प्रफुल्लित करती है। इसके द्वारा कर्णेन्द्रिय, नेत्रों तथा हाथों को भी शिक्षित किया जाता है। इसके अतिरिक्त इसके द्वारा छात्रों में विषय-ग्राह्यता, आत्मविश्वास तथा आत्माभिव्यंजना शक्ति विकसित की जाती है। इसके द्वारा उनकी झिझक तथा लज्जाशील प्रवृति को कम किया जाता है। इसके अतिरिक्त बालक बोलने की कला (Art of Speaking) भी सीख लेते है। अर्थशास्त्र में इस रीति के प्रयोग के लिये इन प्रमुख बातों पर ध्यान देना आवश्यक है—

(१) इस रीति का उपयोग वे ही शिक्षक करें जो अभिनय-कला से पूर्ण परिचित हों।

(२) आर्थिक जीवन की समस्याओं को इस रीति के द्वारा सुस्पष्ट एवं बोधगम्य बनाया जाय।

(३) जिस विषय-वस्तु का कक्षा में अभिनय कराना है, उसके सम्बन्ध में प्राप्त सभी सूचनाओं से छात्रों को अवगत करा देना चाहिए, जिससे वे उन सूचनाओं को व्यवस्थित कर सकें। शिक्षक को इस व्यवस्थित सामग्री को छात्रों के सहयोग से सम्वादों के रूप में परिवर्तित कर देना चाहिए।

(४) इस क्रिया में सभी छात्रों को समान रूप से भाग लेने के लिये प्रोत्साहित करना चाहिए।

(६) **परीक्षा रीति**—यह रीति पाठ्य-क्रम के समस्त विषयो के शिक्षण में अपना महत्त्वपूर्ण स्थान रखती है। इसके द्वारा बालकों के अर्जित ज्ञान की परीक्षा ली जाती है कि उसने पठित सामग्री को किस सीमा तक आत्मसात् कर लिया है। शिक्षक इसके प्रयोग में लिखित तथा मौखिक प्रश्नों की सहायता लेता है। इसका सबसे प्रमुख लाभ यह होता है कि शिक्षक को अपने पाठ की सफलता का ज्ञान हो जाता है तथा छात्र भी अपनी कमियो की जानकारी प्राप्त कर लेता है। इस रीति को प्रयोग में लाते समय अर्थशास्त्र के शिक्षक को निम्नलिखित बातो पर ध्यान देना चाहिए—

(१) प्रश्नो में अधिकाधिक वस्तुनिष्ठता लानी चाहिए।

(२) प्रश्न सरल भाषा में प्रस्तुत किये जाने चाहिएँ। इसके अतिरिक्त प्रश्न संक्षिप्त नपे-तुले एवं नुकीले हों।

(३) प्रश्न प्रस्तावित पाठों के अधिकाधिक क्षेत्र पर आधारित होने चाहिएँ अर्थात् कुछ मुख्य पाठो पर ही आधारित नहीं हो वरन् उनका क्षेत्र विस्तृत हो।

(४) प्रश्नों का अंकन निष्पक्ष भाव से किया जाना चाहिए अर्थात् उसमें पक्षपात के लिये कोई स्थान नही होना चाहिए।

(५) छात्रों की कठिनाइयों एवं अशुद्धियों को दूर करना चाहिए। इसके लिये शिक्षक को उनकी पुस्तिकाओं में टिप्पणी लिख देना चाहिए।

## QUESTIONS

1. What are the special techniques and teaching aids to be used in teaching Economics ? Illustrate. (B. T. 1956, 58.)

(उत्तर : संकेत—अर्थशास्त्र-शिक्षण की सहायक सामग्रियों के लिये अध्याय ६ देखना होगा।)

2 What would be your aids and techniques for the teaching of Economics at the High School stage so as to make the subject more realistic and interesting ? (B. T. 1959, 60.)

अध्याय ६

# अर्थशास्त्र-शिक्षण में सहायक-सामग्री

## (Aids to the Teaching of Economics)

"The teacher must strive to Economics realistic, vital and interesting through variety in methods and procedures through the intelligent adaptation to the interests and abilities of the class, and through the planned and appropriate use of teaching aids." —M. P. Moffatt. ('Social Studies Instruction.')

एक समय था जब कि शिक्षालय एक ऐसी संस्था थी जिसमें शिक्षण-कार्य स्वयं शिक्षक द्वारा मौखिक रूप से किया जाता था। उसको किसी भी अन्य साधन से इस कार्य में सहायता नहीं मिलती थी और बालक निष्क्रिय श्रोता बना बैठा रहता था। वर्तमान शिक्षाशास्त्री इस विचारधारा के विरोधी हैं। उनका मत है कि बालक निष्क्रिय रहकर ज्ञान की प्राप्ति नहीं कर सकता, इसलिए उसे सदैव सक्रिय बनाये रखने की चेष्टा करनी चाहिए। ज्ञानेन्द्रियाँ ज्ञानार्जन के मुख्य द्वार हैं, अतः इन द्वारों को सक्रिय रखने के हेतु विभिन्न पद्धतियाँ अपनाई जाती है जिनके द्वारा बालक स्वक्रिया करके सीख सके। पद्धति वह सत्य मार्ग है जिसके द्वारा मानव अपने निर्दिष्ट स्थान पर पहुँचने में समर्थ होता है। पद्धति को सफल तथा रोचक बनाने के लिए हम विभिन्न साधनों का प्रयोग करते हैं। ये विभिन्न साधन ही शिक्षण की सहायक सामग्री कहलाते हैं। सहायक सामग्री शिक्षा के वे साधन हैं जिनके द्वारा छात्रों के निमित्त दुर्बोध पाठ्य-वस्तु को सरल, स्पष्ट, सुबोध एवं रोचक बनाया जाता

है। इसके अतिरिक्त इन साधनों के प्रयोग से छात्रों के अवधान को पाठ्य-वस्तु की ओर आकर्षित करके बालक को क्रियाशील बनाया जाता है, जिससे वह सक्रिय रहकर ज्ञान की प्राप्ति कर सके। अर्थशास्त्र के शिक्षक के पास उन साधनों का भण्डार है जिनके प्रयोग से वह अपनी विषय-वस्तु को सरल तथा सुबोध बना सकता है और विषय में अपने छात्रों की रुचि को जाग्रत कर सकता है। इन साधनों में उदाहरण एक महत्त्वपूर्ण साधन है। उदाहरण का तात्पर्य है--प्रकाश डालना और शिक्षण-कार्य में उदाहरण का अर्थ बालकों के दुर्बोध एवं कठिन बिन्दुओं का स्पष्टीकरण करना है। अच्छे उदाहरण दुरुह तथा जटिल कथन को सरल, सजीव, बोधगम्य तथा सरस बना देते हैं, क्योंकि ये इन्द्रियों को सम्बोधित करते हैं और इन्द्रियों द्वारा ग्रहण किया हुआ ज्ञान स्थायी होता है। इस प्रकार सहायक-सामग्री का अर्थ देखने के उपरान्त हमारे समक्ष यह प्रश्न उठता है कि अर्थशास्त्र-शिक्षण में प्रयुक्त की जाने वाली सहायक-सामग्री कौन-कौनसी है ? इसको हम सुविधानुसार अधोलिखित भागों में विभाजित कर सकते हैं—

**(अ) परम्परागत सहायक-सामग्री**[1]—उदाहरणार्थ—पाठ्य-पुस्तक, श्याम-पट, तालिका, पत्र-पत्रिकाएँ आदि।

**(ब) प्रदर्शनात्मक सामग्री**[2]—उदाहरणार्थ—चित्र, मानचित्र, ग्राफ, रेखाचित्र तथा रेखाकृति, चार्ट तथा मॉडल।

**(स) श्रव्य-दृश्य सामग्री**[3]—उदाहरणार्थ, रेडियो, समाचार-सम्बन्धी फिल्म, चलचित्र आदि।

## (अ) परम्परागत सामग्री

**(१) पाठ्य-पुस्तक**—लेखन-कला के उद्गम से पूर्व शिक्षा व्याख्यान-प्रणाली से प्रदान की जाती थी। शिक्षक अपने मुख से बालकों के कानों तक ज्ञान पहुँचाता था। जब से लेखन-कला का अभ्युदय हुआ तब से पुस्तकों का निर्माण कार्य प्रारम्भ हुआ, परन्तु पुस्तकों का महत्त्वपूर्ण प्रयोग मुद्रण-यन्त्र के आविष्कार के पश्चात् हुआ। कोमेनियस ने सर्वप्रथम पाठ्य-पुस्तक लिखी जो भाषा-शिक्षण के निमित्त थी। इन्हीं महानुभाव ने प्रत्येक स्तर पर पाठ्य-पुस्तकों के प्रयोग के लिए बल दिया।

---

1. Traditional Aids.
2. Visual Aids.
3. Audio-Visual Aids.

**पाठ्य-पुस्तक का महत्त्व**—भारतीय शिक्षालयों में पाठ्य-पुस्तक को बहुत महत्त्वपूर्ण स्थान प्राप्त है। पाठ्य-पुस्तक के माध्यम से छात्र विभिन्न विद्वानों, अन्वेषकों तथा मनीषियों के संचित विचारों को प्राप्त करते हैं। शिक्षक का यह महत्त्वपूर्ण उपादान है जिसके द्वारा वह ज्ञानार्जन करा सकता है। पाठ्य-पुस्तक के विरुद्ध विद्वानों का मत है कि इस उपकरण के द्वारा छात्रों में रटने की प्रवृत्ति का विकास होता है। उन्हें स्वतन्त्र तथा स्वस्थ चिन्तन, तर्क तथा निर्णय के हेतु अवसर प्राप्त नहीं हो पाते है। इन तर्कों में सत्यता अवश्य दिखाई देती है, परन्तु ये दोष उसके दुरुपयोग के कारण उत्पन्न होते हैं। पाठ्य-पुस्तक की आवश्यकता तो हमें किलपैट्रिक तथा मौरिसन की योजना एवं इकाई विधियों में भी होती है। इकाई की पूर्ण तैयारी के लिए पाठ्य-पुस्तक अत्यन्त आवश्यक है। प्रो० कीटिंग (Keating) के मतानुसार "पाठ्य-पुस्तक शिक्षण का आधा यन्त्र है।"[1] हर्ल आर० डगलस (Harl R. Douglas) ने पाठ्य-पुस्तकों के महत्त्व को इस प्रकार प्रदर्शित किया है, "शिक्षकों के बहुमत ने अन्तिम विश्लेषण के आधार पर पाठ्य-पुस्तक को 'वे क्या और किस प्रकार पढ़ायेंगे' की आधार-शिला बतलाया है।"[2] प्रो० बार (Barr) तथा बर्टन (Burton) ने पाठ्य-पुस्तक के विषय में कहा है कि—"संयुक्त राष्ट्र अमेरिका में पाठ्य- पुस्तक एक महत्त्वपूर्ण शैक्षिक साधन है।"[3] यदि यह कथन अमेरिका के विषय में सत्य है तो हम कह सकते हैं कि यह भारतवर्ष के लिए नितान्त सत्य है।

**पाठ्य-पुस्तकों की विशेषताएँ**—(१) इनके द्वारा छात्रों के समय की बचत होती है। उन्हें इनमें ज्ञानराशि का संचित रूप एक स्थान पर प्राप्त हो जाता है। बालक इनका अध्ययन करके कम से कम समय में अधिकाधिक ज्ञानार्जन कर लेता है।

(२) पाठ्य-पुस्तकें शिक्षकों तथा छात्रों को विद्वानों के विचारों एवं अनुभवों को प्रदान करती है। वे इन अनुभवों से लाभ उठाने में समर्थ होते हैं।

(३) पाठ्य-पुस्तकों के द्वारा छात्रों में स्वाध्ययन की आदत की नींव डाली जाती है।

---

1. "Text book is half of the apparatus of teaching."

2. "In the last analysis. with great majority, the text book is a potent determinent of what and how they will teach."

3. "The text book is probably the most important tool in this country. ( U. S. A. )."

(४) इनके द्वारा बालकों को विषय सम्बन्धी पाठ्य-क्रम की रूपरेखा का क्रमबद्ध, सुव्यवस्थित तथा सुस्पष्ट ज्ञान प्रदान किया जाता है। इस प्रकार पाठ्य-पुस्तकों की एक प्रमुख विशेषता उनकी सुनिश्चितता है। इनके द्वारा छात्र एवं अध्यापक दोनो ही पाठ्य-क्रम की गति का अनुमान निश्चित रूप से प्राप्त कर लेते हैं। इस कारण छात्र तथा शिक्षक दोनों उस सीमा से बाहर नहीं जा पाते हैं।

(५) इनके द्वारा छात्रो की सीमाओं का ज्ञान उपलब्ध हो जाता है।

**अर्थशास्त्र की पाठ्य-पुस्तकों का आलोचनात्मक अध्ययन**—अर्थशास्त्र की वर्तमान पाठ्य-पुस्तको पर दृष्टिपात करने मे उनमे अधोलिखित दोष पाये जाते है—

(१) पाठ्य-पुस्तको की तैयारी मे पाठ्य-वस्तु का चयन, व्यवस्था आदि छात्रों के मानसिक स्तर, आयु, रुचि तथा योग्यता के अनुसार नहीं पाई जाती।

(२) पाठ्य-पुस्तकों में अमूर्त्त विचारो का बाहुल्य पाया जाता है। इस कारण शिक्षक तथा छात्र दोनो ही उनके प्रति अरुचि प्रकट करते है।

(३) पाठ्य-पुस्तकों का एक मुख्य दोष यह है कि उनकी योजना अर्थशास्त्र की शिक्षण-विधियों के अनुसार नही की जाती। उदाहरणार्थ—यदि शिक्षालय में अर्थशास्त्र के शिक्षण के लिए योजना तथा समस्या विधियों को अपनाया गया है तो पुस्तकें इन्ही विधियों के अनुसार लिखी जानी चाहियें, जिससे छात्र तथा शिक्षक अपनी समस्याओं तथा योजनाओं को हल करने में पाठ्य-पुस्तक का उपयोग सफलतापूर्वक कर सकें। परन्तु अर्थशास्त्र की पाठ्य-पुस्तकों में इसका प्रायः अभाव पाया जाता है।

(४) अर्थशास्त्र की वर्तमान पाठ्य-पुस्तको में भाषा तथा शैली का भी एक दोष पाया जाता है। इनका प्रयोग छात्रों के मानसिक स्तर, आयु तथा शाब्दिक ज्ञान के अनुसार नही किया गया है।

(५) पाठ्य-पुस्तकों मे विषय-वस्तु का प्रस्तुतीकरण छात्रों के मानसिक एव सांवेगिक स्तर के अनुकूल नहीं है। हमारी वर्तमान पाठ्य-पुस्तकों में विषय-वस्तु का प्रस्तुतीकरण निबन्धात्मक ढंग से किया गया है।

(६) अर्थशास्त्र की पाठ्य-पुस्तकें अधिकतर परीक्षा की दृष्टि से लिखी गई हैं।

(७) उनमें तालिकाओं, आँकड़ों, उदाहरणों तथा चित्रों का उपयोग बहुत कम किया गया है। जो भी उदाहरण आदि प्रयुक्त किये गये हैं वे छात्रों की रुचि तथा मानसिक स्तर के अनुकूल नहीं हैं।

(८) पाठ्य-पुस्तकों की साज-सज्जा प्रायः अमनोवैज्ञानिक होती है।

(९) पाठ्य-पुस्तकें देश तथा समाज की माँगों की पूर्ति करने में असमर्थ पाई जाती है।

(१०) पाठ्य-पुस्तकों में भारतीय आर्थिक जीवन के दृष्टिकोण तथा व्यावहारिक पक्ष की पूर्णतया अवहेलना की गई है।

## चयन के मूलभूत सिद्धान्त

अर्थशास्त्र की पाठ्य-पुस्तक के चयन में शिक्षक को अधोलिखित बातों का विशेष ध्यान रखना चाहिए—

**(१) पाठ्य-वस्तु का चयन एवं व्यवस्था—**

**(अ) छात्रों की दृष्टि से**—उनकी रुचि, अवस्था, योग्यता, मानसिक स्तर, प्रवृत्तियों, अभिरुचियों तथा सावेगिक स्तर के अनुकूल।

**(ब) समाज की दृष्टि से**—पाठ्य-वस्तु का चयन समाज की दृष्टि से होना चाहिए जिससे पाठ्य-पुस्तकें समाज के आर्थिक विकास एवं उन्नति के लिए देश के नागरिकों में नवजागरण का संचार कर सकें।

(स) पाठ्य-वस्तु की व्यवस्था छात्रों के मानसिक एवं सांवेगिक स्तर के अनुकूल होनी चाहिए।

(द) समस्याओं एवं शिक्षण-विधियों के अनुकूल व्यवस्था की जाय।

(य) पाठ्य-वस्तु में मनोवैज्ञानिक क्रम स्थापित किया जाय।

**(२) पाठ्य-पुस्तक की बाह्य-आकृति**—टाइप, जिल्द, कागज, पंक्तियों की संख्या, शब्दों के बीच की दूरी, आकार, मारजिन की चौड़ाई आदि।

**(३) विषय-सूची**—उनकी ग्राह्यता, महत्त्व तथा क्षेत्र।

**(४) शैक्षिक साधन**—अभ्यास के लिए प्रश्न, निर्देश, सहायक पुस्तकों की सूची, अनुक्रमणिका, प्रस्तावना आदि की यथार्थता तथा उनकी उपयुक्तता।

**(५) उदाहरण**—शाब्दिक तथा प्रदर्शनात्मक उदाहरण—सूचीपत्र, तालिकाएँ, ग्राफ, रेखाचित्र एवं रेखाकृतियाँ, मानचित्र, आँकड़ों, उद्धरणों एवं संदर्भों की शुद्धता, उपयुक्तता तथा पर्याप्त संख्या

**(६) प्रस्तुतीकरण**—(अ) जिसके द्वारा छात्रों में स्वाध्ययन की आदतों का निर्माण एवं कुशलताओं का विकास हो सके ।

(ब) दूसरे विषयों की पाठ्य-वस्तु से सह-सम्बन्ध स्थापित किया जा सके ।

(स) वर्ग तथा वैयक्तिक विभिन्नताओं की संतुष्टि करता हो ।

(द) सीखने के नियमों के अनुकूल हो ।

(य) निर्देशित अध्ययन के लिए अवसर प्रदान करने वाला हो ।

(र) शिक्षण-सूत्रों के अनुकूल हो ।

(ल) छात्रों की विषय के प्रति रुचि जागृत करे ।

(म) छात्रों के मानसिक एवं सांवेगिक स्तर के अनुकूल हो ।

(प) छात्रों के मानसिक विकास में सहायक हो ।

**(७) लेखक** —उसके विचारों की स्पष्टवादिता, मौलिकता एवं निष्पक्षता; उसका अनुभव एवं प्रसिद्धि, योग्यता तथा प्रकाशन और मनोविज्ञान का ज्ञान तथा प्रशिक्षण ।

**(८) पुस्तक का मूल्य ।**

**अर्थशास्त्र की पाठ्य-पुस्तकों के मूल्यांकन के लिए मापदण्ड**[1]

(Scale for Evaluating Textbooks of Economics,)

**प्रकाशन सामग्री**—(१) पुस्तक का नाम (Title of book)

(२) लेखक या लेखकगण

(३) प्रकाशक

(४) पृष्ठों की संख्या

(५) पुस्तक का मूल्य

(६) कॉपीराइट की तिथि

**संख्यात्मक वर्ग-क्रम** (Numerical Rating)

| १ | २ | ३ | ४ | ५ |
|---|---|---|---|---|
| बहुत निकृष्ट | निकृष्ट | सामान्य | अच्छा | बहुत अच्छा |

**(अ) पुस्तकों के यांत्रिक तत्त्व**—(१) पुस्तक का आकार तथा साज-सज्जा

(२) जिल्द की सुदृढ़ता

---

1. On the lines of a suggested "Scale for Evaluating Textbooks in the Social studies"—Arthur C. Binning and David H. Binning in 'Teaching the social Studies in Secondary schools.' Page, 80 81.

(३) **कागज**
(४) छपाई
(५) **मारजिन की चौड़ाई**

**(ब) संगठन**—(१) पाठों का संगठन
(२) पाठों का तर्क-सम्मत विभाजन
(३) पाठों की सम्बद्धता
(४) क्रम-बद्धता
(५) सारांश
(६) मौलिक एकता (Fundamental Unity)

**(स) प्रस्तुतीकरण**—(१) शैली
(२) भाषा
(३) स्थूलता
(४) निष्पक्षता
(५) प्रायोगिक शब्दावली
(६) आधुनिक तथा पूर्ण (Up-to-date)

**(द) उदाहरण**—(१) शुद्धता
(२) वस्तु-निष्ठता
(३) गुणात्मकता
(४) उपयुक्तता
(५) आर्थिक जीवन मे सम्बन्ध
(६) अनुपात
(७) स्पष्टता

**(य) मानचित्र, चार्ट तथा ग्राफ**—(१) शुद्धता
(२) स्थूलना
(३) संख्या
(४) आकार
(५) उपयुक्तता
(६) अनुपात
(७) महत्त्व

**(र) अभ्यासार्थ प्रश्न**—(१) पाठ्य-वस्तु से सम्बन्ध
(२) **उनकी व्यापकता**

(३) शिक्षक तथा छात्रों की दृष्टि से उपयोगिता
(४) उनकी प्रेरणात्मक शक्ति
(५) उनका व्यवस्थापन
(६) उनकी वस्तु-निष्ठता (Objectivity)
(७) उनकी विश्वसनीयता (Validity)

**(ल) निर्देशन एवं विशेष अध्ययनयोग्य पुस्तकें :** (References & Bibliography)--(१) व्यावहारिकता
(२) शिक्षक की दृष्टि से महत्त्व
(३) छात्रों की दृष्टि से महत्त्व
(४) विषय-सामग्री के प्रकार
(५) नवीन तथा पूर्ण

**(व) परिशिष्ट तथा अनुक्रमणिका**—(१) व्यवस्थापन
(२) विषय-सूची
(३) व्यावहारिकता
(४) पूर्णता
(५) महत्त्व

कुल योग.....

## अर्थशास्त्र की पाठ्य-पुस्तक कैसी हो ?

अर्थशास्त्र की पाठ्य-पुस्तक में अधोलिखित गुण होने आवश्यक है—

(१) पुस्तक की बाह्य आकृति सुन्दर, आकर्षक एवं सचित्र हो।

(२) पाठ्य-पुस्तक की जिल्द सुदृढ़ हो।

(३) पुस्तक में उत्तम प्रकार का कागज प्रयुक्त किया जाय। अर्थशास्त्र की पाठ्य-पुस्तक में आर्ट पेपर प्रयुक्त किया जाना चाहिए, क्योंकि इसमें प्रदर्शनात्मक सामग्री का उपयोग आवश्यक है। पुस्तक का टाइप छात्रों की अवस्था के अनुकूल हो। छपाई साफ तथा शुद्ध होनी चाहिए।

(४) पाठ्य-पुस्तकों की रचना अधोलिखित बातों को ध्यान में रखकर की गई हो—

( i ) पाठ्य-पुस्तक की विषय-वस्तु छात्रों की वयस्कता, रुचि तथा मानसिक स्तर के अनुसार होनी चाहिए।

( ii ) मौखिक उदाहरण उनका आर्थिक जीवन तथा उनकी आयु के अनुकूल होने चाहिएँ ।

( iii ) पाठ्य-पुस्तकों में प्रयुक्त प्रदर्शनात्मक सामग्री में शुद्धता तथा उपयुक्तता होनी चाहिए ।

( iv ) पाठ्य-पुस्तकों में सारिणी, तालिका तथा आँकड़ों का विवरण उपयुक्त ढंग से प्रस्तुत किया जाय ।

( v ) पाठों में व्यवस्था स्थापित की जाय ।

( vi ) पाठ्य-पुस्तक में भाषा तथा शैली सरल एवं छात्रों के अनुकूल हो ।

(vii ) अर्थशास्त्र के नियमों का स्पष्टीकरण ग्राफ, रेखाकृतियों एवं रेखाचित्रों द्वारा किया जाय ।

(viii) पाठ्य-पुस्तक में उद्धरणों तथा संदर्भो का उपयोग यथास्थान होना चाहिए ।

(५) पुस्तक में पाठ्य-वस्तु निर्धारित पाठ्य-क्रम के अनुसार पूर्ण हो ।

(६) पाठ्य-पुस्तक का प्रस्तुतीकरण ऐसे ढंग से किया जाय जिससे बालकों में योजनाओं, समस्याओं आदि को हल करने की योग्यता स्वतः आ जाय तथा स्वाध्ययन की आदत का निर्माण हो ।

(७) अर्थशास्त्र की पाठ्य-पुस्तक अर्थशास्त्र शिक्षण के उद्देश्यो की पूर्त्ति में सहायक हो ।

(८) पुस्तक की प्रस्तावना ऐसी होनी चाहिए जिसे देखकर पाठक उसके गुणो तथा पाठ्य-विषयों के विषय में संक्षिप्त ज्ञान प्राप्त कर सकें ।

(१०) पाठ्य-पुस्तक मौलिक तथा प्रतिभा-सम्पन्न लेखक द्वारा लिखी गई हो ।

(११) उसमें सहायक तथा निर्देश पुस्तकों की सूची दी गई हो ।

(१२) पाठ्य-पुस्तक का मूल्य भी यथोचित कम होना चाहिए ।

**(२) श्याम पट**—यह शिक्षण का एक महत्त्वपूर्ण उपादान है । इसके द्वारा अर्थशास्त्र का शिक्षक छात्रों की दो इन्द्रियों को एक साथ क्रियाशील रखता है, जिससे बालक ज्ञान के ग्रहण करने में सफल होते है और कक्षा में सक्रिय बने रहते है । अर्थशास्त्र का शिक्षक इसका प्रयोग अधोलिखित बातो के लिए कर सकता है—

(१) आर्थिक नियमों व सिद्धान्तों को अङ्कित करने के लिए।

(२) आर्थिक पदों की परिभाषा देने के लिए।

(३) योजना की रूपरेखा लिखने के लिए।

(४) आर्थिक नियमों के स्पष्टीकरण के लिए रेखाचित्र तथा रेखाकृतियों की रचना के हेतु।

(५) सारांश देने के लिए।

(६) मुख्य निर्देश देने के निमित्त।

(७) चार्ट, ग्राफ आदि प्रदर्शित करने के लिए।

(८) महत्त्वपूर्ण प्रश्न पूछने के लिए।

(९) गृहकार्य देने के लिये।

(१०) किसी वस्तु या तथ्य का सम्बन्ध स्पष्ट करने के लिए।

अर्थशास्त्र के शिक्षक को श्यामपट का प्रयोग करते समय निम्नलिखित बातों का ध्यान रखना चाहिए—

(१) श्यामपट पर सुन्दर, आकर्षक एवं एकसा लिखना चाहिए। इसके अतिरिक्त जो भी बात वह श्यामपट पर लिखे वह क्रम से होनी चाहिए, जिससे छात्रों में भी क्रम में लिखने की आदत का निर्माण हो जाय।

(२) श्यामपट पर लिखे शब्दों का आकार ऐसा हो जो समस्त कक्षा को सरलता से दिखाई दे जाय।

(३) श्यामपट पर खींचे गये रेखाचित्र व रेखाकृतियाँ स्पष्ट एवं शुद्ध हों। इसका अर्थ यह नहीं है कि अर्थशास्त्र का शिक्षक कला का ज्ञाता हो। परन्तु उसे यह ध्यान रखना चाहिए कि जो भी रेखाकृतियाँ श्यामपट पर खींची जाँय वे अनुमानतः शुद्ध हों तथा उनको खीचने में अधिक समय भी नहीं लगाया जाय। इससे विनय की समस्या के उत्पन्न होने की सम्भावना रहती है।

(४) श्यामपट पर सारांश संक्षिप्त रूप में लिखना चाहिए।

(३) तालिकाएँ (Tables)—अर्थशास्त्र-शिक्षण में तालिकाओं का महत्त्व इस कारण है कि प्रायः ये अनेक नियमों व सिद्धान्तों के प्रतिपादन एवं स्पष्टीकरण में आधार का कार्य करती है। विभिन्न रेखाचित्रों तथा ग्राफों के खीचने में तालिकाओं की सहायता ली जाती है। इनमें विभिन्न वस्तुओं के, परिस्थिति-विशेष में मात्रा, सम्बन्धी आँकड़े दिये हुए होते है। तालिकाओं का

प्रयोग तुलनात्मक अध्ययन में बहुत सहायक होता है। उदाहरणार्थ—उपयोगिता-ह्रास-नियम को अधोलिखित तालिका की सहायता से स्पष्ट किया जा सकता है—

| रोटी की इकाइयाँ | उपयोगिता की इकाइयाँ | कुल उपयोगिता |
|---|---|---|
| १ | २० | २० |
| २ | १५ | ३५ |
| ३ | ११ | ४६ |
| ४ | ६ | ५२ |
| ५ | १ | ५३ |

(४) **पत्र-पत्रिकाएँ**—अर्थशास्त्र-शिक्षण में समाचारपत्र तथा जनरल और पीरियोडिकलस् (Journal & Periodicals) का बहुत महत्त्वपूर्ण स्थान है। प्रगतिशील शिक्षा ने इनके महत्त्व को और अधिक बढ़ा दिया है। अर्थशास्त्र की ज्ञान प्राप्ति के लिए ये बहुत महत्त्वपूर्ण उपादान हैं। इनसे छात्रों को तत्कालीन घटनाओं एवं सूचनाओं की प्राप्ति होती है। ये पाठ्य-पुस्तकों में संचित ज्ञानराशि को नवीन एवं पूर्ण बनाने का कार्य करती हैं। अन्य पत्रिकाओं से हमें आर्थिक क्षेत्र में हुए अन्वेषण एवं अनुसन्धान कार्यों की प्राप्ति होती है। इसके अतिरिक्त ये छात्रों को विभिन्न समस्याओं का आलोचनात्मक अध्ययन कराती हैं। इनके प्रयोग से छात्रों के मानसिक अन्तरिक्ष को व्यापक एवं वैज्ञानिक बनाया जाता है। सरकार की विभिन्न आर्थिक योजनाओं का ज्ञान हमें इनके द्वारा ही प्राप्त होता है। कॉलेज स्तर के लिए Eastern Economics, Modern Review आदि पत्रिकाओं का प्रयोग बहुत उपयोगी सिद्ध होगा। हाई स्कूल स्तर पर राज्य सरकार द्वारा प्रकाशित पत्रिकाओं का प्रयोग किया जाना चाहिए। उदाहरणार्थ—ग्राम पंचायत, सहकारिता आदि।

## (ब) प्रदर्शनात्मक सामग्री

(१) **चित्र**—अर्थशास्त्र-शिक्षण में चित्र भी बहुत महत्त्वपूर्ण स्थान रखते हैं। अर्थशास्त्र का शिक्षक इनका उपयोग बालको को वास्तविकता का ज्ञान देने, रुचि तथा प्रयास को जाग्रत करने, कल्पना-शक्ति को उद्‌बुद्ध करने तथा ग्राह्य-शक्ति को तीव्र बनाने के लिए कर सकता है। इस सामग्री के

प्रयोग से जटिल बिन्दुओं तथा प्रकरणों की शिक्षा को सरल एवं सुबोध बनाया जा सकता है। विभिन्न उद्योगों की कार्य-विधि, स्थानीयकरण के निर्धारक तत्त्वों, आर्थिक एवं सामाजिक विषमताओं, आदि का ज्ञान चित्रों के द्वारा स्पष्टता एवं सरलता के साथ दिया जा सकता है। अर्थशास्त्र के शिक्षक को चित्रों का प्रयोग करते समय अधोलिखित बातों का ध्यान रखना चाहिए—

(१) चित्र कक्षा के आकार के अनुपात में बनाये जायँ।

(२) चित्र जादूगर के समान नहीं प्रदर्शित किये जायें बल्कि अध्यापक उन पर प्रश्न करे तथा छात्रों को उन्हें देखने का पर्याप्त अवसर प्रदान करे।

(३) चित्रों का उपयोग उपयुक्त स्थान तथा समय पर ही होना चाहिए। अर्थशास्त्र के प्रत्येक पाठ के शिक्षण में चित्रों का प्रयोग उपयुक्त नही है। उसी पाठ में इनका उपयोग किया जाय जहाँ इनकी आवश्यकता हो।

(४) चित्र बालकों के आर्थिक जीवन से सम्बन्धित होने चाहिए।

(५) चित्र में शुद्धता, सजीवता, स्पष्टता एवं सुन्दरता का होना आवश्यक है।

(६) चित्र प्रमाणयुक्त होना चाहिए।

(७) अर्थशास्त्र-शिक्षण में चित्रो का प्रयोग बहुलता के साथ नहीं किया जाना चाहिए।

(८) इनका उपयोग निम्न कक्षाओं तक ही सीमित रहना चाहिए।

(९) पुनरावृत्ति की अवस्था पर विकासात्मक चित्र नहीं रहने चाहिए।

(२) **मानचित्र**—अर्थशास्त्र-शिक्षण में यह उपकरण भी परम उपयोगी है। यह उपकरण आर्थिक भूगोल के शिक्षण में बहुत ही सहायक होता है। इनके उपयोग के लिए आर्थिक भूगोल में बहुत अवसर है। शिक्षक इनके प्रयोग से भारत की विभिन्न वनस्पतियों, प्राकृतिक विभागो, मिट्टी, सिंचाई के साधनों, विभिन्न उपजों, खनिज पदार्थो, शक्ति के साधनों, उद्योग धन्धों, जनसंख्या का घनत्व यातायात के साधन तथा प्रसिद्ध एवं महत्त्वपूर्ण स्थानों तथा बन्दरगाहों का ज्ञान सरलता से करा सकता है। इनके प्रयोग से ये तथ्य सरल एवं सुबोध बना दिये जाते है। अतः अर्थशास्त्र के शिक्षक को मानचित्रों के निर्माण व चयन में सतर्कता के साथ कार्य करना चाहिए। इनके प्रयोग एवं चयन में निम्न लिखित बातों का ध्यान रखना आवश्यक है—

**(१) मानचित्रों का प्रयोग करते समय शिक्षक को उन्हीं अंगों पर ध्यान देना चाहिए जोकि पाठ्य-वस्तु से प्रत्यक्ष रूप से सम्बन्धित हैं। उदाहरणार्थ— यदि शिक्षक भारत के वन-प्रदेशों के विषय में अध्यापन कर रहा है तो मानचित्र में उन्हीं प्रदेशों को दिखाया जाय तथा छात्रों का ध्यान उन्हीं पर केन्द्रित कराया जाय। दूसरे, यदि वह भारत के शक्ति के साधनों के विषय में पढा रहा है तो मानचित्र में शक्ति के साधनों का वितरण दिखाया जाय।**

(२) विभिन्न स्थानों, उपजों आदि को मानचित्र मे केन्द्रित करते समय उनकी शुद्धता एव विश्वसनीयता का पूर्णतया ध्यान रखना चाहिए। इसके अतिरिक्त पूर्वनिर्मित मानचित्रों की वैधता एवं प्रामाणिकता की जाँच कर लेना भी अनिवार्य है।

(३) मानचित्र के पैमानो का निश्चित होना अनिवार्य है।

(४) मानचित्र मे दूरी को स्पष्ट करने मे सतर्कता बरतनी चाहिए।

(५) शिक्षक को मानचित्रो के निर्माण की प्रक्रिया का ज्ञान होना चाहिए जिससे वह अपने छात्रो की उनके निर्माण मे सहायता कर सके।

(६) यदि अर्थशास्त्र का शिक्षक मानचित्रो के उपयोग का वास्तविक लाभ उठाना चाहता है तो उसको बने हुए मानचित्रो का उपयोग कम करना चाहिए।

**(३) ग्राफ**—ग्राफ वह प्रदर्शनात्मक उपकरण है जिसके द्वारा उन सख्यात्मक स्थितियों को दृश्यात्मक बनाकर छात्रो के समक्ष प्रस्तुत किया जाता है, जो शब्दो या मानचित्रो के द्वारा व्यक्त नही किये जा सकते। उदाहरणार्थ - भारत की गत दस वर्ष की गन्ने की उपज को हम ग्राफ मे चित्रित करते है। **अर्थशास्त्र-शिक्षण** मे इस उपादान का प्रयोग बहुत ही लाभप्रद है। इसके प्रयोग से विषय की दुर्बोधता को दूर किया जा सकता है। इसके प्रयोग मे तुलनात्मक अध्ययन करने मे बहुत सहायता मिलती है। इसके अतिरिक्त हम किसी वस्तु की प्रगति एव पतन का शीघ्रातिशीघ्र पता लगा लेते है। आर्थिक भूगोल में इसके प्रयोग के बहुत से अवसर उपलब्ध है। अर्थशास्त्र मे नियमो की अमूर्त्तता को स्पष्ट करने के लिए इनका उपयोग बहुत लाभप्रद है। उदाहरणार्थ—उपभोक्ता की बचत, उपयोगिता का ह्रास-नियम आदि को इनके द्वारा सरलतापूर्वक स्पष्ट किया जा सकता है। नीचे पूर्वोल्लिखित तालिका के द्वारा बनाये हुए ग्राफ का उदाहरण दिया जा रहा है जो कि प्रतियोगिता के ह्रास-नियम को स्पष्ट करता है—

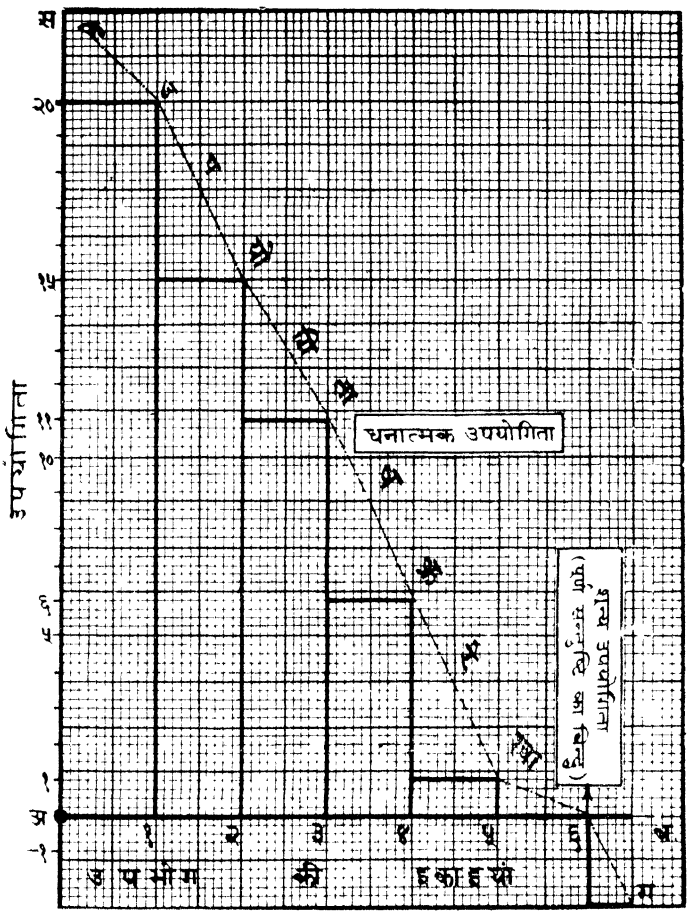


(४) रेखाचित्र तथा रेखाकृति (Sketches and Digrams)—अर्थशास्त्र-शिक्षण मे रेखाचित्र व रेखाकृतियों का बहुत महत्त्वपूर्ण स्थान है। इनके प्रयोग से विषय-वस्तु को सरल, सुगम तथा बोधगम्य बनाया जाता है। अर्थशास्त्र का शिक्षक आर्थिक नियमों को स्पष्ट करने के लिए इनका उपयोग कर सकता है। उदाहरणार्थ—उत्पत्ति, उपभोग, माँग तथा पूर्ति आदि के

नियमों को इनके द्वारा स्पष्ट किया जा सकता है। इनको मुख्यतः दो भागों में विभाजित किया किया जा सकता है। वे इस प्रकार हैं—

(१) वक्र रेखाएँ (Curves)

(२) समकोण चित्र (Rectangle Diagrams)

इनके द्वारा विभिन्न आर्थिक प्रवृतियों की अभिव्यक्ति की जा सकती है। अर्थशास्त्र के शिक्षक को इतना उपयोग अधोलिखित परिस्थितियों में ही करना चाहिए।

(१) जब आर्थिक नियमों व सिद्धान्तों का प्रस्तुतीकरण किया जाय। उदाहरणार्थ कुल उपयोगिता, सीमान्त उपयोगिता, उपयोगिता ह्रास-नियम, उपभोक्ता की बचत का सिद्धान्त, सम-सीमान्त उपयोगिता नियम, उत्पत्ति का ह्रास-नियम, उत्पत्ति समता नियम (Law of Constant Returns), प्रतिस्थापना का नियम (Law of substitution) माँग तथा पूर्ति का नियम, माँग की लोच, मूल्य निर्धारण का सिद्धान्त आदि।

(२) इनका उपयोग उस समय किया जाय जब छात्र पाठ्य-वस्तु को वर्णन द्वारा समझने में असमर्थ हों।

(३) जब छात्र पाठ के विकास में सक्रिय सहयोग प्रदान नहीं कर रहे हो।

(४) जब आर्थिक प्रवृतियों का प्रतिपादन करना हो।

(५) चार्ट (Chart)—अर्थशास्त्र-शिक्षण में चार्टों का महत्त्वपूर्ण स्थान है। इनके द्वारा छात्रों को विभिन्न घटनाओं तथा बातों का क्रमिक ज्ञान प्रदान किया जाता है। अर्थशास्त्र में इनके उपयोग के लिए बहुत से अवसर उपलब्ध हैं। उदाहरणार्थ—उपत्पत्ति के ढंग, द्रव्य के कार्य, विनिमय के स्वरूप, आवश्यकताओं का वर्गीकरण एवं लक्षण, उत्पत्ति के साधन आदि। यह उपादान विभिन्न वस्तुओं के सम्बन्धों को स्पष्ट करने में बहुत सहायक है। जो चार्ट प्रयुक्त किये जायें उनका सम्बन्ध छात्रों के आर्थिक जीवन से होना चाहिए—अर्थात् उनका चयन उनके आर्थिक जीवन की यथार्थ परिस्थितियो में से ही किया जाय, तभी वे अपने उद्देश्य को प्राप्त करने में सफल होंगे। इनका प्रयोग बहुलता के साथ नहीं करना चाहिए, वरन् जहाँ इनकी आवश्यकता हो वहीं करना चाहिए। प्रशिक्षण विद्यालयों के छात्राध्यायक निरर्थक में इनका प्रयोग करने लगते हैं क्योंकि उनके मस्तिष्क में यह भावना सदैव बनी रहती है कि हमारे पाठ में सहायक-सामग्री का उपयोग होना आवश्यक है। इस

कारण वे कोई न कोई चार्ट बनवा लेते हैं चाहे वह विषय-वस्तु बिना उसके प्रयोग के ही स्पष्ट हो जाय। इनका आकार कक्षा के अनुपात में होना चाहिए।

**(६) मॉडल**—शिक्षक को वास्तविक पदार्थों की उपलब्धि सदैव सम्भव नहीं होती। इस कारण उनकी प्रतिमूर्ति बनाकर या बनवाकर शिक्षक प्रयोग में ला सकता है। इनके द्वारा छात्रों को किसी वस्तु का भीतरी तथा वाह्य दोनों आकारों का सूक्ष्म ज्ञान प्रदान किया जा सकता है। परन्तु अर्थशास्त्र-शिक्षण में इनके उपयोग के लिए बहुत कम अवसर है। यदि अर्थशास्त्र के शिक्षक को भिलाई के इस्पात के कारखाने के विषय में पढ़ाना है तो वह उनको वहाँ ले जाकर उसके विषय में ज्ञान प्रदान कर सकता है। परन्तु प्रत्येक स्थान पर छात्रों को ले जाना व्ययसाध्य होगा। इस कारण अध्यापक उस कारखाने का मॉडल प्रयोग में ला सकता है और उसके विषय में ज्ञान दे सकता है। इसके अतिरिक्त माँग तथा पूर्त्ति के सम्बन्ध को मॉडल के प्रयोग द्वारा स्पष्ट कर सकता है। अध्यापक को अपने छात्रों को मॉडल बनाने के लिए प्रोत्साहित करना चाहिए, क्योंकि इससे एक तो उनकी रचनात्मक प्रवृतियो की संतुष्टि होगी। दूसरे उनके द्वारा बनाये गये प्रतिरूपो से अर्थशास्त्र का विशेष-कक्ष सुसज्जित होगा।

## (स) श्रव्य-दृश्य सामग्री

माइकेलिस (Michaelis) का विचार है कि श्रव्य-दृश्य सामग्री के उपयोग से छात्रों में धारणाएँ, अभिरुचियाँ, अनुभूतियाँ तथा रुचियाँ विकसित की जाती है। उन्होंने आगे कहा है कि इनके द्वारा छात्रों को वर्ग-योजना बनाने; स्वस्थ चिन्तन तथा विचार-प्रक्रिया, तथा तर्कशक्ति के प्रयोग के लिए स्थूल आधार प्रदान किये जाते है।[1] अमेरिका की राष्ट्रीय सोसायटी का विचार है कि श्रव्य-दृश्य सामग्री के द्वारा सीखने की प्रक्रिया को प्रोत्साहन मिलता है तथा छात्रों की रुचियों को पाठ्य-सामग्री के प्रति जागृत किया जाता है। इस प्रकार प्राप्त किया हुआ ज्ञान स्थायी होता है। इसके प्रयोग से ये लाभ हैं--

(१) इनके द्वारा छात्रों को इन्द्रियानुभव प्रदान किये जाते है।

(२) यह सामग्री प्रत्यक्ष अनुभव के लिए पूरक का कार्य करती है।

(३) इनके प्रयोग से छात्रों को ज्ञान प्राप्ति के लिए प्रेरित किया जाता है।

---

1. John U. Michaelis—"Social studies for children in a Democracy Page 232.

(४) यह सामग्री पिछड़े हुए बालकों की शिक्षा के लिए बहुत ही उपयोगी है।

(५) सबसे प्रमुख लाभ यह है कि इनके द्वारा ऐसा प्रभावोत्पादक वातावरण उत्पन्न किया जाता है जिसमें छात्र ज्ञानेन्द्रिय अनुभव प्राप्त करता है और नवीन बातों को सरलता से ग्रहण कर लेता है।

(६) इनके द्वारा छात्रों की कल्पना, तर्क एवं निर्णय शक्तियों का विकास किया जाता है।

उपर्युक्त लाभो को तभी प्राप्त किया जा सकता है जब कि उनका प्रयोग शिक्षक द्वारा उपयुक्त ढंग से किया जाय। इनके प्रयोग के लिए शिक्षक को कुशल एवं दक्ष होना चाहिए। एम० पी० मुफात (M. P. Moffatt) ने इसके प्रयोग के विषय में इस प्रकार लिखा है—"The extent to which audio—visual materials are effective in the class-room is determined by the skill of the teacher in relating them to the learning activities."

(१) **रेडियो**—रेडियो शिक्षा और मनोरंजन का महत्त्वपूर्ण उपकरण है। आधुनिक शिक्षा-मनोविज्ञान में खेल द्वारा शिक्षा देने को बहुत महत्त्व दिया गया है। इसलिए रेडियो की ओर शिक्षा-शास्त्रियों तथा मनोवैज्ञानिको का ध्यान गया और उन्होंने इस उपकरण की शैक्षिक महत्ता पर विचार किया। आजकल अखिल भारतीय रेडियो द्वारा भी बालकों की शिक्षा एवं मनोरंजन के लिए कार्य-क्रम प्रसारित किये जाने लगे हैं। रेडियो की उपादेयता के विषय में उत्तरप्रदेश के वित्त मन्त्री श्री सैयद अली जहीर ने कहा है कि—"रेडियो ने शिक्षण तथा सीखने की प्रक्रिया में महत्त्वपूर्ण सहायता पहुँचाई है और जैसे-जैसे हमारे वित्तीय साधन बढ़ते जायेंगे वैसे ही वैसे हम प्रत्येक स्तर पर शिक्षक के लिए इस सहायक सामग्री को उपलब्ध बना देंगे।[1] उन्होंने आगे कहा कि हमारे प्रदेश के १४०० माध्यमिक शिक्षालयों पर रेडियो हैं। इसके प्रयोग से छात्रों को केवल तथ्यात्मक ज्ञान ही प्रदान नहीं किया जाता वरन् उनकी वाचक शक्ति को विकसित करने के लिए पर्याप्त अवसर प्रदान किया जाता है।

1. "Radio", says the Minister of Finance of U. P., "has made possible some of the most exciting experiments in learning and teaching and as our resources grow we will make this "aid" available to teachers at all levels.

अर्थशास्त्र-शिक्षण में इसके उपयोग के लिए पर्याप्त अवसर हैं। इसके द्वारा भारतीयों के रहन-सहन के स्तर तथा उसको उच्च बनाने के उपाय, ग्रामीण समस्याओं एवं उनके सुधार, आर्थिक विकास योजनाएँ, शक्ति के साधनों एवं भारत में उनकी वृद्धि के लिए उपाय, भौगोलिक परिस्थितियां तथा उनका मानव के आर्थिक जीवन पर प्रभाव, आर्थिक जीवन के विकास की कहानी आदि प्रकरणों पर वार्त्ता प्रस्तुत की जा सकती है। परन्तु इन वार्त्ताओं का लाभ तभी उठाया जा सकता है जब शिक्षक प्रोग्राम के उपरान्त छात्रों के अर्जित ज्ञान को प्रश्नों द्वारा जाँचे तथा उसके पश्चात् उनके ज्ञान को अपने कथन द्वारा समृद्ध बनाये। तत्पश्चात् उनसे उस वार्त्ता पर वाद-विवाद कराये तथा लेख बद्ध करने के लिए आदेश दे। ऐसा करने से छात्रों में तर्क सम्मत चिन्तन करने की वृत्ति का विकास होगा तथा इस प्रकार का ज्ञानार्जन स्थायी भी होगा।

(२) **समाचार सम्बन्धी फिल्म** (Documentary Films)—सामाजिक विषयों के शिक्षण में इन फिल्मों का बड़ा महत्त्वपूर्ण स्थान है। भारतीय सरकार इस क्षेत्र में पर्याप्त रूप से कार्य कर रही है। अर्थशास्त्र-शिक्षण में इन फिल्मो का उपयोग बहुत लाभप्रद है। इनके प्रयोग से छात्रों को राष्ट्र की आर्थिक प्रगति एवं परिस्थितियो से अवगत कराया जा सकता है। इनके प्रयोग से पूर्व शिक्षक को चाहिए कि वह उस समाचार या फिल्म के बारे में उन्हें परिचय प्रदान कर दे जिससे उनको उसके समझने में कठिनाई नहीं उठानी पड़े तथा बीच-बीच में वह मुख्य बातों का स्पष्टीकरण करता चले। तभी इनके प्रयोग के लाभो को प्राप्त किया जा सकता है। फिल्म तथा स्पष्टीकरण की भाषा छात्रों के स्तर के अनुकूल होनी आवश्यक है क्योकि यदि इसके विपरीत भाषा प्रयुक्त की गयी तो छात्र उनको समझने में असमर्थ रहेगे और फिल्मो का भी उद्देश्य पूर्ण हो सकेगा।

(३) **चल-चित्र**—सामाजिक विषयों के शिक्षण के लिए यह एक महत्त्व-पूर्ण उपकरण है। इसका प्रयोग अर्थशास्त्र के शिक्षण मे उपयोगी है। इस उपकरण का प्रयोग तभी अर्थशास्त्र-शिक्षण में किया जा सकता है जबकि फिल्म आर्थिक दृष्टिकोण मे बनायी जाएँ। इसके प्रयोग से अर्थशास्त्र के बहुत से प्रकरणों की शिक्षा प्रदान की जा सकती है। उदाहरणार्थ—किसानों की हीन दशा के कारण, ग्रामीण समस्याएँ, भारत की फसले, खनिज पदार्थ, आर्थिक विकास योजनाएँ, भारत के उद्योगों, भारतीय रहन-सहन का स्तर आदि। हमारे देश में ऐसी फिल्मों का बहुत अभाव है।

## अर्थशास्त्र-शिक्षण में यात्राएँ (Excursions)

अर्थशास्त्र एक व्यावहारिक विषय है। इसके व्यवहारिक पहलू का ज्ञान प्राप्त करने के लिए यात्राओं का बहुत महत्त्वपूर्ण स्थान है। इनके द्वारा छात्रों को अवलोकन द्वारा नवीन ज्ञान वास्तविक रूप में प्रदान किया जाता है। इनके उपयोग के लिए अर्थशास्त्र में पर्याप्त अवसर हैं। उदाहरणार्थ—किसी औद्योगिक नगर का निरीक्षण, श्रमिकों की बस्तियों, ग्रामों का निरीक्षण, विकास योजनाओं आदि का पर्यटन कराना। पर्यटन के लिए यह आवश्यक है कि पहले से छात्रों को बतला दिया जाय कि वे कहाँ और किस प्रयोजन से जा रहे है। उनके पास एक-एक नोट-बुक होनी चाहिए जिसमें वे सब बातें लिखें जो उनको देखनी है और पर्यटन के समय जो आवश्यक बातें बताई जाये उनको भी लेख-बद्ध करें। पर्यटन के पश्चात् शिक्षक छात्रों से प्रश्नों की सहायता से उनके ज्ञान की जाँच करे तथा अपने कथन द्वारा उनके ज्ञान को सुगम्बद्ध एवं समृद्ध बनाये। तत्पश्चात् उनके विचारों का आदान-प्रदान करा कर उस यात्रा के अनुभवों को लेखबद्ध कराये जिससे उनके पास उस विषय में सामग्री रह सके।

### QUESTIONS

1. Write a note on the aids and techniques that you would use for teaching Economics at the Higher Secondaey Stage. Illustrate your answer, (B. T. 1956, 58, 59, 69)

2. What factors would you keep in mind while selecting a suitable text-book of Economics for the Higher Secondary state. (B. T. 1959)

3. Write a critical review of any text-book in Economics that you may have used for teaching any class during the course of your teaching practice. (B. T. 1961)

4. Discuss tne value of the following in the teaching of Economics :—

(a) Graphs and Tables

(b) News-papers and Journals

(c) Text-books

(B. T. 1960)

अध्याय ७

# अर्थशास्त्र का शिक्षक

## (Economics Teacher)

शिक्षा के बारे में आधुनिकतम सिद्धान्त यह है कि शैक्षिक प्रक्रिया के तीन मुख्य बिन्दु होते है—शिक्षक, बालक तथा विषय-वस्तु। अध्यापन की सफलता इन तीनों की सुसम्बद्धता पर ही निर्भर होती है। इनमें शिक्षक एक चेतनशील तथा क्रियाशील बिन्दु है। इसका शैक्षिक प्रक्रिया में बहुत महत्त्वपूर्ण स्थान है। चाहे हमारा पाठ्य-क्रम, पाठशाला-भवन, फर्नीचर, प्रयोगशाला, सहायक सामग्री आदि कितनी ही अच्छी क्यों न हो, तब तक वे सभी निरर्थक है जब तक एक योग्य शिक्षक द्वारा उन्हें संचालित न किया जाय। शिक्षा-शास्त्रियों ने शिक्षण-प्रक्रिया मे विभिन्न तत्त्वों को महत्त्वपूर्ण स्थान दिया है। उदाहरणार्थ—सीखने के नियम, श्रव्य-दृश्य सामग्री, विषय-वस्तु, वैयक्तिक विभिन्नताओं, निदर्शन आन्दोलन; मूल्यांकन, व्यक्तित्व विकास आदि। वस्तुतः ये सब वस्तुएँ प्रभावोत्पादक है और इन्होंने शिक्षा के क्षेत्र मे कुछ न कुछ योग-दान अवश्य किया है। परन्तु इनकी प्रभावोत्पादकता तभी है जब इनका संचालन योग्य शिक्षक के द्वारा किया जाय। इसके अतिरिक्त समाज की दृष्टि से भी उसका स्थान बहुत महत्त्वपूर्ण है। अध्यापक आदिकाल से राष्ट्र का निर्माणकर्त्ता माना जाता रहा है। जॉन एडम्स ने शिक्षक को मनुष्य का निर्माणकर्त्ता कहा है। समाज की उन्नति का भार शिक्षक पर है। वह ही समाज की उन्नति एव प्रगति के लिए उत्तरदायी है। बाइनिग तथा बाइनिंग ने शिक्षक को शिक्षालय की आत्मा

कहा है। शिक्षक के महत्त्व को देखने के पश्चात् यह जानना आवश्यक है कि जब शिक्षक का इतना महत्त्वपूर्ण स्थान है तो उसमें कौन-कौन से गुण होने चाहिएँ, जिससे वह इस महत्त्वपूर्ण स्थान को ग्रहण कर सके। परन्तु यहाँ हमारा मन्तव्य अर्थशास्त्र के शिक्षक से है। हम उसी के गुणों का विवेचन करेंगे। अर्थशास्त्र के शिक्षक में हम किसी महान गुण की कल्पना नहीं करते है। उसे न विश्व-कोष ही समझते है वरन् उससे हम इतना चाहते हैं कि वह अपने विषय का पूर्ण ज्ञान रखे तथा जो गुण अन्य विषयों के शिक्षकों में होने है उन गुणों का अर्थशास्त्र के शिक्षक मे होना आवश्यक है। इनके अतिरिक्त वह अधोलिखित गुणों को भी अपने मे विकसित करने का प्रयत्न करे—

(१) **व्यावसायिक निष्ठा**—बालक बहुत कुछ शिक्षक के कार्यों, दर्शन आदि से सीखता। जैसा शिक्षक का दर्शन होगा वैसा ही बालक अपना जीवन-दर्शन बनाने की चेष्टा करता है। इसी कारण शिक्षक को आशावादी बनने के लिए कहा जाता है। शिक्षक का जो दृष्टिकोण शिक्षण-कार्य के प्रति होगा वैसा ही उसके छात्रों पर प्रभाव पड़ेगा। निष्ठा सीखने की प्रक्रिया को प्रोत्साहित करती है। इसलिये उसे अपने विषय एवं व्यवसाय दोनों मे पूर्ण निष्ठा रखनी चाहिए। यदि वह ऐसा नहीं करेगा तो बालकों के व्यक्तित्वों को विकसित नहीं कर पायेगा जो कि शिक्षा का मुख्य ध्येय है। इसलिए अर्थशास्त्र के शिक्षक को अपने कार्य को उत्साह तथा तत्परता के साथ करना चाहिए। यदि वह ऐसा करेगा तो अपने छात्रों में विद्या के लिये अनुराग उत्पन्न कर सकता है। परन्तु वर्तमान शिक्षकों में इसी निष्ठा का अभाव है, तभी हमारी शिक्षा का स्तर प्रतिदिन अवनति की ओर जा रहा है। यह सत्य है कि हमारे शिक्षकों को पेट भरने योग्य वेतन भी नहीं मिलता परन्तु फिर भी जब उन्होंने इस व्यवसाय को ग्रहण कर लिया है तब उनके लिए यह अनिवार्य है कि वे सत्यनिष्ठ होकर अपने कार्य को रुचि, तत्परता तथा उत्साह के साथ करें; क्योंकि उनके ही ऊपर समाज एवं राष्ट्र की उन्नति का दायित्व है। अर्थशास्त्र के शिक्षक की जब तक विषय एवं व्यवसाय मे निष्ठा नहीं होगी तब तक वह समाज की आर्थिक समस्याओं का निदान नहीं कर पायेगा। इसलिये उसमे व्यावसायिक निष्ठा का होना अनिवार्य है।

(२) **विषय का ज्ञान**—अर्थशास्त्र के शिक्षक मे जिस बात की अपेक्षा की जाती है, वह है विषय का ज्ञान। उसे अपने विषय का विद्यार्थी होना चाहिए।

जब उसको अपने विषय का पूर्ण ज्ञान होगा तभी वह अपने छात्रो के साथ पूर्ण न्याय कर सकेगा। अर्थशास्त्र के शिक्षक को अपने विषय के ज्ञान के साथ ही साथ उन विषयों का भी पर्याप्त ज्ञान प्राप्त करना चाहिए जिनसे अर्थशास्त्र का घनिष्ठ सम्बन्ध है। अर्थशास्त्र के शिक्षक को भूगोल का ज्ञान अति आवश्यक है क्योंकि इसके अभाव में वह आर्थिक भूगोल का शिक्षण ठीक प्रकार से नही कर सकेगा। इसके अतिरिक्त उसे आर्थिक सिद्धान्तो की ऐतिहासिक आधार पर विवेचना करनी चाहिए जिसके लिये उसे इतिहास से सुपरिचित होना आवश्यक है। अर्थशास्त्र के अध्यापक को कम से कम हाई स्कूल स्तर तक के विज्ञान, गणित, कृषि एवं वाणिज्य शास्त्र का ज्ञान होना आवश्यक है। इनके ज्ञान के अभाव मे वह अर्थशास्त्र का अध्यापन उचित रूप से नही कर सकेगा। राजस्व के अध्यापन के लिए उसे राजनीतिक सिद्धान्तो का ज्ञान होना आवश्यक है। इस प्रकार अर्थशास्त्र के शिक्षक को अपने विषय के पूर्ण ज्ञान के साथ अन्य सम्बन्धित विषयों का पर्याप्त रूप से ज्ञान होना आवश्यक है। इस प्रकार अर्थशास्त्र के शिक्षक को अपने विषय के पूर्ण ज्ञान के साथ अन्य सम्बन्धित विषयो का पर्याप्त रूप से ज्ञान होना आवश्यक है। इसलिए उसे जीवन-पर्यन्त विद्यार्थी जीवन ही व्यतीत करना चाहिए। यदि वह इस जीवन का त्याग करता है तो राष्ट्र, छात्र, तथा अपने स्वयं के हित में कुठाराघात करेगा। अन्त मे हम कह सकते है कि अर्थशास्त्र के शिक्षक को विषय के ज्ञान के साथ-साथ सफल सामाजिक जीवन व्यतीत करने मे जिन बातो की आवश्यकता है उनका भी ज्ञान होना चाहिये।

**(३) समसामयिक साहित्य का ज्ञान**—अर्थशास्त्र के शिक्षक को समसामयिक घटनाओं की जानकारी परम आवश्यक है। इनके ज्ञान के अभाव मे वर्त्तमान आर्थिक समस्याओं का हल निकालना कठिन है। इनकी जानकारी रखने के लिये उसे कोई न कोई दैनिक समाचारपत्र अवश्य पढना चाहिये। इसके अतिरिक्त उसे साप्ताहिक, मासिक, वार्षिक आदि आर्थिक पत्रिकाओं को भी अवश्य पढना चाहिए क्योंकि इनके अभाव मे वह आर्थिक जगत से दूर रहेगा। इन पत्रिकाओं से उसे प्रचलित आकड़ो का ज्ञान प्राप्त हो सकता है। आकडे परिवर्तित होते रहते है इसलिए इनकी जानकारी आवश्यक है। दूसरे इन्ही आँकड़ो के आधार पर समस्याओं का समाधान किया जाता है। इन पत्रिकाओं में उसे Eastern Economics, Govt. of India Reports आदि प्रमुख पत्रिकाओं का अध्ययन आवश्यक रूप से करना चाहिए। इसके

अतिरिक्त उसे विभिन्न आर्थिक समस्याओं पर होने वाले वाद-विवादों तथा सेमीनारों एवं विचार-गोष्ठियों में सक्रिय भाग लेना चाहिए।

(४) **व्यावहारिकता**—अर्थशास्त्र के शिक्षक को व्यावहारिक होना आवश्यक है। व्यावहारिक होने का तात्पर्य यह है कि वह जिन आर्थिक सिद्धान्तों को छात्रों को पढ़ाता है वह स्वयं उनके अनुसार व्यवहार मे आचरण करे। उदाहरणार्थ—यदि वह छात्रों को पारिवारिक बजट बनाने की विधि सिखलाता है तो स्वयं उसको अपने आय-व्यय का चिट्ठा रखना चाहिए जिससे वे उसका अनुकरण करके अपनी आय-व्यय का चिट्ठा रख सकें। इस प्रकार अर्थशास्त्र के शिक्षक का व्यावहारिक होना अति आवश्यक है।

(५) **आर्थिक समस्याओं का प्रत्यक्ष ज्ञान**—अर्थशास्त्र एक व्यावहारिक विषय है। इसका समाज के आर्थिक पक्ष से सम्बन्ध है। इसलिये अर्थशास्त्र के शिक्षक के लिये यह अति आवश्यक है कि वह स्वयं आर्थिक समस्याओ की जानकारी प्रत्यक्ष रूप से प्राप्त करे। यदि उसे ग्रामीण समस्याओं का अध्यापन करना है तो इसके लिए आवश्यक है कि उसको ग्रामीणों की समस्याओ का व्यावहारिक ज्ञान होना चाहिये। यह तभी हो सकता है जब वह स्वयं ग्रामो में जाकर उनकी समस्याओं का अध्ययन करे तथा उनके समाधान के लिये उपाय सोचे। इनके समाधान के लिये सैद्धान्तिक विवेचना तथा सरकारी रिपोर्टो का अध्ययन ही पर्याप्त नही है। जब तक शिक्षक उनके सम्पर्क में नही आयेगा तब तक वह उनकी समस्याओं की वास्तविकता को नहीं समझ पायेगा। इसके अतिरिक्त प्रत्यक्ष ज्ञान के बिना वह अपने छात्रों को पर्यटन के लिये भी नही ले जा सकता। यदि वह ले भी गया तो वह उनके विषय में पूर्ण ज्ञान देने में असमर्थ रहेगा।

(६) **वैज्ञानिक तथा उदार दृष्टिकोण**—आधुनिक युग की वैज्ञानिक प्रवृत्ति का यह तकाजा है कि उसी तथ्य या बात को ग्रहण किया जाय जो प्रमाणयुक्त एवं तर्कसम्मत है। इस कारण अर्थशास्त्र के शिक्षक में वैज्ञानिक दृष्टिकोण का होना भी परम आवश्यक है। यदि उसका दृष्टिकोण वैज्ञानिक नहीं होगा तो वह अपने छात्रो में इस दृष्टिकोण को विकसित नही कर सकेगा जो कि उनके लिए आवश्यक है। इसके द्वारा वे सत्य तथा असत्य का ज्ञान प्राप्त करने में समर्थ होंगे। इसके साथ ही उसका दृष्टिकोण उदार भी होना अनिवार्य है। इसी दृष्टिकोण से वह अपने छात्रों में प्रेम, सहानुभूति, सत्यता, गुण ग्राहकता

आदि गुणों का विकास कर सकता है। यदि उसमें इस दृष्टिकोण का अभाव रहेगा तो वह मानव समाज का कल्याण करने में असमर्थ रहेगा तथा अपने छात्रों में मानवता और विश्वबन्धुत्व की भावना नहीं उत्पन्न कर सकेगा जो कि विश्व की एक प्रबल माँग है।

**(७) शिक्षक का व्यक्तित्व**—शिक्षक का व्यक्तित्व सफल शिक्षण की आधार-शिला है। अर्थशास्त्र के शिक्षक के व्यक्तित्व में अधोलिखित गुणों का होना आवश्यक है—

(१) जीवन शक्ति
(२) अच्छा स्वास्थ्य
(३) सत्य आचरण
(४) शुभ चिन्तन
(५) आशावादिता
(६) निष्पक्षता
(७) धैर्य
(८) मौलिकता
(९) सहयोग
(१०) सहनशीलता
(११) प्रेम
(१२) आत्म-नियन्त्रण
(१३) आर्थिक क्रियाओं के प्रयोग की शक्ति
(१४) विशाल हृदयता
(१५) नेतृत्व क्षमता
(१६) उत्साह
(१७) तत्परता
(१८) निष्ठा तथा चातुर्य

अर्थशास्त्र के शिक्षक में किसी वस्तु या तथ्य को रोचक ढंग से वर्णन करने की शक्ति होनी चाहिए। इसके अतिरिक्त उसे रेखाचित्र व रेखाकृतियां, मानचित्र आदि बनाने का अभ्यास करना चाहिए। इनके बिना वह अपने विषय को सुस्पष्ट, रोचक एवं बोधनीय नहीं बना सकेगा। आर्थिक नियमों के स्पष्टीकरण में इनके प्रयोग की अत्यन्त आवश्यकता है। इसलिए उसे शुद्धता एवं शीघ्रता के साथ इनको बनाने की कला का जानना आवश्यक है। इसलिए उसे इसे अभ्यास करके सीख लेना चाहिये।

**(८) अर्थशास्त्र के शिक्षण का ज्ञान**—अर्थशास्त्र के अध्यापक के लिए प्रशिक्षित होना अत्यन्त आवश्यक है। यदि उसको प्रशिक्षण नहीं मिलेगा तो वह आधुनिक शैक्षिक विचारधारा तथा विविध नवीन शिक्षण-विधियों से अपने को परिचित नहीं कर सकेगा। किस स्तर पर किस शिक्षण-विधि का प्रयोग करना उचित होगा, ऐसी बातो का जानना, उसके लिए आवश्यक है। शिक्षण एक कला है। इसके सामान्य सिद्धान्त तथा नियम हैं, जिनको प्रत्येक शिक्षक को जानना आवश्यक है। इन सिद्धान्तो तथा नियमो का ज्ञान देने के लिए शिक्षक को प्रशिक्षित करना अनिवार्य है। अर्थशास्त्र के शिक्षक को अधोलिखित बातों में प्रशिक्षण मिलना आवश्यक है—

(१) अर्थशास्त्र का व्यावहारिक शिक्षण।

(२) मुख्य तथा सामान्य शिक्षण विधियों का ज्ञान (अर्थशास्त्र के शिक्षण मे प्रयुक्त होने वाली शिक्षण-विधियों के सिद्धान्तों एवं प्रयोग का विशेष ज्ञान)।

(३) अधोलिखित व्यावसायिक विषयों का ज्ञान—

(१) शिक्षा का इतिहास तथा उसकी समस्याएँ (२) शिक्षा मनोविज्ञान (विशेषतः बालमनोविज्ञान एवं बाल-विकास के सिद्धान्त) (३) शिक्षा के दार्शनिक, मनोवैज्ञानिक एवं सामाजिक आधार (४) शिक्षालय व्यवस्था (५) स्वास्थ्य शिक्षा (६) शिक्षा मे मूल्यांकन एवं निदर्शन (७) प्रारम्भिक शिक्षको की समस्याओ का ज्ञान।

इन उपर्युक्त बातों मे प्रशिक्षण प्राप्त करने के पश्चात् उसको समय-समय पर अभिनवन पाठ्य-क्रम प्रदान किया जाय। इसके अतिरिक्त उसे व्यावसायिक साहित्य पढ़ने के लिए प्रदान किया जाय जिससे वह अपने प्रशिक्षण को नवीन बनाता रहे तथा अपने शिक्षण को रोचक एवं सजीव बना सके।

## QUESTIONS

1. Write an short essay on the qualties of 'Economics Teacher.'
2. "Teacher is the maker of man." In the light of this statement discuss the qualities of a Economics teacher.

अध्याय ८

# विद्यालय के विभिन्न स्तरों पर अर्थशास्त्र की विषय-वस्तु का प्रस्तुतीकरण

## (Presentation of Economics at Different Stages of School)

अर्थशास्त्र के तथ्यों के संकलन एवं संगठन के पश्चात् यह प्रश्न उठता है कि इस पाठ्य-वस्तु को किस ढंग से प्रस्तुत किया जाय, क्योंकि प्रस्तुतीकरण शिक्षण-प्रक्रिया का एक अत्यन्त ही महत्त्वपूर्ण अंग है। कक्षा-शिक्षण में पाठ्य-वस्तु का प्रस्तुतीकरण करते समय अधोलिखित सामान्य सिद्धान्तों को ध्यान में रखना चाहिए —

(१) अर्थशास्त्र का जो भी तथ्य छात्रों के समक्ष प्रस्तुत किया जाय वह सुनिश्चित एवं बोधगम्य होना चाहिए।

(२) अर्थशास्त्र की पाठ्य-वस्तु को प्रस्तुत करते समय शिक्षक को सदैव बालकों की आयु, उनके मानसिक स्तर, विकास, आवश्यकताओं, उनकी सामर्थों तथा रुचियों का ध्यान रखना चाहिए। यदि अध्यापक इनका ध्यान नहीं रखेगा तो वह सफलता के साथ विषय-वस्तु को प्रस्तुत नहीं कर सकता। अर्थशास्त्र के प्रस्तुतीकरण में मानसिक योग्यता का सिद्धान्त इसलिये भी आवश्यक है क्योंकि छात्रों को जीवन के प्रारम्भिक काल में जीवन की आर्थिक विषमताओं का कोई ज्ञान नहीं होता और न उनमें आर्थिक उत्तरदायित्वों को

सम्हालने की क्षमता ही होती है। इसलिए अर्थशास्त्र का प्रस्तुतीकरण उनकी योग्यता, रुचियों तथा आवश्यकताओं के अनुरूप ही होना चाहिए।

(३) अर्थशास्त्र के जिन नियमों एवं सिद्धान्तों को प्रस्तुत किया जाय उनकी व्यावहारिकता पर अधिक बल देना चाहिए। इसके प्रभाव मे उनका कोई मूल्य नहीं होना। स्वभावतः छात्र अनुकरण के द्वारा बहुत कुछ सीखते है। अतः अर्थशास्त्र के शिक्षक का यह परम कर्त्तव्य है कि वह स्वयं छात्रो के समक्ष इन नियमों को व्यवहारिक रूप में रखे।

(४) अर्थशास्त्र की पाठ्य-वस्तु का जीवन की ठोस परिस्थितियो एवं अन्य विषयों से सम्बन्ध होना चाहिए क्योंकि इनसे पृथक अर्थशास्त्र के ज्ञान की कोई उपयोगिता नहीं है। इसलिए अर्थशास्त्र के शिक्षक का यह परम कर्त्तव्य है कि वह अर्थशास्त्र की पाठ्य-वस्तु का सानुबन्धित प्रस्तुतीकरण करे।

(५) **उसकी पाठ्य-वस्तु का प्रस्तुतीकरण समाज की आवश्यकताओं के** अनुसार किया जाना चाहिए।

माध्यमिक शिक्षा आयोग ने शिक्षा के विभिन्न स्तरो का अधोलिखित आदर्श प्रस्तुत किया है—

(१) **प्राइमरी स्तर** - (६—११ वर्ष) इस स्तर में ५ कक्षाएं रखी है।

(२) **जूनियर हाई स्कूल स्तर अथवा पूर्व माध्यमिक स्तर**—(११+ —१४ वर्ष) इस स्तर मे कक्षा ६, ७ तथा ८ आती है।

(३) **उच्चतर माध्यमिक स्तर**—(१४+ —१७ वर्ष) इस स्तर के अन्तर्गत ९, १० तथा ११वीं कक्षाएँ आती हैं।

(४) **विश्वविद्यालय स्तरीय शिक्षा**—इसमें प्रथम डिग्री कोर्स (१२, १३ तथा १४वीं कक्षाएँ) मास्टर डिग्री कोर्स तथा अनुसन्धान कार्य आते है।

परन्तु हमारे प्रदेश में शिक्षा के परम्परागत स्तर ही प्रचलित हैं। वे इस प्रकार है—

(१) **प्राइमरी स्तर**—इस स्तर में ५ कक्षाएँ आती है।

(२) **जूनियर हाई स्कूल स्तर**—६, ७ तथा ८वीं कक्षाएँ।

(३) **माध्यमिक स्तर**—९वीं तथा १०वी कक्षाएँ।

(४) **उच्चतर माध्यमिक स्तर**—११वी तथा १२वी कक्षाएँ।

(५) **विश्वविद्यालय स्तरीय शिक्षा**—प्रथम डिग्री कोर्स, मास्टर डिग्री कोर्स, अनुसन्धान कार्य आदि।

परन्तु अर्थशास्त्र का शिक्षण माध्यमिक, उच्चतर माध्यमिक एवं उच्च स्तरों पर होता है। जूनियर हाई स्कूल स्तर पर सामाजिक अध्ययन नामक विषय के अन्तर्गत अर्थशास्त्र की पाठ्य-वस्तु का समावेश किया जाना चाहिए, इससे छात्रों में अर्थशास्त्र के ज्ञान को प्राप्त करने के लिए एक प्रकार से पृष्ठ-भूमि तैयार हो जायगी। इस प्रकार की पृष्ठ-भूमि से वे उसकी पाठ्य-वस्तु को समझने में समर्थ होंगे। इस स्तर के बालकों का पर्याप्त मात्रा में मानसिक विकास हो जाता है। यद्यपि वे सूक्ष्म चिन्तन के योग्य नहीं होते परन्तु सत्य को समझने तथा सामान्यीकरण करने के लिए तत्पर रहते हैं। दूसरे, इस सामग्री के समावेश के अभाव में सामाजिक अध्ययन का शिक्षण भी निरर्थक है। अतः जूनियर स्तर पर अर्थशास्त्र की पाठ्य-वस्तु का समावेश अत्यन्त आवश्यक है; क्योंकि इसके बिना वे मानवीय आर्थिक स्तर को समझने में सफल नहीं हो सकेंगे।

**जूनियर हाई स्कूल स्तर पर विषय का प्रस्तुतीकरण**—इस स्तर के छात्र किशोरावस्था के निकट पहुँचने लगते है। उनकी स्मरण-शक्ति, अनुभव, तर्क तथा निर्णय-शक्तियों का पर्याप्त मात्रा में विकास हो जाता है। इस स्तर के छात्र वास्तविकता मे अधिक आस्था रखते है। वे उसी बात को ग्रहण करते है जो उपयोगी होती है। इस स्तर के छात्रों का व्यावहारिक ज्ञान भी बढ़ जाता है। अतः उन मानसिक विशिष्टताओं को ध्यान में रखकर अर्थशास्त्र की पाठ्य-वस्तु का प्रस्तुतीकरण किया जाय, तभी लाभप्रद होगा। इस स्तर पर अर्थशास्त्र के प्रस्तुतीकरण के निम्नलिखित उद्देश्य होने चाहिएँ—

(१) अर्थशास्त्र की पाठ्य-वस्तु का सूचनात्मक ज्ञान प्रदान कराना।

(२) छात्रों को स्थानीय आर्थिक जीवन की विशेषताओं से परिचित कराना।

(३) इसके ज्ञान से छात्रों को मानवीय सम्बन्धों या लगावों को समझने के लिए प्रोत्साहित करना।

(४) छात्रों को अपने स्वयं के आर्थिक जीवन की आवश्यकताओं से परिचित कराना तथा उनकी प्राप्ति के साधनों का संक्षिप्त ज्ञान प्रदान करना।

(५) स्थानीय, प्रादेशिक एवं राष्ट्रीय आर्थिक समस्याओं का संक्षिप्त परिचय प्रदान करना।

## जूनियर स्तर की पाठ्य-वस्तु

जैसा कि हम ऊपर वर्णन कर चुके है कि अर्थशास्त्र का इस स्तर पर एक

पृथक विषय के रूप में अध्ययन नहीं कराना चाहिए वरन् उसके आधारभूत सिद्धान्तों का सामाजिक अध्ययन नामक विषय के अन्तर्गत समावेश होना चाहिए। इस स्तर पर निम्नलिखित बातों का शिक्षण होना चाहिए—

(१) अर्थशास्त्र का अर्थ।
(२) स्थानीय आर्थिक समस्याओं का व्यावहारिक ज्ञान।
(३) राष्ट्रीय आर्थिक समस्याओं का सूचनात्मक ज्ञान।
(४) कृषि।
(५) घरेलू उद्योग-धन्धे।
(६) सहकारी क्रियाएँ।
(७) डाक-व्यवस्था का ज्ञान।
(८) मनोरंजन के साधन।
(९) आवागमन के साधनों की जानकारी।
(१०) श्रमिकों एवं किसानों की समस्याओं का प्रारम्भिक ज्ञान।
(११) प्रायोगिक कार्य —वन-महोत्सव, विभिन्न योजनाएँ, हमारा ग्राम, भोजन आदि।

इस स्तर के लिए अर्थशास्त्र की पृथक पाठ्य-पुस्तकें नहीं होंगी वरन् सामाजिक अध्ययन की पुस्तकों में इनका विवरण दिया जायगा। इस स्तर पर अर्थशास्त्र की शिक्षा विभिन्न क्रियाओं के द्वारा प्रदान की जानी चाहिए। अर्थशास्त्र का शिक्षक इसके प्रस्तुतीकरण के लिए निम्नलिखित शिक्षण-पद्धतियों का प्रयोग कर सकता है—

(१) योजना पद्धति
(२) समस्या पद्धति
(३) पाठ्य-पुस्तक पद्धति

**शिक्षण रीतियाँ तथा सहायक सामग्री**—अर्थशास्त्र का शिक्षक अधोलिखित रीतियों एवं साधनों का प्रयोग कर सकता है—

(१) चित्र
(२) मानचित्र
(३) चार्ट
(४) रेडियो
(५) नाटकीय रीति
(६) प्रश्न रीति

(७) कथन रीति

(८) चल-चित्र

**माध्यमिक स्तर पर अर्थशास्त्र का प्रतिपादन**—इस स्तर पर बालक किशोरावस्था में पदार्पण करता है। उसके समस्त दृष्टिकोण में पर्याप्त परिवर्तन आ जाता है। उसका मानसिक, शारीरिक, सामाजिक, नैतिक, शब्द-ज्ञान आदि सभी का विकास होता है। इस स्तर का बालक स्वयं क्रिया करके किसी निर्णय पर पहुँचना चाहता है। इस स्तर के छात्रों का मानसिक स्तर परिपक्वता की दृष्टि से अर्थशास्त्र-अध्ययन के लिए उपयुक्त हो जाता है। इस स्तर पर धारणाएँ बनाने के लिए उसमें तत्परता की भावना आ जाती है। इस कारण इस स्तर को नियमीकरण की अवस्था भी कहते है। वह अपने व्यक्तित्व को प्रदर्शित करना चाहता है, इसके लिए समाज में वह अपनी स्वीकृति करवाना चाहता है। इन समस्त तथ्यो को ध्यान मे रखकर ही हमे अर्थशास्त्र का प्रस्तुतीकरण करना चाहिए। इस स्तर पर अर्थशास्त्र का अस्तित्व एक प्रथक विषय के रूप में होना है। इसके प्रस्तुतीकरण के निम्नलिखित उद्देश्य होने चाहिएँ—

(१) छात्रो को आर्थिक पदों, सिद्धान्तो, नियमो, प्रवृत्तियो आदि से अभिहित कराना।

(२) छात्रों को आर्थिक जीवन के विकास से परिचित कराना।

(३) बालकों को भारतीय आर्थिक जीवन की विशेषताओं एवं विषमताओं की जानकारी कराना।

(४) बालकों में अर्थशास्त्र के अध्ययन के लिए रुचि उत्पन्न करना तथा उनकी चिन्तन, तर्क, स्मरण एव निर्णय शक्तियो का विकास करना।

(५) बालकों को दैनिक जीवन में अर्थशास्त्र के महत्त्व से परिचित कराना।

(६) राष्ट्र एवं मानव समाज के प्रति निष्ठा का भाव उत्पन्न करना।

(७) छात्रो को भारतीय उत्पादन, वितरण, उपभोग एवं विनिमय की विधियों से परिचित बनाना।

(८) आर्थिक जीवन के व्यावहारिक पक्ष की शिक्षा प्रदान करके उनको व्यावहारिक जीवन की आर्थिक समस्याओ के समाधान-हेतु योग्य बनाना।

(९) छात्रों में वैज्ञानिक एवं उदार दृष्टिकोण उत्पन्न करना जिससे वे सजग नागरिक की भाँति राष्ट्र की समस्याओं, नव-निर्माण योजनाओं आदि का

विवेचन कर सकें तथा उनके समाधान एवं उन्नति के लिए अपने को सहायक के रूप में प्रस्तुत कर सकें।

(१०) छात्रों में कुशल उपभोक्ता की नागरिकता का विकास करना।

(११) छात्रों को अर्थशास्त्र के अध्ययन के द्वारा इस योग्य बनाना जिससे वे अपने राष्ट्र की आय एवं रहन-सहन के स्तर मे वृद्धि कर सकें।

(१२) छात्रों में सानुबन्धित अध्ययन करने की योग्यता उत्पन्न करना।

## पाठ्य-सामग्री

**प्रथम भाग :**

(१) अर्थशास्त्र – अर्थ, विभाग, विषय-विस्तार तथा महत्त्व।

(२) अर्थशास्त्र के महत्त्वपूर्ण पदो की परिभाषाएं--उपयोगिता, अर्द्ध, मूल्य, धन, आय आदि।

(३) उत्पत्ति के साधन— भूमि, श्रम, पूँजी, संगठन तथा साहस। भारत में इन साधनों का कृषि एवं उद्योग मे महत्त्व।

(४) विनिमय--क्रय-विक्रय, बाजार।

(५) आवश्यकताएँ --अर्थ, लक्षण, वर्गीकरण

(६) पारिवारिक बजट।

(७) घरेलू उद्योग-धन्धे।

(८) श्रम तथा श्रमिको की समस्याएँ।

(९) कृषि की आय का वितरण।

(१०) बटाई प्रथा तथा उसके दोष।

(११) ग्रामीण समस्याएँ -भूमि, भोजन, आवागमन, स्वास्थ्य, सफाई; शिक्षा, मनोरंजन, पशुपालन, ऋण आदि की समस्याएँ।

(१२) ग्राम तथा जिले का शासन।

(१३) सहकारी आन्दोलन।

(१४) व्यावहारिक कार्य-- ग्राम पंचायतो का निरीक्षण, बाजारों तथा श्रमिक-बस्तियों की दशाओं का निरीक्षण। घरेलू उद्योग-धन्धों तथा सहकारी क्रियाओं का स्कूल मे संचालन, छात्र बजट का निर्माण आदि।

**द्वितीय भाग :**

**(१) आर्थिक भूगोल—अर्थ, महत्त्व तथा क्षेत्र।**

**(२) मनुष्य तथा उसका वातावरण—भौतिक वातावरण तथा उसका आर्थिक जीवन पर प्रभाव।**

(३) भारत की प्राकृतिक दशा—मिट्टी तथा उसकी बनावट, वर्गीकरण आदि। जलवायु, सिचाई के साधन एवं उनकी आवश्यकता। वर्षा तथा उसका वितरण।

(४) भारत की प्रमुख फसलें—खाद्य फसलें, पेय फसलें तथा अखाद्य फसलें।

(५) भारत की पशु-सम्पत्ति।

(६) भारत के खनिज पदार्थ।

(७) वन-सम्पत्ति।

(८) शक्ति के साधन—मानव, पशु, हवा, लकड़ी, कोयला, तेल, पानी।

(९) उद्योग-धन्धो का स्थानीयकरण।

(१०) जनसंख्या-महत्त्व तथा वितरण।

(११) यातायात एवं संदेशवाहन के साधन—सड़कें, रेलें; नदियाँ, समुद्री यातायात, वायु यातायात, डाक, तार, टेलीफोन तथा बेतार के तार (wireless)

(१२) भारतीय व्यापार—अन्तर्देशीय एवं विदेशी।

(१३) भारतीय प्रसिद्ध औद्योगिक नगर, बन्दरगाह एवं हवाई अड्डे—इनका विकास एवं आर्थिक महत्त्व।

(१४) व्यावहारिक कार्य—मानचित्रो तथा चार्टों का निर्माण, विभिन्न उद्योगो का निरीक्षण, यातायात एवं संदेशावाहन के साधनो का छात्रो द्वारा उपयोग तथा उनकी कार्य-प्रणाली का उनके समक्ष प्रदर्शन।

**पाठ्य-पुस्तकें**- इस स्तर पर पाठ्य-पुस्तको का प्रयोग करना चाहिए। इसके लिए जो पाठ्य-पुस्तकें निर्धारित की जाएँ उनको रचना एवं चयन के सिद्धान्तों की कसौटी पर परखने के पश्चात् निर्धारित करना चाहिए। इस स्तर पर बहु पाठ्य-पुस्तकों का प्रयोग लाभकारी सिद्ध होगा। किन्तु इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि इन पुस्तको में अमूर्त्त विचारो का बाहुल्य न हो।

**शिक्षण पद्धतियाँ** - अध्याय ४ में अर्थशास्त्र-शिक्षण की शिक्षण-पद्धतियो का विस्तृत विवेचन किया गया है। उनमें से कुछ पद्धतियाँ इस स्तर के लिए बहुत उपयोगी है, उनकी सूची नीचे दी जा रही है—

(१) योजना-पद्धति
(२) समस्या-पद्धति
(३) व्याप्तिमूलक-निगमन पद्धति
(४) विश्लेषण-संश्लेषण पद्धति
(५) प्रयोगशाला-पद्धति

(६) समाजीकृत अभिव्यक्ति पद्धति
(७) निरीक्षित अध्ययन पद्धति
(८) पाठ्य-पुस्तक पद्धति

**शिक्षण-रीतियाँ एवं सहायक सामग्री**—अध्याय ५ तथा ६ में जितनी रीतियाँ तथा साधनों का विवेचन किया गया है वे इस स्तर के लिए बहुत उपयुक्त हैं। उनकी उपयुक्तता एवं महत्ता के अनुसार उनकी सूची नीचे दी जा रही है—

(१) प्रश्न रीति
(२) कथन रीति
(३) उदाहरण रीति
(४) निरीक्षण रीति
(५) परीक्षा रीति
(६) कार्य निर्धारण रीति
(७) अभ्यास रीति
(८) कहानी कथन रीति
(९) नाटकीय रीति।

**सहायक सामग्री**—

(१) चित्र
(२) रेखाचित्र एवं रेखाकृतियाँ
(३) मानचित्र
(४) ग्राफ
(५) चार्ट
(६) रेडियो
(७) चल-चित्र
(८) समाचार-सम्बन्धी फिल्म
(९) समाचारपत्र एवं अन्य पत्रिकाएँ
(१०) मॉडल।

इस स्तर पर सानुबन्धित रूप से पाठ्य-वस्तु का प्रस्तुतीकरण किया जाना चाहिए। अर्थशास्त्र के शिक्षक को सामाजिक तथा भौतिक विद्वानों से अर्थशास्त्र का समन्वय स्थापित करना चाहिए। यह समन्वय किस प्रकार स्थापित किया जाय ? इसके विषय में अगले अध्याय में विस्तृत विवेचन किया जायगा।

**उच्चतर माध्यमिक स्तर पर अर्थशास्त्र का प्रतिपादन**—इस स्तर में परम्परागत प्रणाली के अनुकूल ११वीं तथा १२वीं कक्षाएँ आती हैं। इन छात्रों का मानसिक स्तर परिपक्व होता है। वे आर्थिक नियमों का सूक्ष्मातिसूक्ष्म विवेचन एवं उनके अनुकूल आचरण करने योग्य होते है। वे प्रत्येक तथ्य को क्यों, कब, कैसे ? आदि प्रश्नों के आधार पर ग्रहण करना चाहते है। उनका मानसिक एवं सांवेगिक विकास पर्याप्त मात्रा में उच्च होता है। वे राष्ट्र एवं मानव समाज की आर्थिक समस्याओं, विषमताओ, योजनाओ आदि में पूर्ण सक्रिय रहकर भाग लेना चाहते है। इन सब तथ्यो को ध्यान मे रखकर अर्थशास्त्र का प्रतिपादन किया जाना चाहिए, तभी वह लाभप्रद होगा।

**उद्देश्य**—इस स्तर पर अर्थशास्त्र का प्रस्तुतीकरण अधोलिखित उद्देश्यो के अनुसार किया जाना चाहिए—

(१) छात्रों को अर्थशास्त्र के विभिन्न नियमों एवं सिद्धान्तो की सैद्धान्तिक एवं व्यावहारिक विवेचना करने योग्य बनाना।

(२) छात्रो को कुशल उत्पादक एवं उपभोक्ता नागरिक बनाना।

(३) व्यावहारिक जीवन की आर्थिक समस्याओं के हल करने के योग्य बनाना।

(४) उनका आर्थिक दृष्टिकोण व्यापक बनाना जिससे वे मानव-समाज के कल्याण के लिए चिन्तन एव कार्य कर सके।

(५) भारतीय आर्थिक जीवन की समस्याओं एवं विषमताओ को दूर कर सकने की क्षमता उत्पन्न करना।

(६) अर्थशास्त्र के सिद्धान्तो को व्यवहार रूप मे लाने की क्षमता उत्पन्न करना।

## पाठ्य-वस्तु

**प्रथम भाग :**

**(१) विषय प्रवेश** –विषय-वस्तु, अर्थशास्त्र एक कला या विज्ञान, विषय-विस्तार, अर्थशास्त्र का अन्य विषयों से सम्बन्ध, अध्ययन करने की विधियाँ एवं महत्त्व। आर्थिक जीवन का विकास, सामाजिक कारण एवं भारतीय अर्थ-व्यवस्था।

**(२) उपभोग** – अर्थ एवं उसके भेद, महत्त्व, आवश्यकताए -- अर्थ, लक्षण, वर्गीकरण।

**उपयोगिता**—सीमान्त तथा कुल उपयोगिता, उपयोगिता ह्रास नियम, सम-सीमान्त उपयोगिता नियम, उपभोक्ता की बचत, माँग तथा पूर्त्ति का नियम, माँग की लोच, पारिवारिक बजट, आय का वितरण तथा व्यय का सामाजिक पक्ष।

(३) **उत्पत्ति**—उत्पत्ति तथा आवश्यकता मे सम्बन्ध, उत्पत्ति के नियम, उत्पत्ति के साधन—

**भूमि**—भारत के प्राकृतिक उपहार, कृषि, उद्योग तथा वाणिज्य की दृष्टि से भूमि का उपयोग, उत्पत्ति के साधन के रूप में भूमि का महत्त्व एवं उसका उपयोग।

**श्रम**—श्रम का अर्थ, भेद एवं महत्त्व। श्रम की कार्य-क्षमता, भारत में। श्रम की वर्तमान स्थिति। भारत में जनसंख्या का घनत्व तथा वितरण।

**पूँजी** (चल एवं अचल) इमारत एवं मशीन, भारत मे पूँजी, यातायात एवं आवागमन के साधन, सिंचाई व्यवस्था तथा उनका आर्थिक जीवन पर प्रभाव।

**प्रबन्ध एवं साहस**—अर्थ एवं महत्त्व, भारत में प्रबन्ध की वर्तमान स्थिति, उत्पत्ति के साधनों की कुशलता, कार्य-क्षमता की वृद्धि के उपाय, श्रम-विभाजन तथा मशीनों का विशेषीकरण, बड़े पैमाने पर उत्पत्ति एवं उसकी सीमाएँ, भारतीय कृषि, उत्तरप्रदेश के ग्रामीण उद्योग, गहरी तथा विस्तृत खेती एवं औद्योगिक संगठन का विकास।

(४) **कर** करों का विकास, प्रत्यक्ष एवं परोक्ष कर तथा उनमें भेद, केन्द्रीय एवं प्रान्तीय कर प्रणाली, उत्तरप्रदेश की स्थानीय संस्थाओं की आर्थिक स्थिति।

**द्वितीय भाग :**

(१) **विनिमय** आवश्यकता एवं विकास, बाजार, अर्घ निर्धारण करने का सिद्धान्त, द्रव्य का अर्थ, कार्य एवं भेद, मुद्रा, ग्रेशम का नियम, साख, साख-पत्र, भारतीय बैंक व्यवस्था, सहकारिता।

(२) **वितरण**—अर्थ एवं उसकी समस्याएँ, लगान तथा उसके निर्धारण के सिद्धान्त, वेतन तथा मजदूरी, सूद एवं लाभ।

**व्यावहारिक कार्य :**

(१) उपभोग के लिए चार बजट—कारीगर, श्रमिक, किसान तथा छात्र के उपभोग बजट।

(२) आर्थिक नियमों एवं सिद्धान्तों से सम्बन्धित रेखाचित्र।

(३) स्थानीय उद्योग-धन्धों के व्यय का विवरण ।

(४) विभिन्न उद्योग-धन्धों का निरीक्षण एवं उनके विकास के लिए सुझाव ।

**शिक्षण पद्धतियाँ एवं रीतियाँ**—इस स्तर के प्रस्तुतीकरण के लिए अर्थशास्त्र के शिक्षक को अधोलिखित पद्धतियों एवं रीतियों का प्रयोग करना चाहिए—

(१) व्याख्यान पद्धति
(२) समाजीकृत अभिव्यक्ति पद्धति
(३) निरीक्षित अध्ययन पद्धति
(४) समस्या पद्धति
(५) तर्कात्मक पद्धति
(६) आगमन-निगमन पद्धति
(७) विश्लेषण-संश्लेषण पद्धति

**रीतियाँ**—

(१) प्रश्न रीति
(२) कथन-रीति
(३) निरीक्षण रीति
(४) कार्य-निर्धारण रीति
(५) परीक्षण रीति
(६) उदाहरण रीति

इस स्तर पर पाठ्य-पुस्तकों का प्रयोग किया जाना आवश्यक है । ये पुस्तकें समीक्षात्मक ढंग से लिखी हुई होनी चाहिएँ जिससे उनके अध्ययन करने से छात्रों की आलोचनात्मक प्रवृत्ति को प्रोत्साहन मिल सके ।

**सहायक सामग्री**—

(१) मानचित्र
(२) रेखाचित्र तथा रेखाकृतियाँ
(३) ग्राफ
(४) चार्ट
(५) पत्र तथा पत्रिकाएँ (Journals and Periodicals)
(६) समाचार सम्बन्धी फिल्म
(७) चल-चित्र

(८) तालिकाएँ एवं सारिणी।

इस स्तर पर भी विषय का प्रस्तुतीकरण सानुबन्धित रूप से किया जायगा। इस स्तर का समन्वय माध्यमिक कक्षाओं की अपेक्षा सापेक्षिक अधिक होगा।

## QUESTIONS

1. What principles would you bear in mind in the presentation of Economics at different stages ? Discuss.
2. What are the aims of teaching Economics at various stages of the school ?

## अध्याय ६

# अर्थशास्त्र का अन्य विषयों से सह-सम्बन्ध

## (Correlation of Economics with other Subjects)

**सह-सम्बन्ध की आवश्यकता**—समस्त ज्ञान अखण्ड है। उसको पृथक-पृथक भागों में विभाजित नहीं किया जा सकता, परन्तु पठन-पाठन की सुविधा के लिये हमने उसका वर्गीकरण कर लिया है और प्रत्येक वर्ग को एक विषय कहते है। परन्तु विषय ज्ञान का विभाजन नहीं है- वरन् ज्ञान के अध्ययन के दृष्टिकोण का अन्तर-मात्र है। फिर भी विषय का अपना एक उद्देश्य तथा एक विशिष्ट दृष्टिकोण होता है। उसके उच्च आदर्श होते है, जिनको प्राप्त करने के लिये वह प्रयत्नशील रहता है तथा उसकी एक श्रेष्ठ परम्परा है जिसका वह आदर करता है। अतएव किसी विषय को पढ़ाने मे ज्ञान के अतिरिक्त जब तक छात्र इन बातों को ग्रहण नही करता तब तक उस विषय का शिक्षण अपूर्ण रहता है।

बालक का मस्तिष्क पृथक-पृथक विभागो का मिश्रण नही है, वरन् अविभाज्य इकाई है। समस्त विषयो की सामग्री उसी एक मस्तिष्क द्वारा ग्रहण की जाती है। अतएव मस्तिष्क भिन्न-भिन्न अनुभवो का पारस्परिक सम्बन्ध, तुलना तथा मिश्रण आदि करके उन्हे ग्रहण करता है। अनुभव करने के साथ ही यह सम्बन्धी-करण-क्रिया प्रारम्भ हो जाती है, और जो भी ज्ञान हमारे मस्तिष्क मे संचित होता है, वह इन्ही सम्बन्धो का ज्ञान है। हमारा मस्तिष्क

कुछ ऐसे तत्त्वों से निर्मित है जो बिना इन सम्बन्ध-स्थापना के रह ही नहीं सकते। अतः मानव मस्तिष्क स्वभावतः ही एक विषय के अनुभवों को दूसरे विषय के अनुभवो के साथ सम्बन्ध स्थापित करने में लगा रहता है। इस प्रकार ज्ञान की अखण्डता, मस्तिष्क की अविभाज्यता एवं सम्बन्धी-करण-क्रिया को देखने से यह स्पष्ट हो जाता है कि एक विषय का दूसरे विषयों से सम्बन्ध स्थापित करना अत्यन्त आवश्यक है। गुयाउ के शब्दों में "घटनाओं तथा विचारो का मानस-पटल पर स्थायी एवं उपयोगी प्रभाव तभी पड़ता है जब मस्तिष्क उन्हे अन्य आगन्तुक घटनाओं एव विचारों के साथ व्यवस्थित एवं सम्बद्ध करता है।" अतएव यदि अध्यापक स्वयं इन सम्बन्धो का ध्यान रखे तो बालको को विषयों के समझने में बडी सुगमता एवं सरलता हो जाती है।

**शिक्षा में सह-सम्बन्धो ऐतिहासिक पृष्ठभूमि**—शिक्षा में समन्वय प्राचीन काल से चला आरहा है। प्राचीन काल में शिक्षा जीवन-केन्द्रित थी परन्तु सह-सम्बन्ध का आधुनिक रूप १५० वर्ष पूर्व यूरोप में विकसित हुआ। यह रूप प्रसिद्ध शिक्षाशास्त्री हर्बर्ट के दार्शनिक सिद्धान्तों से प्रारम्भ हुआ। हर्बर्ट महोदय के अनुसार शिक्षा का मुख्य ध्येय चरित्र-निर्माण करना है। उसने कहा कि यह उद्देश्य निर्देशात्मक शिक्षण के माध्यम से प्राप्त किया जा सकता है। निर्देश के द्वारा विचार-चक्र निर्मित किया जायगा और शिक्षा चरित्र निर्माण करेगी। वह शिक्षा द्वारा रुचियों की वृद्धि, विकास तथा प्रयोग पर बल देता है। रुचियों का विकास ज्ञान के द्वारा किया जा सकता है। इस-लिये उसने ज्ञान की प्राप्ति पर अधिक बल दिया। इसके लिये उसने विभिन्न विषयों का ज्ञान देने के लिये कहा, जिससे छात्रों के विचारो में वृद्धि हो और विचारों मे रुचियो मे। जैसी हमारी रुचि होती है वैसे ही हमारे कार्य होते हैं। इस प्रकार उसका विचार-चक्र पूर्ण होता है जो कि चरित्र निर्माण करने में सहायक है। हर्बर्ट ने सर्वप्रथम स्कूल के पाठ्य-विषयों में सह:सम्बन्ध स्था-पित करने के लिए कहा। उसका कथन है कि पाठ्य-क्रम विषयो को इस प्रकार व्यवस्थित करना चाहिये जिससे एक विषय के शिक्षण में दूसरे विषयों का ज्ञान सहायक हो सके। इसको उसने सह-सम्बन्ध के सिद्धान्त (Principle of Correlation) के नाम से पुकारा। इसका आधार उसका पूर्वानुवर्ती ज्ञान का सिद्धान्त (Doctrine of Apperception) था। इस सिद्धान्त के अनुसार समस्त नवीन विचार तभी ग्राह्य हो सकते है, जब उनका सम्बन्ध हमारी चेतना में विद्यमान विचारों से स्थापित किया जाता है अर्थात्

हम दूसरे शब्दों में कह सकते है कि जब हमारे पूर्वानुवर्ती विचारों से नवीन विचारों को सम्बन्धित कर दिया जायगा तभी नवीन ज्ञान की प्राप्ति होगी। इसी पूर्व ज्ञान के सहारे शिक्षक को नवीन ज्ञान मे छात्रो की रुचि तथा ध्यान को केन्द्रित करना चाहिए, तभी नवीन ज्ञान स्थायी हो सकेगा। इसकी पच-पद-प्रणाली में प्रथम पद प्रस्तावना है जो पूर्व ज्ञान पर आधारित होना है तथा जिसका मुख्य उद्देश्य नवीन ज्ञान के लिये छात्रो को उनके पूर्वज्ञान के आधार पर तैयार करना है। उनका कथन है कि पाठ्य-क्रम के विभिन्न विषयो को इस प्रकार सम्बन्धित करके पढाया जाय जिससे बालको के मस्तिष्क पर उनका समवेत प्रभाव पडे।

हर्बर्ट के शिष्य जिलर (ziller) ने इस सिद्धान्त को और अधिक विस्तृत करके केन्द्रीकरण का सिद्धान्त निरूपित किया। इस सिद्धान्त के अनुसार किसी एक विषय को शिक्षा का केन्द्र-बिन्दु बनाकर अन्य विषयो का उसी के आधार पर शिक्षण दिया जाय। उसने समस्त विषयो की शिक्षा देने के लिये 'इतिहास' को केन्द्रीय विषय माना। परन्तु कर्नल पार्कर ने 'प्राकृतिक विज्ञान अध्ययन' को केन्द्रीय विषय बनाया जिसके माध्यम से अन्य विषयो का ज्ञान प्रदान करना चाहिए। डी० गार्मो ने शिक्षा का मुख्य उद्देश्य व्यावहारिक कुशलता प्राप्ति बतलाया। इसको प्राप्त करने के उद्देश्य से उन्होने 'भूगोल तथा अर्थ-शास्त्र' को केन्द्रीय विषय माना। ड्यूवी के अनुसार शिक्षा का उद्देश्य सामाजिक कुशलता प्राप्त करना है। इस उद्देश्य की प्राप्ति के लिये उसने शिक्षालय को जीवन की ठोस परिस्थितियों से सम्बन्धित करने के लिये कहा अर्थात् शिक्षालय में उन क्रियाओ को व्यवस्थित किया जो जीवन मे सम्बन्धित है। हम दूसरे शब्दों में कह सकते हैं कि उसके द्वारा 'शिक्षालय व समाज के जीवन' को केन्द्रीय विषय माना गया है। गान्धी की बेसिक शिक्षा का मुख्य उद्देश्य व्यक्तित्व का सम्पूर्ण विकास तथा आत्म-निर्भरता का विकास करना था। इस उद्देश्य की प्राप्ति के लिये उन्होने 'हस्तकला' को केन्द्रीय विषय माना।

ड्यूवी ने इस प्रकार की सम्बद्धता को सामंजस्यीकरण (Integration) के नाम से पुकारा। ड्यूवी के सामंजस्यीकरण मे बालक स्वयं अनुभवो मे सम्बन्ध स्थापित करता है। परन्तु हर्बर्ट के सह-सम्बन्ध के सिद्धान्त मे शिक्षक द्वारा सम्बन्ध स्थापित किया जाता है। इस सह-सम्बन्ध के शिक्षाशास्त्रियो ने और विस्तृत करके केन्द्रीय-पाठ्य-क्रम (Core-Curriculum) सामुज्जयन

(Fusion) तथा व्यापक क्षेत्रीय पाठ्य-क्रम (Broad Field Curriculum) के सिद्धान्त बनाये।

**सह-सम्बन्ध के उद्देश्य :** अर्थशास्त्र की शिक्षा में सह-सम्बन्ध अधोलिखित उद्देश्यों से स्थापित किया जाता है :—

(१) सह-सम्बन्ध का प्रमुख उद्देश्य यह है कि इसके स्थापन से पाठ्य-क्रम के भार को कम किया जाता है। सभ्यता एवं संस्कृति के विकास ने विभिन्न विषयों को जन्म दिया है। इसलिये स्कूल के पाठ्य-क्रम में पढ़ाये जाने वाले विषयों की संख्या बहुत बढ़ गई है, जिसका अध्यापन समन्वित शिक्षा के अभाव में बहुत कठिन है। इसलिये पाठ्य-क्रम को सरल बनाने के लिये विभिन्न विषयों का दूसरे से सह-सम्बन्ध स्थापित करना आवश्यक हो गया है। अतः अर्थशास्त्र का शिक्षण दूसरे विषयों के सह-सम्बन्ध से किया जाना चाहिये।

(२) समन्वित शिक्षा का दूसरा उद्देश्य पाठ में रुचि जागृत करना है। अतः पाठ में रोचकता उत्पन्न करने के लिये अर्थशास्त्र का दूसरे विषयों में सह-सम्बन्ध स्थापित करना अति आवश्यक है। इस प्रकार सम्बन्ध स्थापित करने से बालक अपनी रुचियों के अनुसार शिक्षा ग्रहण करने में समर्थ होगा और प्राप्त किया हुआ ज्ञान उसके लिये स्थायी एवं उपयोगी सिद्ध होगा।

(३) सह-सम्बन्ध का उद्देश्य यह भी है कि इसके द्वारा छात्रों एवं शिक्षकों के समय की बचत की जाती है, क्योंकि छात्र तो समन्वित शिक्षा द्वारा कम से कम समय में अधिक से अधिक तथ्यों का ज्ञान प्राप्त कर लेता है। दूसरे शिक्षकों को यह लाभ है कि बहुत से विषयों में एक से प्रकरण होते हैं, वह उनको पृथक-पृथक विषयों के अन्तर्गत न पढ़ाकर समन्वित रूप से पढ़ा सकता है। इस प्रकार उसके समय की भी बचत हो जाती है। उदाहरणार्थ—भूगोल, इतिहास, नागरिकशास्त्र, कृषिशास्त्र, भौतिक एवं रसायनशास्त्र से सम्बन्धित पाठ्य-विषयों की जानकारी अर्थशास्त्र के बहुत से प्रकरणों में अनिवार्य है। जैसे अर्थशास्त्र तथा नागरिकशास्त्र में बालक ग्राम-पंचायत, जिले का शासन, ग्रामीण समस्याएँ आदि का अध्ययन करते हैं। यदि शिक्षक इनको एक विषय में पढ़ाते समय दूसरे विषयों के अनुसार उनके महत्त्व स्पष्ट कर दे तो पर्याप्त समय की बचत कर सकता है।

(४) समन्वय के द्वारा ज्ञान की अखण्डता का ज्ञान कराया जा सकता है। जिस प्रकार प्राकृतिक दशाओं में विभिन्नता होते हुए भी उनमें एकता पाई जाती है, उसी प्रकार ज्ञान-राशि में अनेकत्व में एकता का सिद्धान्त छिपा

हुआ है। इस एकता के ज्ञान का बोध कराने के लिये समन्वित शिक्षा आवश्यक है। इस सिद्धान्त को ध्यान मे रखकर अर्थशास्त्र का शिक्षण दूसरे विषयों की शिक्षा से पृथक न करके समन्वित रूप से करना चाहिए।

(५) सह-सम्बन्ध का एक मुख्य उद्देश्य यह है कि इसके द्वारा छात्रों को व्यावहारिक बनाया जाता है। यदि अर्थशास्त्र की शिक्षा का अन्य विषयों के साथ सम्बन्ध स्थापित नही किया गया तो उसकी शिक्षा का व्यावहारिक पक्ष अछूता ही रह जायगा। इसलिये अर्थशास्त्र-शिक्षण का अन्य विषयों के साथ समन्वय स्थापित करना अति आवश्यक है। ड्यूवी का मत है कि शिक्षा ही जीवन है। जब शिक्षा जीवन है तो उसको जीवक की ठोस परिस्थितियों से सम्बन्धित करना चाहिए। इसलिये उसने शिक्षालय मे जीवन की ठोस परिस्थितियो को शिक्षा प्रदान करने के लिये आधार बनाया था। इन्ही के द्वारा समस्त विषयो को शिक्षा प्रदान करने के लिये कहा। अतः अर्थशास्त्र-शिक्षण का जीवन की व्यावहारिक स्थितियों से सम्बन्धित होना अत्यन्त आवश्यक है।

(६) सह-सम्बन्ध के द्वारा छात्रो में सामाजिक गुणो अर्थात् सहयोग, सहकारिता, उदारता, सहिष्णुता, सत्य तथा असत्य की पहिचान, प्रेम, सहानुभूति, नतृत्व आदि का विकास किया जाता है। इसलिए अर्थशास्त्र का अन्य विषयो से समन्वय स्थापित किया जाय, जिससे छात्रो मे उपरोक्त गुणो का विकास हो सके और उनमे अधिक नागरिकता के गुण उत्पन्न किये जा सके।

(७) समन्वय के द्वारा संकीर्ण विशिष्टता से छात्रो को बचाया जा सकता है। विशिष्ट अध्यापन प्रणाली में प्रत्येक अध्यापक अपने-अपने विषय को उच्च एव महत्त्वपूर्ण बतलाता है और उसके अध्ययन पर अधिक बल देता है। इससे ज्ञान की एकता का नाश होता है तथा छात्र भी भूल मे पड जाते है कि किस विषय को अधिक महत्त्व दिया जाय। इन दोषो से बचने के लिये समन्वय का होना परम आवश्यक है। अतः अर्थशास्त्र-शिक्षण मे सदैव दूसरे विषयो से सानुबन्ध स्थापित करना चाहिए।

(८) सह-सम्बन्ध छात्रो को मानवीय सम्बन्धो के समझने मे बहुत सहायता पहुंचाता है। अर्थशास्त्र एक सामाजिक विज्ञान है। यदि इसका दूसरे सामाजिक विज्ञानो से सम्बन्ध स्थापित नही किया गया तो वह अकेला मानवीय सम्बन्धो को स्पष्ट नही कर सकता। इसलिये उसका अन्य विषयो से सम्बन्ध स्थापित करना आवश्यक है। जब तक छात्रो को यह ज्ञात नही होगा कि विज्ञान ने किस प्रकार आर्थिक जीवन को प्रभावित किया है, तब तक वे

मानवीय सम्बन्धों को ठीक प्रकार से नहीं समझ पायेंगे। इसको स्पष्ट करने के लिये हमें प्राकृतिक विज्ञानों से अर्थशास्त्र का सम्बन्ध स्थापित करना चाहिए।

**सह-सम्बन्ध के प्रकार**—(१) शीर्षात्मक सह-सम्बन्ध (Vertical Correlation)।

(२) अनुप्रस्थीय सह-सम्बन्ध (Horizontal Correlation)।

(३) जीवन से सह-सम्बन्ध (Correlation with Life)।

**(१) शीर्षात्मक सह-सम्बन्ध**—इसके अन्तर्गत एक ही विषय के विभिन्न अंगों में समन्वय स्थापित किया जाता है। उदाहरणार्थ—अर्थशास्त्र के विभिन्न अंगों जैसे, उत्पत्ति, उपभोग, वितरण, विनिमय तथा राजस्व आदि में सम्बन्ध स्थापित किया जाय। यदि शिक्षक किसी वस्तु की उत्पत्ति के विषय में अध्यापन कर रहा है तो वह उसके वितरण एवं उपभोग के विषय में बताकर पाठ को रोचक बना सकता है। इस प्रकार वह छात्रों की रुचि उत्पन्न करके पाठ को सरल बना सकता है।

**(२) अनुप्रस्थीय सह-सम्बन्ध**—इसके अनुसार पाठ्य-क्रम के विभिन्न विषयों का एक-दूसरे से सम्बन्ध स्थापित किया जाता है। इस प्रकार का सह-सम्बन्ध दो रीतियों से स्थापित किया जा सकता है। वे इस प्रकार है—

(अ) आकस्मिक सह-सम्बन्ध (Incidental Correlation)।

(ब) व्यवस्थित सह-सम्बन्ध (Planned Correlation)।

**(अ) आकस्मिक सह-सम्बन्ध**—इस प्रकार के समन्वय में दैनिक शिक्षण को रोचक तथा व्यापक बनाने के लिए आवश्यकतानुसार अन्य विषयों में पठित सामग्री का प्रयोग किया जाता है जिसमे पाठ को समझने में विशेष सहायता मिलती है और समस्त ज्ञान की एकता का बोध होता है। इसके लिए अध्यापक कोई पूर्व-व्यवस्था नहीं करता, वरन् पढ़ाते समय किसी बिन्दु या प्रकरण को अधिक व्यापक दृष्टि से सरल बनाने के लिए दूसरे विषयों की सामग्री का प्रयोग कर लेता है। अर्थशास्त्र पढ़ाते समय यदि भूगोल का आकस्मिक प्रसंग आ जाता है और यह आवश्यकता प्रतीत होती है कि भूगोल के उस अंश का ज्ञान नहीं कराया जा सकता तो भूगोल के उस अंश का ज्ञान कराना आकस्मिक समन्वय कहलायेगा। उदाहरणार्थ—यदि शिक्षक चीनी के उत्पादन के विषय में अध्यापन कर रहा है तो वह इसके लिए आवश्यक कच्चे माल जैसे गन्ने का

भौगोलिक विवरण प्रस्तुत कर सकता है—गन्ने के लिए मिट्टी, जलवायु, वर्षा या पानी आदि।

(ब) **व्यवस्थित सह-सम्बन्ध**—इसमें विभिन्न विषयों की सामग्री को ऐसे क्रम मे चुना जाता है कि एक विषय के शिक्षण मे अन्य विषयों का निकट सम्बन्ध रहे, जो सामग्री एक विषय में पढ़ाई जाती है उसी का न्यूनाधिक अन्य विषयो मे प्रयोग हो, परन्तु दृष्टिकोण की भिन्नता के साथ। ऐसे सम्बन्ध को आयोजित या व्यवस्थित सह-सम्बन्ध कहते हैं। जिस शिक्षालय में कक्षाध्यापक-प्रणाली प्रचलित है वहाँ इस प्रकार के समन्वय के स्थापित करने में कोई कठिनाई नहीं होती। परन्तु जहाँ विशेषज्ञ-शिक्षक-प्रणाली है वहाँ इसके स्थापित करने में असुविधा उत्पन्न होती है। वर्तमान शिक्षा-जगत् में व्यवस्थित सह-सम्बन्ध का प्रयोग अधिक उपयोगी माना जाता है।

(३) **जीवन से सह-सम्बन्ध**—हर्बर्ट स्पेन्सर महोदय के अनुसार शिक्षा का मुख्य अभिप्राय छात्रों को भावी जीवन के लिए तैयार करना है। अतः इस उद्देश्य की प्राप्ति हम तभी कर सकते है जब शिक्षालय की शिक्षा का बाह्य-जगत् के क्रिया-कलापों से सम्बन्ध स्थापित किया जायगा। अर्थशास्त्र को जीवन से सम्बन्धित करने का मुख्य अभिप्राय यह है कि उसके नियमों, सिद्धान्तो एवं प्रवृत्तियो की शिक्षा बाह्य जगत् के प्रसगों के द्वारा दी जाय जिससे वे उनका प्रयोग व्यावहारिक जीवन में कर सकें।

**अर्थशास्त्र का अन्य विषयों से सह-सम्बन्ध**—जैसा कि हम प्रस्तुत अध्याय मे कह चुके है कि अर्थशास्त्र के तथ्यों का संगठन इस प्रकार किया जाय कि उनमे शीर्षात्मक एवं अनुप्रस्थीय सम्बन्ध स्थापित हो सके। अर्थशास्त्र का विद्यालय के अन्य विषयो के साथ क्या सम्बन्ध है ? इसी को देखना हमारा यहाँ मुख्य उद्देश्य है।

## अर्थशास्त्र तथा नागरिक शास्त्र
## (Economics and Civics)

नागरिकशास्त्र सुखद सामाजिक जीवन की कला तथा नागरिको के कर्तव्यों व अधिकारों का ज्ञान प्रदान करता है। जब कि अर्थशास्त्र मनुष्य की आर्थिक क्रियाओ का अध्ययन करता है। यह शास्त्र समाज के उस अंग का वर्णन करता है जिसमें धन की उत्पत्ति, वितरण, उपभोग, विनिमय तथा राजस्व सम्बन्धी क्रियाएँ निहित रहती है। इस प्रकार दोनों ही शास्त्र मानव

का अध्ययन करते है : परन्तु उनके क्षेत्र भिन्न-भिन्न है। केवल एक नागरिकता से सम्बन्धित विषयों तथा दूसरा मनुष्य के अर्थ-सम्बन्धी क्रिया-कलापों की व्याख्या करना है। इस विभिन्नता के होते हुए भी दोनों शास्त्र एक दूसरे के सहयोगी है। जब अर्थशास्त्र धन की उत्पत्ति तथा वितरण का विवेचन करता है तो उसे नागरिक शास्त्र की आवश्यकता पड़ती है। नागरिक शास्त्र इस बात के लिये कानून बनाता है कि नागरिक पर कौन-कौन से कर लगाये जायें तथा उनको किस विधि से वसूल किया जाय ? दूसरी तरफ अर्थशास्त्र यह बतलाता है कि मनुष्य की कुछ मौलिक आवश्यकताएँ होती है। उनकी पूर्त्ति होना परम आवश्यक है। जिस समाज मे इन आवश्यकताओं की पूर्त्ति नही की जाती वहाँ सफल नागरिकता असम्भव है। इस प्रकार दोनों शास्त्र एक दूसरे की न्यूनता के पूरक है। अर्थशास्त्र नागरिकता को सफल बनाने के लिये वितरण तथा उत्पादन का उपयोग उपयुक्त ढंग से प्रयोग करने पर बल देता है और उसको समाजवादी अर्थव्यवस्था के रूप मे परिवर्तित करता है जिससे समाज का प्रत्येक व्यक्ति अपनी योग्यता एवं क्षमता के अनुसार उत्पादन एवं उपभोग कर सके। इसके साथ ही यह उत्पादन, वितरण एव उपभोग सामाजिक हित का ध्यान में रखकर किया जाना चाहिए। यदि अर्थशास्त्र का शिक्षक इन दोनों शास्त्रो का शिक्षण समन्वित रूप से करे तो वह छात्रो मे सफल नागरिकता के गुणो का विकास कर सकता है। इसके साथ ही वह अपने राष्ट्र की आर्थिक उन्नति के लिए छात्रों को सजग एवं तत्पर नागरिक के रूप मे परिवर्तित कर सकता है, जिससे राष्ट्र को आर्थिक दृष्टि से पर्याप्त लाभ होगा। अर्थशास्त्र का नागरिक शास्त्र के साथ दोनों प्रकार की विधियों से सह-सम्बन्ध स्थापित किया जा सकता है। नीचे कुछ प्रकरण दिये जा रहे हैं जिनमे अर्थशास्त्र का शिक्षक नागरिक शास्त्र मे समन्वय स्थापित कर सकता है—

(१) आर्थिक विकास योजनाएँ

(२) वितरण की समस्या

(३) ब्याज

(४) लगान

(५) मजदूरी

(६) उपभोग

## अर्थशास्त्र तथा भूगोल
## (Economics and Geography)

भूगोल मे पृथ्वी का अध्ययन किया जाता है अर्थात् विश्व की प्राकृतिक दशाओ, उपज आदि का वर्णन किया जाता है। प्रत्येक राष्ट्र की आर्थिक स्थिति उसकी भौगोलिक स्थितियो पर निर्भर होती है, उदाहरणार्थ —इग्लैण्ड को उसकी भौगोलिक स्थितियो ने एक व्यापारिक राष्ट्र बनाया। इसके अतिरिक्त कुछ विद्वानो का मत है कि प्राकृतिक वातावरण मनुष्य के रहन-सहन, रीति-रिवाज, भाषा, शारीरिक गठन आदि को निर्धारित करता है। आधुनिक काल के कुछ भूगोल-शास्त्री इस बात से पूर्णतया सहमत नही है। उनका विचार है कि भूगोल मानव का अध्ययन करता है। इस प्रकार हम कह सकते है भूगोल मनुष्य तथा उसकी प्राकृतिक परिस्थितियो का अध्ययन करता है। प्राकृतिक दशा, जलवायु, वन, जीव-जन्तु, खनिज पदार्थ आदि जो कि भूगोल मे प्राकृतिक परिस्थितियो के अन्तर्गत गिने जाते है; परन्तु अर्थशास्त्र मे इन्ही को भूमि के अन्तर्गत रखा जाता है। अर्थशास्त्र में उन वस्तुओ के वितरण के विषय में जानकारी प्राप्त की जाती है। इस प्रकार भूगोल तथा अर्थशास्त्र को विषय-वस्तु मे पर्याप्त साम्यता पाई जाती है। इसके अतिरिक्त भूगोल अर्थशास्त्र की शिक्षा के लिये पृष्ठभूमि का कार्य करता है। उदाहरणार्थ यदि कोई व्यक्ति किसी स्थान पर कारखाना खोलना चाहता है तो उसे सर्वप्रथम उस स्थान की भौगोलिक परिस्थितियों का ज्ञान आवश्यक है। इसके अभाव मे वह अपने कार्य को पूर्ण नही कर सकता। इस प्रकार अर्थशास्त्र के शिक्षक का यह परम कर्तव्य है कि वह अर्थशास्त्र का भूगोल के साथ प्रसंगानुसार सह-सम्बन्ध स्थापित करे। यदि वह ऐसा नही करेगा तो वह अपने विषय को छात्रों के लिये रोचक एवं ग्राह्य नहीं बना सकता। अर्थशास्त्र का प्रस्तुतीकरण करते समय शिक्षक भूगोल के साथ आकस्मिक एवं व्यवस्थित दोनो प्रकार से सह-सम्बन्ध स्थापित कर सकता है। नीचे कुछ प्रकरण प्रस्तुत किये जा रहे है जिनमे अर्थशास्त्र का भूगोल से सह-सम्बन्ध स्थापित करना आवश्यक हो जाता है—

(१) भारतीय खनिज पदार्थ
(२) भारतीय वन सम्पत्ति
(३) उद्योग-धन्धो का स्थानीयकरण
(४) भारतीय व्यापार
(५) शक्ति के साधन

(६) आर्थिक जीवन का विकास
(७) उत्पत्ति के साधन—भूमि, श्रम एवं पूंजी।
(८) भारतीय कृषि
(९) भारतीय पशु-सम्पत्ति
(१०) सिंचाई के साधन
(११) यातायात के साधन
(१२) फसलें
(१३) घरेलू उद्योग-धन्धे
(१४) आर्थिक विकास योजनाएं

## अर्थशास्त्र तथा वाणिज्यशास्त्र
## (Economics and Commerce)

वाणिज्यशास्त्र मे उद्योग, व्यापार तथा संगठन आदि का अध्ययन किया जाता है। दूसरे शब्दों मे हम कह सकते है कि इसके अन्तर्गत उत्पादन से लेकर वितरण तक समस्त क्रियायें आती है। इसके अतिरिक्त इसकी परिधि में इन क्रियाओ से सम्बन्धित व्यक्ति एवं संस्थाओ की कार्य-प्रणाली भी आती है। इस प्रकार वाणिज्यशास्त्र का बहुत व्यापक क्षेत्र है। इसमे अर्थशास्त्र की बहुत सी विषय-वस्तु का अध्यापन किया जाता है। इसके अध्यापन का मुख्य उद्देश्य छात्रों को व्यापार, उद्योग, बैंक व्यवस्था, डाक व्यवस्था, आयात-निर्यात, लेखा-कार्य आदि का ज्ञान प्रदान करना है जिससे वे अपने व्यावहारिक जीवन में सफलतापूर्वक अपने राष्ट्र की उन्नति मे सहयोग दे सकें, क्योंकि राष्ट्र की आर्थिक स्थिति पर ही इनकी उन्नति निर्भर होती है। अतः अर्थशास्त्र के शिक्षक का यह परम कर्तव्य है कि वह अपने छात्रों को राष्ट्र की आर्थिक स्थिति से परिचित कराये और अपने विषय का वाणिज्यशास्त्र से समन्वय स्थापित करे जिससे छात्र यह समझने मे समर्थ हो सके कि इन आर्थिक स्थितियों में कौनसा उद्योग या व्यापार सफलतापूर्वक संचालित किया जा सकता है। दूसरे अर्थशास्त्र-शिक्षण का भी मुख्य ध्येय राष्ट्र की आर्थिक उन्नति अर्थात् कृषि उद्योग एवं व्यापार आदि की उन्नति एवं विकास करना है। इस प्रकार ये दोनो शास्त्र एक दूसरे के सहयोगी है। अतः अर्थशास्त्र का अध्यापन करते समय शिक्षक का यह परम कर्तव्य है कि वह आवश्यकतानुसार इन दोनो का समन्वय करता चलेगा। अर्थशास्त्र का वाणिज्यशास्त्र के साथ दोनों प्रकार से समन्वय

स्थापित किया जा सकता है। नीचे अर्थशास्त्र के कुछ प्रकरण दिये जा रहे हैं जिनमें वाणिज्यशास्त्र के साथ सह-सम्बन्ध स्थापित करना आवश्यक है—

(१) भारतीय व्यापार
(२) मुद्रा
(३) ग्रेशम का नियम
(४) बैंक-व्यवस्था
(५) साख तथा साख-पत्र
(६) द्रव्य
(७) व्यावसायिक संगठन के स्वरूप
(८) उद्योगों का विकास

## अर्थशास्त्र तथा इतिहास
## (Economics and Histoy)

इतिहास को मानव सभ्यता का कोष कहा गया है, जिससे सामाजिक, आर्थिक, राजनैतिक, धार्मिक तथा सांस्कृतिक उन्नति का विश्लेषण प्राप्त होता है। इतिहास भूतकाल का विश्लेषण करके वर्तमान को स्पष्ट करता है तथा इसके साथ ही भविष्य के लिये मार्ग प्रदर्शित करता है। प्रो० जोन्स (Jones) के शब्दों में "इतिहास जीवन के अनुभवों का वास्तविक भण्डार है और आज का युवक इतिहास का अध्ययन इसलिए करता है जिससे वह मानव-जाति के अनुभवों से लाभ प्राप्त कर सके।" दूसरी ओर अर्थशास्त्र मानव की आर्थिक क्रियाओं पर बल देता है। परन्तु इन प्रयत्नों एवं क्रियाओं का बालक को महत्त्व तभी प्राप्त हो सकता है जब वह उनके भूतकालीन इतिहास का ज्ञान प्राप्त कर ले। इसलिये अर्थशास्त्र के सिद्धान्तों एवं प्रवृत्तियों का प्रस्तुतीकरण करने के लिये उनकी ऐतिहासिक पृष्ठभूमि का ज्ञान देना अति आवश्यक है। अतः हम कह सकते हैं कि इतिहास भी भूगोल की भाँति अर्थशास्त्र-शिक्षण के लिये पृष्ठभूमि का कार्य करता है। इस प्रकार दोनों शास्त्रों में सह-सम्बन्ध स्थापित करना आवश्यक हो जाता है। उदाहरणार्थ—नीचे अर्थशास्त्र के कुछ प्रकरण दिये जा रहे है जिनमें अर्थशास्त्र का इतिहास के साथ समन्वय स्थापित किया जा सकता है—

(१) माल्थस का जनसंख्या का सिद्धान्त
(२) भारतीय व्यापार
(३) आर्थिक जीवन का विकास

(४) विनिमय के स्वरूप
(५) भारत की मुद्राएँ
(६) भारत के यातायात के साधन
(७) भारतीय उद्योग

## अर्थशास्त्र तथा कृषि विज्ञान
## (Economics and Agriculture)

भारत की अधिकांश जनता ग्रामों में रहती है। उसका मुख्य पेशा खेती है। इस प्रकार उसका मुख्यतः आर्थिक जीवन कृषि उद्योग पर ही निर्भर होता है। इसकी उन्नति पर ही राष्ट्र की उन्नति तथा जनता का रहन-सहन का उच्च स्तर निर्भर है। कृषि विज्ञान छात्रों को मिट्टी, अच्छे बीज, खाद, पानी, यंत्र आदि का समुचित उपयोग करना सिखाता है। अर्थशास्त्र के ज्ञान के द्वारा छात्र अपने आर्थिक जीवन को समझने में समर्थ हो सकते हैं तथा इसका कृषि विज्ञान से सम्बन्ध स्थापित करके अपने आर्थिक जीवन को उन्नतशील बनाने में सफल हो सकते है। अतः इन दोनों विज्ञानों में समन्वय स्थापित करना अत्यन्त आवश्यक है। अर्थशास्त्र के निम्नलिखित प्रकरणों में कृषि विज्ञान से सह-सम्बन्ध स्थापित करना आवश्यक है—

(१) भारतीय सिंचाई के साधन
(२) भारतीय ऋण-ग्रस्तता एवं उसका समाधान
(३) कृषि की उन्नति की समस्या
(४) पशुपालन की समस्या
(५) गहरी तथा विस्तृत खेती
(६) फसलों को कीटाणुओं से बचाने के साधन

## अर्थशास्त्र तथा गणित एवं अंकशास्त्र
## (Economics and Mathematics and Statistics)

अर्थशास्त्र के नियमों, सिद्धान्तों एवं प्रवृत्तियों का निर्धारण मुख्यतः प्राप्त आंकड़ों के आधार पर किया जाता है। अंकशास्त्र का सम्बन्ध इन्हीं आँकड़ों के एकीकरण एवं उनके आधार पर तथ्यों की पुष्टि करने से है। 'माल्थस' का जनसंख्या सम्बन्धी सिद्धान्त, द्रव्य परिमाण का सिद्धान्त, मजदूरी कोष सिद्धान्त, आदि अंकशास्त्र एवं गणित की देन है। इस प्रकार हम कह सकते हैं कि अर्थशास्त्र की नींव अंकशास्त्र एवं गणित की आधार-शिला पर

अवलम्बित है । इसलिए इन दोनों शास्त्रो में समन्वय स्थापित करना सरल एवं सुगम है । अर्थशास्त्र का अध्यापक आर्थिक नियमो का स्पष्टीकरण करते समय गणित से समन्वय कर सकता है । वह छात्रो से ग्राफ तथा रेखाचित्र आदि बनवाते समय गणित एव अंकशास्त्र की उपयोगिता पर प्रकाश डाल सकता है । अर्थशास्त्र के अधोलिखित प्रकरणो मे अंकशास्त्र तथा गणित मे सह-सम्बन्ध स्थापित करना आवश्यक है—

(१) माल्थस का जनसख्या सिद्धान्त
(२) द्रव्य परिमाण का सिद्धान्त
(३) मजदूरी कोष सिद्धान्त
(४) उत्पत्ति नियम
(५) उपभोग नियम
(६) माँग तथा पूर्ति का नियम
(७) बंक व्यवस्था
(८) व्यापार
(९) चैक
(१०) बंक [illegible]

## अर्थशास्त्र तथा भौतिक विज्ञान
## (Economics and Physical Science)

अर्थशास्त्र तथा भौतिक विज्ञानो का घनिष्ठ सम्बन्ध है । भौतिक विज्ञानो का अर्थशास्त्र पर बहुत गहरा प्रभाव पड़ता है । इन विज्ञानो के आधार पर अर्थशास्त्र के बहुत से नियमो एव सिद्धान्तो का निर्माण एवं उनकी परिभाषाएँ दी गई है। उदाहरणार्थ— कृषि सम्बन्धी रसायन-शास्त्र क्रमागत उत्पत्ति-ह्रास नियम के निर्माण में आधारशिला का कार्य करता है । उत्पत्ति तथा उपभोग की परिभाषाएँ भौतिक विज्ञानों के इस सत्य पर आधारित है कि न तो पदार्थ का उत्पादन किया जा सकता है और न उसको पूर्णतया नष्ट ही किया जा सकता है ।" इसके अतिरिक्त रसायनशास्त्र ने उद्योगों के विकास में पर्याप्त सहायता प्रदान की है । विज्ञान के आविष्कारो ने मानव की आर्थिक समृद्धि में चार चाँद लगा दिये है । इन आविष्कारो ने आर्थिक समृद्धि मे किस प्रकार सहायता प्रदान की है ? इस प्रश्न का उत्तर अर्थशास्त्र का विद्यार्थी भौतिक विज्ञानो की जानकारी के अभाव में नहीं दे सकता । इसलिये अर्थशास्त्र

का इन भौतिक विज्ञानो से सह-सम्बन्ध स्थापित करना आवश्यक है। सह-सम्बन्ध स्थापित करने के योग्य प्रकरण नीचे दिये जा रहे है—

(१) खनिज पदार्थ
(२) वन-सम्पत्ति
(३) व्यापार
(४) विभिन्न उद्योग-धन्धे
(५) यातायात के साधन
(६) संदेशवाहन के साधन।

## अर्थशास्त्र तथा मनोविज्ञान
## ((Economics and Psychology)

मनोविज्ञान मानव के मन तथा आचरण का अध्ययन करता है। इसके अन्तर्गत क्रिया, इच्छा, सन्तोष, सुख-दुख, त्याग आदि भावों की विवेचना की जाती है। इन्हीं मनोवैज्ञानिक तथ्यो के आधार पर अर्थशास्त्र मे बहुत से नियमों एवं सिद्धान्तो का प्रतिष्ठापन किया गया है। इस प्रकार मनोविज्ञान ने अर्थशास्त्र को बहुत प्रभावित किया है। मनोविज्ञान ने मानव-जीवन की समस्त क्रियाओ को प्रभावित किया है। इसके प्रभाव के कारण अर्थशास्त्र के क्षेत्र में औद्योगिक मनोविज्ञान (Industrial Psychology), मनोविज्ञान की एक पृथक शाखा के रूप मे विकसित हुआ। इसके द्वारा कारखानो के मजदूरो की मनोदशाओ का ज्ञान प्राप्त किया जाता है। अर्थशास्त्र के साथ मनोविज्ञान का समन्वय इसलिये भी आवश्यक है कि मनुष्य के विचारों का स्वरूप मुख्यतः आर्थिक स्थितियों पर निर्भर रहता है। इसलिये अर्थशास्त्र के शिक्षक का परम कर्त्तव्य हो जाता है कि वह इन दोनों शास्त्रो में सह-सम्बन्ध स्थापित करे। नीचे कुछ प्रकरण दिये जा रहे है जिनमे अर्थशास्त्र के साथ मनोविज्ञान का सह-सम्बन्ध स्थापित किया जा सकता है—

(१) मांग तथा पूर्त्ति का नियम
(२) ग्रेशम का नियम
(३) सम-सीमान्त उपयोगिता का नियम
(४) मजदूरों की कार्य-क्षमता की वृद्धि का सिद्धान्त
(५) क्रमागत उपयोगिता ह्रास नियम
(६) श्रमिकों की समस्याएँ एवं उनका समाधान।

## QUESTIONS

1. How would you Correlate the teaching of Economics with other branches of social studies ? Discuss limitation and possibilities in bringing out integration among these subjects. (B. T. 1955)

2. How would you correlate the teaching of Economics with the other subjects of the school Curriculum ? Illustrate your answer with suitable examples. (B T. 1959)

3. Show how would you correlate the teaching of Economics with Geography, Commerce and Civics. Give examples in support of your answer. (B. T. 1960)

4. How would you correlate the teaching of Economics with that of Commerce or Geography ? Illustrate your answer with examples. (B. T. 1961)

अध्याय १०

# अर्थशास्त्र में परीक्षा

## (Examination in Economics)

आधुनिक काल मे परीक्षा शैक्षिक प्रक्रिया का एक अभिन्न अंग हो गया है। केवल शैक्षिक प्रक्रिया का ही नही, वरन् जीवन की प्रत्येक प्रक्रिया की परीक्षा एक महत्त्वपूर्ण तथा अविच्छिन्न अंग है, क्योकि इसके द्वारा हमे बालक की ज्ञान-उपलब्धियो (Achievements) का परिचय प्राप्त होता है। इसलिये शिक्षक का यह परम कर्त्तव्य है कि वह मूल्यांकन के कार्य-क्रम की पूर्ण जानकारी रखे। यदि शिक्षक सफल शिक्षक बनना चाहता है तो उसे मूल्यांकन तथा परीक्षा के सम्पूर्ण कार्य-क्रम की ओर समुचित रूप से ध्यान तथा समय देना पडेगा। परीक्षा का मुख्य ध्येय शिक्षण के अन्तिम परिणामों अथवा निष्कर्षों को परीक्षित करना है। इस प्रकार हम कह सकते है कि जब परीक्षा के द्वारा निष्पत्तियो का ज्ञान प्राप्त किया जाता है तो अर्थशास्त्र-शिक्षण मे छात्रो की निष्पत्तियो को ज्ञात करने तथा लक्ष्यो की प्राप्ति की प्रगति का पता लगाने के लिए, परीक्षा का महत्त्वपूर्ण स्थान है, क्योकि अर्थशास्त्र-शिक्षण के द्वारा भी छात्र कुछ न कुछ प्राप्त करते हैं।

**परीक्षा का अर्थ तथा वर्गीकरण**—मुहीउद्दीन के अनुसार 'Examination' शब्द का उद्गम 'Examen' नामक शब्द से हुआ है जिसका अर्थ है 'तराजू का पलड़ा' (Tongue of a balance)। इसका साधारण

रूप से प्रयोग ज्ञान या कार्य व्यवस्थित जाँच अथवा परीक्षा के लिए किया जाता है, चाहे वह किसी वाह्य शक्ति के द्वारा ली जाय या स्वयं शिक्षालय के शिक्षकों के द्वारा आयोजित हो। परीक्षा का वर्गीकरण अधोलिखित प्रकार से किया जा सकता है—

(१) लिखित परीक्षा

(२) मौखिक परीक्षा

(३) प्रयोगात्मक परीक्षा

**लिखित परीक्षा**— इसके अन्तर्गत छात्रों को निश्चित समय मे कुछ प्रश्नो के उत्तर लिखने पड़ते है। शिक्षाक्रम में तीन प्रकार की लिखित परीक्षाएँ प्रचलित है, वे इस प्रकार है—

(अ) निबन्धात्मक परीक्षा (Essay Type)

(ब) विवरणात्मक परीक्षा (Dissertation Type)

(स) नवीन प्रणाली या वस्तुनिष्ठ परख (New Type or Objective Test)

(२) **मौखिक परीक्षा**—यह परीक्षा चारित्रिक रूप से वैयक्तिक होती है। इसके द्वारा बालक की योग्यता का सुगमता से आकलन किया जा सकता है। इसमें छात्र परीक्षक के समक्ष उसके प्रश्नों का उत्तर देता है जिससे परीक्षक उसके गुणों; उदाहरणार्थ—अभिव्यंजना, आत्म-विश्वास आदि की जाँच कर लेता है।

(३) **प्रयोगात्मक परीक्षा**—इसके अन्तर्गत बालक अपने कार्य का नमूना या आदर्श परीक्षक के समक्ष प्रस्तुत करता है।

**परीक्षा के उद्देश्य** (Purposes of Examination) :

(१) निदर्शन (Guidance) के लिए परीक्षा परमावश्यक है।

(२) छात्रों की ज्ञानोपार्जनकरण के माप के लिए भी इसकी आवश्यकता है जिससे उनको आगे की शिक्षा प्रदान की जा सके। उनके क्रमिक ज्ञानार्जन का परिचय प्राप्त करने के लिए भी यह अनिवार्य है।

(३) छात्रों के वर्गीकरण के लिए भी परीक्षा अनिवार्य है। इसके अभाव में हम उनका वर्गीकरण नही कर सकते।

(४) जीवन में स्तर (Standard) स्थापित करने के लिए यह अपेक्षित

है, जिससे समाज की संतुष्टि की जा सके। यह सामाजिक तथा आर्थिक जीवन-स्तर स्थापित करने के लिए अत्यन्त आवश्यक है।

(५) सीखने की क्रिया तथा शिक्षण के प्रोत्साहन के लिए भी इसकी आवश्यकता होती है। इसके द्वारा छात्रों को अध्ययन करने के निमित्त उत्प्रेरित किया जा सकता है।

(६) शिक्षक, शिक्षण-पद्धति, पाठ्य-पुस्तक, पाठ्य-क्रम तथा विषय-सूची की उपयोगिता की जांच करने के लिए यह अत्यन्त आवश्यक है।

(७) छात्रों की असावधानी, विशिष्ट योग्यता, कमी तथा अभिरुचि का ज्ञान इसके द्वारा प्राप्त किया जा सकता है।

## निबन्धात्मक परीक्षा

इस प्रकार की परीक्षा में प्रश्नों का उत्तर निबन्ध के रूप में देना पड़ता है अर्थात् हम कह सकते हैं कि प्रश्नों का उत्तर विस्तारपूर्वक निश्चित समय में देना पड़ता है। हमारे शिक्षालयों मे अर्थशास्त्र की निष्पत्तियों का ज्ञान प्राप्त करने के लिए इसी परीक्षा का प्रयोग किया जाता है। इस प्रकार की परीक्षा के प्रति अर्थशास्त्र में उपयोगिता तथा सार्थकता के प्रश्न पर विवाद उठ गया है। कतिपय विद्वानों का मत है कि अर्थशास्त्र की परीक्षा के लिए यह उपयोगी नही है, क्योंकि इसमें अधीकरण सम्बन्ध तत्त्व (Subjective Element) अधिक है। इसके विपक्ष में अधोलिखित बातें कही जाती है—

(१) ऐसा विश्वास है कि निबन्धात्मक परीक्षा स्मरण-शक्ति की ही जाँच करती है अर्थात् यह स्मरण-शक्ति की ही परीक्षा है।

(२) यह रटने की प्रक्रिया पर अधिक बल देती है जो मनोवैज्ञानिक रूप से दोषपूर्ण है।

(३) इसमें भाषा का प्राधान्य है। जिस विद्यार्थी का भाषा पर अधिकार है वह इसमें अधिक सफलता प्राप्त कर सकता है। इसमें सुलेख, भाषा, स्पष्टीकरण एवं प्रस्तुतीकरण का ढंग आदि बातें अधिक कार्य करती है।

(४) इसके द्वारा छात्रो के ज्ञान की वास्तविक जाँच नहीं हो पाती है। इसमें अवसर की प्रधानता रहती है।

(५) इसमें वस्तुनिष्ठता एवं पुष्टता की कमी है।

निबन्धात्मक परीक्षा के पक्ष में अधोलिखित तर्क उपस्थित किये जाते हैं—

(१) यह सत्य है कि रटने की क्रिया अति हानिकारक है परन्तु एक राजनीतिज्ञ, सम्वाददाता तथा सुवक्ता के लिए रटना परम उपयोगी है।

(२) जॉन ड्यूबी ने बालक की चार स्वाभाविक शक्तियों का उल्लेख किया है; जिनमें एक शक्ति प्रदर्शन भी है। प्रदर्शन के लिए निबन्धात्मक परीक्षा विशेष लाभदायक है। ड्यूबी इसको सन्तुष्ट करने के लिए भाषा पर अधिकार करने के हेतु कहता है। भाषा के द्वारा बालक अपनी बात का आदान-प्रदान कर सकता है।

(३) इसके द्वारा छात्र किसी वस्तु को क्रम में रखना सीख जाते है। प्रश्न का ठीक प्रकार से क्रम-बद्ध करना एक कला है।

(४) इसके द्वारा छात्र व्याख्या, वैयक्तिक सम्पत्ति एवं विभिन्न तथ्यों में सम्बन्ध स्थापित करना सीख जाते है।

## नवीन प्रणाली या वस्तुनिष्ठ जाँच

मनोविज्ञान ने शिक्षा को महत्त्वपूर्ण योग प्रदान किया है। मनोवैज्ञानिकों ने परीक्षा की कुछ नवीन विधियों का प्रयोग समस्त विषयों में किया है। इन प्रणालियों का उपयोग आजकल लोकप्रिय हो गया है। वस्तुनिष्ठ जाँच द्वारा किसी विषय या कार्य की वस्तुनिष्ठता (Objectivity) की जाँच की जाती है। इसमें छोटे-छोटे प्रश्न रखे जाते है और उनके उत्तर भी छोटे-छोटे हैं। इस प्रणाली की परीक्षा में लिखना भी कम पड़ता है। अर्थशास्त्र-शिक्षण में वस्तुनिष्ठ जाँचों का प्रयोग निबन्धात्मक परीक्षा के साथ-साथ प्रचुरता से किया जाना चाहिये, क्योकि इन जाँचों के द्वारा सत्यासत्य, तथ्य-ज्ञान, विचार-ज्ञान, व्यक्तित्व ज्ञान तथा निर्णय शक्ति की परख की जा सकती है। इस प्रणाली में वे सब गुण विद्यमान है जो एक उत्तम परीक्षा में होने चाहियें। वस्तुनिष्ठ जाँच के अधोलिखित गुण हैं—

**(१) वस्तुनिष्ठता** (Objectivity)— नवीन प्रणाली की जाँचों में यह गुण पाया जाता है। वस्तुनिष्ठता से तात्पर्य है वैयक्तिक तत्वों का निष्कासन। प्रश्न के उत्तर को चाहे एक ही परीक्षक जाँचे अथवा अनेक, उनके माप में भिन्नता न हो। प्रश्न ऐसे होने चाहिये जिनके उत्तर एक ही हों, जिससे परीक्षक का व्यक्तिगत पक्षपात, उसकी मनोदशा, छात्रों की भाषा, शैली आदि का प्रभाव उसके निर्णय पर न पड़ सके।

(२) **पुष्टता** (Validity)—जिस वस्तु का माप हम परीक्षा रूपी इस कसौटी से करना चाहते हैं, उसका हम किस सीमा तक माप कर सकते हैं, अर्थात् हम दूसरे शब्दों मे कह सकते है कि जिस वस्तु-विशेष की जाँच करना हमारा मुख्य ध्येय है उसकी जाँच किस सीमा तक इसके द्वारा हुई; अर्थात् उसी की जाँच की गई, अथवा किसी अन्य वस्तु की। इसका पुष्टीकरण इस प्रणाली की जाँच का मुख्य गुण है। अर्थशास्त्र-शिक्षण मे इसका प्रयोग तभी वैध कहा जा सकता है जब इसके द्वारा उसके शिक्षण के उद्देश्यो की परख की जाय।

(३) **विश्वस्तता** (Reliability)—परीक्षा के द्वारा हम जिस वस्तु को मापना चाहते है, वह किस सीमा तक शुद्ध एवं सम्यक् रूप से मापी जा सकती है, जिससे हम उसके ऊपर विश्वास कर सकें। वस्तुनिष्ठ जाँच में यह गुण पाया जाता है, उदाहरणार्थ – यदि विश्वसनीय परख के द्वारा किसी बालक की परीक्षा ली जाती है तो उसके प्राप्त अंको में कोई वृद्धि या ह्रास नहीं होना चाहिए। यदि कुछ समय के बाद उसी परख द्वारा बालक की जाँच की जाती है। उसके प्राप्ताकों मे जो अन्तर आयेगा वह नगण्य होगा, क्योंकि यह अन्तर उसके मानसिक विचार परिपक्वता के कारण आयेगा।

(४) ये जाँच परीक्षण एवं अंकन में बहुत सरल है। इनके प्रयोग से कम से कम समय में अधिकाधिक उत्तर पुस्तिकाओं का अंकन किया जा सकता है।

(५) वस्तुनिष्ठ परख प्रयोग की दृष्टि से भी सुविधाजनक है। इनका प्रयोग प्रत्येक शिक्षक सरलता एवं सफलता के साथ कर सकता है। इनका प्रयोग निबन्धात्मक परीक्षाओं की भाँति एक साथ हजारों छात्रों के परीक्षण के लिये किया जा सकता है। वस्तुनिष्ठ परख में मुख्यतः निम्नलिखित प्रकार के जाँच (Test) होते हैं—

(१) सत्यासत्य जाँच (True-False Type Test)
(२) अपवर्त्य-चयन जाँच (Multiple Choice Test)
(३) तुलनात्मक या प्रतिद्वन्दात्मक जाँच (Matching Type Test)
(४) रिक्तस्थान पूरक जाँच (Completion Test)

(१) **सत्यासत्य जाँच**— इस प्रणाली की जाँच में 'सत्य' व 'असत्य' कथन दिये जाते हैं। छात्रों को उनके आगे सत्य या असत्य लिखना पड़ता है।

**उदाहरण—**

नोट—निम्नलिखित कथनों को पढ़ो और सत्य कथन के सम्मुख R तथा असत्य कथन के आगे F लिखो --

(१) अर्थशास्त्र की भाषा में कृषक उत्पादक है .....
(२) साधारण बोलचाल में डाक्टर एक उत्पादक है। .....
(३) अर्थशास्त्र की भाषा में चर्मकार उत्पादक है। .....
(४) अर्थशास्त्र में बढ़ई उत्पादक नहीं है। .....
(५) अर्थशास्त्र एक भौतिक विज्ञान है। .....
(६) आगमन रीति में सामान्य से विशिष्ट की ओर जाते हैं। .....
(७) श्रम नाशवान नहीं है। .....
(८) श्रम गतिशील होता है। .....
(९) भूमि उत्पत्ति का निश्चेष्ट साधन है। .....
(१०) भूमि में स्थान-गतिशीलता होती है। .....

(२) **अपवर्त्य-वयन जाँच**—इसमें एक कथन के उत्तर के रूप में कई विकल्प दिये रहते है, जिनमें से छात्रों को अधिक उपयुक्त उत्तर छाँटने के लिये कहा जाता है।

उदाहरण—

निर्देश—निम्नलिखित प्रश्नो के साथ दिये हुए कई विकल्पो में से जो सत्य हो, उनके सम्मुख ✓ चिन्ह लगाओ—

(i) मेज बन जाने पर लकड़ी की उपयोगिता बढ़ गई, क्योंकि अब लकड़ी का
(अ) समय परिवर्तन हो गया,
(ब) स्थान परिवर्तन हो गया,
(स) रूप परिवर्तन हो गया,
(द) अधिकार परिवर्तन हो गया।

(ii) भाखड़ा-नाँगल बाँध किस प्रदेश में बनाया गया है—
(अ) उत्तरप्रदेश,
(ब) बिहार,
(स) पूर्वी पजाब,
(द) राजस्थान में।

(iii) भारत में सदाबहार वन कहाँ पाये जाते हैं—
(अ) दक्षिणी पंजाब,
(ब) राजस्थान,

(स) मध्यभारत,
(द) उपहिमालय प्रदेश,
(य) पेनिनसुला के पश्चिमी तट में।

(३) **तुलनात्मक या प्रतिद्वन्द्वात्मक जाँच**—इनमें छात्रों को दो सूचियों के विषयों की समानता या सम्बन्ध स्थापित करने के लिये कहा जाता है। इसमें पूर्ण कथनों को दो भागों में विभक्त करके भी रखा जा सकता है और उनको छात्रों द्वारा पूर्ण करवाया जा सकता है। ये विषय या विभक्त कथन बिना किसी क्रम के अनुसार दिये जा सकते हैं।

उदाहरण—

नोट—नीचे कुछ शहरों के नाम दिये हुए है। उनके समक्ष अव्यवस्थित रूप में उनकी प्रसिद्ध वस्तुएँ रखी हैं। उनसे सम्बन्धित प्रसिद्ध वस्तु का उनके समक्ष क्रमांक लिखो—

| | |
|---|---|
| बम्बई | लोहे के उद्योग |
| आगरा | कैंचियाँ |
| जमशेदपुर | रुई |
| रानीगंज | साड़ियाँ |
| बड़ौदा | कलई के बर्तन |
| मेरठ | सूती वस्त्र के उद्योग |
| मुरादाबाद | कच्चे लोहे |
| कानपुर | चूड़ियाँ |
| जगाधरी | फर्श-दरी, संगमरमर पर खुदाई कार्य |
| फीरोजाबाद | चमड़े का काम |
| बनारस | पेपर का मिल |

(४) **रिक्त स्थान पूरक जाँच**—इनमें अधूरे वाक्य दिये जाते हैं। इनमें छात्रों को रिक्त स्थानों की उपयुक्त शब्दों द्वारा पूर्त्ति करनी पड़ती है।

उदाहरण—

(१) प्रसिद्ध अर्थशास्त्री.....के अनुसार अर्थशास्त्र धन का विज्ञान है।
(२) भारत में सबसे अधिक कोयला.....क्षेत्र से प्राप्त होता है।
(३) आवश्यकताओं की पूर्त्ति के लिये.....चाहिये।

(४) बढ़ई ने मेज बनाकर लकड़ी का.....परिवर्तित कर दिया।

(५) उपभोक्ता की बचत=कुल उपयोगिता—.....।

## नवीन प्रणाली या वस्तुनिष्ठ जाँच के दोष
## (Defects of New Type or Objective Tests)

सामाजिक विषयों की जाँच के लिये जब इस प्रणाली का प्रयोग किया गया तब निम्नलिखित दोष दृष्टिगोचर हुए—

(१) इन प्रश्नों के बनाने में अत्यधिक कठिनाई का सामना करना पड़ता है, सबसे अधिक कठिनाई अपवर्त्य-चयन जाँच के प्रश्नों के बनाने में होती है, क्योंकि सभी मनुष्यो की विचारधाराएँ एक समान नहीं होती हैं।

(२) यह जाँच कल्पित कार्यों (Guess work) के लिये छात्रों को प्रोत्साहित करती है। यह केवल छात्रों को इधर-उधर चिन्ह लगाने के अतिरिक्त अन्य कुछ नही सिखाती है। इनके प्रयोग से छात्रों की अभिव्यंजना शक्ति का विकास नहीं हो पाता। इससे छात्रो में प्रश्नों का उत्तर लिखने का ढंग नहीं विकसित किया जा सकता।

(३) इसके विरुद्ध तीसरा प्रबल आरोप यह है कि इन प्रयोग से छात्रों के चिन्तन, तर्क आदि शक्तियों का विकास नही होता। साधारण प्रश्नों तक ही इन प्रयोगों का उपयोग हो सकता है। इनके द्वारा किसी प्रकार की शृंखला अथवा क्रमबद्धता नहीं स्थापित की जा सकती। बालकों में चिन्तन तथा तर्क-शक्ति का विकास निबन्धात्मक परीक्षा द्वारा ही किया जा सकता है।

उपरोक्त दोषो के देखने के पश्चात् हम कह सकते है कि अर्थशास्त्र में छात्रों की ज्ञानोत्पत्तियों का परिचय प्राप्त करने के लिये निबन्धात्मक एवं वस्तुनिष्ठ जाँच दोनों का ही प्रयोग किया जाना चाहिए।

## QUESTIONS

1. What are the 'Objective tests' so called ? In what ways are the new type tests in Economics better than those of the old essay type ? (B. T. 1961.)

2. Discuss the Importance of Examination in Economics. what type of tests will be used by the Economics teacher for finding out the achievements of the pupils.

# परिशिष्ट

### अर्थशास्त्र में पाठ-योजना बनाने के लिए कुछ संकेत

पाठ-योजना के द्वारा अधोलिखित बातों को प्रदर्शित किया जाता है—

(१) छात्रों ने जो ज्ञान अर्जित कर लिया है।

(२) छात्रों को जिस दिशा के लिए करना है तथा जिस नवीन पाठ के सम्बन्ध में उनको ज्ञान देना है।

(३) यह विषय के सामान्य तथा विशिष्ट उद्देश्यों की व्याख्या करती है, जिनको कि शिक्षण द्वारा प्राप्त करना है।

(४) यह शिक्षक के अनुभवों का कथन है।

(५) यह विषय के व्यवस्थित ज्ञान का परिचय देती है।

पाठ-योजना के आधारों के लिए विश्व को हर्बर्ट की सामान्य विधि का सहारा लेना पड़ता है। हर्बर्ट एक आदर्शवादी दार्शनिक था, उसके मतानुसार शिक्षा का मुख्य ध्येय चरित्र-निर्माण करना है। उसने इस उद्देश्य की प्राप्ति के लिये शिक्षक को महत्त्वपूर्ण स्थान दिया। उसने शिक्षक को शिक्षा प्रदान करने के लिए सामान्य विधि प्रदान की। इस विधि के द्वारा वह शिक्षण करके इस उद्देश्य की प्राप्ति करे। उसने इस सामान्य विधि मे चार सोपान अर्थात् 'स्पष्टता' ( Clearness ), 'सम्बन्ध' ( Association ), 'व्यवस्था' ( System ) तथा 'प्रयोग' ( Method ) रखे। उसके शिष्य जिलर ने 'स्पष्टता' नामक सोपान को दो भागों में विभाजित किया—प्रथम 'प्रस्तावना'

( Introduction ) तथा द्वितीय 'प्रस्तुतीकरण' अथवा 'विषय-प्रवेश' ( Presentation ) । हर्बर्ट के नाम से ही यह पद-प्रणाली प्रसिद्ध है। वस्तुतः ये पंचपद विज्ञान तथा गणित के शिक्षण के लिए बहुत ही उपयोगी हैं। परन्तु इनका उपयोग ज्ञानात्मक पाठों में थोडे बहुत परिवर्त्तन के साथ किया जा सकता है। नीचे हम अर्थशास्त्र के पाठ-सूत्र को किस प्रकार लिखा जाता है', इसके विषय में कुछ संकेत प्रस्तुत कर रहे है—

सर्वप्रथम पाठ-सूत्र पुस्तिका में अधोलिखित बातों को लिखना चाहिए—

## पाठ-सूत्र संख्या

| | |
|---|---|
| दिनाङ्क | कक्षा |
| विषय | कालांश |
| प्रकरण | अवधि |
| विद्यालय का नाम | औसत आयु |

छात्राध्यापक का नाम

इन सबको लिखने के पश्चात् सामान्य उद्देश्य लिखे जाने चाहिएँ। ये उद्देश्य सभी पाठों में एक से रहते है। इनको विषय के शिक्षण द्वारा प्राप्त करना अर्थशास्त्र के शिक्षक का मुख्य ध्येय है। ये सामान्य उद्देश्य इस प्रकार है—

**सामान्य उद्देश्य** – (१) छात्रों को अर्थशास्त्र के प्रारम्भिक सिद्धान्तो से परिचित कराना तथा उन्हें इस योग्य बनाना कि वे आने वाली अवधि में जीवनगत व्यावहारिक एव अर्थ-सम्बन्धी समस्याओ को सुलझाने मे समर्थ हो सकें।

(२) छात्रों को समाज के आर्थिक पक्ष तथा राष्ट्र की समस्याओं को सुलझाने के ढंगों से अवगत कराना।

(३) छात्रों को अर्थशास्त्र के व्यावहारिक महत्त्व का ज्ञान कराना।

(४) छात्रों को कल्याणकारी राज्य की स्थापना के लिए सरकार द्वारा किये गये प्रयत्नों की समीक्षा करने की योग्यता प्रदान करना।

(५) अर्थशास्त्र के अध्ययन द्वारा छात्रों के मस्तिष्क को तार्किक बनाना तथा विचार-शक्ति एवं ज्ञान-शक्ति को वस्तुओं की उत्पत्ति, उपभोग, विनिमय तथा वितरण के सम्बन्ध में अनुशासित करना।

(६) छात्रों में उदारता की भावना का विकास करना एवं अन्य देशों की आर्थिक समस्याओं को समझते हुए, उनके साथ सहानुभूति रखने को प्रेरित करना।

(७) विश्व की आर्थिक प्रगति के साथ अपने देश की प्रगति की तुलना करने की योग्यता प्रदान करना।

(८) अर्थशास्त्र के द्वारा छात्रों को राष्ट्र की आर्थिक स्थिति सुधारने एवं समृद्धिशाली बनाने के लिये प्रोत्साहित करना।

(९) छात्रों में आर्थिक नागरिकता के गुणों का विकास करना।

(१०) छात्रों की अवलोकन शक्ति को विकसित करना।

**मुख्य उद्देश्य**—यह प्रकरण से सम्बन्धित होता है। यह सरल तथा संक्षिप्त रूप से प्रस्तुत किया जाना चाहिए।

**सहायक-सामग्री**—यह वह साधन है जिसके द्वारा पाठ के शिक्षण मे प्रभावोत्पादकता उत्पन्न की जा सकती है। इसका प्रत्येक पाठ में उपयोग करना आवश्यक नहीं है। जहाँ इसके उपयोग की आवश्यकता हो वहाँ ही इसका प्रयोग करना चाहिए। दूसरे, एक पाठ मे अधिक सहायक सामग्री प्रयुक्त नही करनी चाहिए। तीसरे यह अधिक व्ययी न हो। इसको ठीक स्थल पर ही प्रयुक्त करना चाहिए, तभी इसके प्रयोग से मनोवांछित उद्देश्यों की प्राप्ति हो सकती है।

**पूर्वज्ञान**—यह प्रस्तावना की आधार-शिला है। इसके निर्धारण में शिक्षक को सतर्कता बरतनी चाहिए। इसी के आधार पर पाठ का प्रारम्भ होता है।

**प्रस्तावना**—इससे हमारा पाठ प्रारम्भ होता है। इसके मुख्य उद्देश्य नीचे दिये जा रहे है—

(१) पूर्वज्ञान की जाँच करना।

(२) नवीन ज्ञान के लिए प्रभावोत्पादक वातावरण उत्पन्न करना।

(३) नवीन ज्ञान को ग्रहण करने के लिए छात्रों को तत्पर बनाना।

प्रस्तावना के लिए कोई निश्चित नियम नहीं है कि वह प्रश्नो के द्वारा ही प्रस्तावित की जाय। शिक्षक किसी चित्र, मानचित्र, चार्ट तथा कहानी सुनाकर भी अपने पाठ को प्रारम्भ कर सकता है। यदि प्रश्नों को प्रस्तावना में स्थान दिया गया तो उस समय शिक्षक को यह ध्यान रखना चाहिए कि उनमें मनोवैज्ञानिक क्रम स्थापित हो गया है या नही। वे एक दूसरे से पृथक नहीं होने चाहिएँ; बल्कि उनमें एक प्रकार का सम्बन्ध हो। वे प्रश्न निर्धारित

पूर्वज्ञान पर आधारित होने चाहिएँ। परन्तु इस बात का ध्यान रखना चाहिए कि प्रस्तावना अधिक लम्बी न हो जाय।

**उद्देश्य कथन** – प्रस्तावना के उपरान्त शिक्षक अपने पाठ के विशिष्ट उद्देश्य को छात्रों के समक्ष प्रस्तुत करे। यह सरल भाषा में संक्षिप्त रूप से प्रस्तुत किया जाना चाहिए। इसके द्वारा 'हम' की भावना उत्पन्न हो जानी चाहिए।

**प्रस्तुतीकरण**—इस पद मे नवीन पाठ को प्रस्तुत किया जाता है। इसमें पाठ का दूसरे विषयो से यथास्थान समन्वय स्थापित करना चाहिए। पाठ को प्रस्तुत करने के लिए छात्राध्यापक को पाठ के अनुसार शिक्षण-पद्धतियों का प्रयोग करना चाहिए। इस स्तर पर ही सहायक-सामग्री का उपयोग किया जाता है।

**श्यामपट सारांश**—पाठ को सुविधानुसार दो या तीन अन्वितियों में विभाजित किया जा सकता है। प्रत्येक अन्विति की समाप्ति पर श्यामपट सारांश दिया जाना चाहिए। श्यामपट सारांश के विषय में विभिन्न प्रशिक्षण महाविद्यालयो में विभिन्न रीतियाँ प्रचलित है। कुछ तो पुनरावृत्ति के प्रश्नों के उत्तरों को ही श्यामपट सारांश के रूप में दे देते है। कुछ विद्यालयों में श्यामपट सारांश पाठ के विकास के साथ-साथ विकसित किया जाता है। उसको छात्रों को साथ-साथ नही लिखने देना चाहिए, बल्कि प्रस्तुतीकरण के बाद मे उनको लिखने का आदेश दिया जाना चाहिए। इस प्रकार कार्य करने से शिक्षक के निरीक्षण के लिए भी अवसर प्राप्त हो सकता है। यह दूसरे प्रकार की रीति ही उपयुक्त प्रतीत होती है।

**पुनरावृत्ति**—इसका मुख्य ध्येय छात्रो द्वारा अर्जित किये हुए ज्ञान की जाँच करना है। यह स्तर शिक्षक के कार्य की भी परीक्षा लेता है। इसमें अधिक समय नहीं लगाना चाहिए।

**गृहकार्य** गृहकार्य का मुख्य उद्देश्य छात्रों मे स्वाध्ययन की आदत का निर्माण करना है तथा अर्जित किये हुए ज्ञान को स्थिर एवं विस्तृत भी बनाना है। इसको निर्धारित करते समय शिक्षक को छात्रों की रुचि, योग्यता, वैयक्तिक विभिन्नताओं आदि का ध्यान रखना चाहिए। शिक्षक को दिये हुए गृहकार्य को प्रतिदिन जाँचना चाहिए।

इन संकेतों को और अधिक सरल एवं स्पष्ट बनाने के हेतु कुछ पाठ्य-सूत्र अगले पृष्ठों में दिये जा रहे हैं।

# पाठ–योजना (१)

| | |
|---|---|
| **दिनाङ्क**—१४–२–६१ | **समय चक्र** —प्रथम |
| **विषय** —अर्थशास्त्र | **समय** —४० मिनट |
| **प्रकरण**—उत्पत्ति और उसके ढङ्ग | **औसत आयु**—१५ वर्ष |
| **कक्षा** —९ | **विद्यालय** —आर० ई० आई० हाईस्कूल, दयालबाग |

**सामान्य उद्देश्य**—

१. छात्रों की विचार-शक्ति एवं ज्ञान की वृद्धि करना।
२. जीवन में सहयोग एवं आदान-प्रदान का महत्त्व बताना।
३. अर्थशास्त्र के परिज्ञान द्वारा छात्रों के अन्तःकरण में देश-प्रेम का अंकुर प्रस्फुटित करना एवं देश की आर्थिक परिस्थितियों को सुधारने के लिए प्रेरित करना।
४. छात्रों को धनोपार्जन एवं उचित रूप मे धन व्यय करने की क्रियाओं का अध्ययन कराना।
५. छात्रों को उत्पत्ति, उपभोग, विनिमय एवं वितरण का अर्थ समझाना।
६. छात्रों को अर्थशास्त्र के सरल सिद्धान्तों मे अवगत कराना।

**मुख्य उद्देश्य**— छात्रों को उत्पत्ति और उसके ढङ्ग का ज्ञान कराना।

**पूर्व ज्ञान**— छात्र "आवश्यकताओं" तथा "उपयोगिता" के विषय में ज्ञान प्राप्त कर चुके हैं।

**सहायक सामग्री** कक्षा-कक्ष की सहायक सामग्री, कार्य करते हुए चमार का चित्र तथा आगरा बुक स्टोर का चित्र।

**प्रस्तावना—** प्रश्न—मनुष्य की मुख्य-मुख्य आवश्यकताएँ कौन-कौन सी हैं ?

प्रश्न—इन आवश्यकताओं की पूर्त्ति किस साधन के द्वारा की जाती है ?

प्रश्न—धन किस प्रकार कमाया जाता है ?

**उद्देश्य कथन—** आज हम अर्थशास्त्र में उत्पत्ति और उसके ढंग के विषय में पढ़ेंगे।

**प्रस्तुतिकरण—** प्रश्न—किसान किस वस्तु की उत्पत्ति करता है ?

प्रश्न—हम किसान को क्या कहेंगे ?

प्रश्न—कुम्हार क्या कार्य करता है ?

प्रश्न—कुम्हार किस वस्तु की उत्पत्ति करता है ?

प्रश्न—हम कुम्हार को क्या कहेंगे ?

प्रश्न—डाक्टर क्या कार्य करता है ?

प्रश्न—डाक्टर को हम किस श्रेणी में रखेंगे ?

प्रश्न—डाक्टर को उत्पादक क्यों नहीं कहते है ?

**स्पष्टीकरण—** इस प्रकार हम कह सकते है कि जो लोग भौतिक पदार्थों की उत्पत्ति नही करते है उन्हें हम साधारण भाषा में उत्पादक नही कहते है।

प्रश्न—कुम्हार मिट्टी कहाँ से प्राप्त करता है ?

प्रश्न—मिट्टी किसकी देन है ?

प्रश्न—कुम्हार मिट्टी से क्या बनाता है ?

प्रश्न—कुम्हार ने मिट्टी से बर्तन बनाने में क्या किया है ?

प्रश्न—इस बदले हुए स्वरूप से पहले हमारे लिए मिट्टी की उपयोगिता कैसी थी ?

प्रश्न—बर्तन बनने से मिट्टी की उपयोगिता में क्या प्रभाव पड़ा ?

प्रश्न—कुम्हार ने इसमें क्या नवीन उत्पत्ति की है ?

प्रश्न—लकड़ी किसकी देन है ?

प्रश्न—बढ़ई लड़की की मेज किस प्रकार बनाता है ?

प्रश्न—बढ़ई ने इसमें किस नवीन पदार्थ की उत्पत्ति की है ?

प्रश्न—बढ़ई ने लकड़ी की मेज बनाकर क्या किया है।

प्रश्न—इससे तुम किस निष्कर्ष पर पहुँचते हो ?

**स्पष्टीकरण**— इससे यह स्पष्ट हो जाता है कि मनुष्य कोई ऐसा पदार्थ नही बना सकता है जो बिल्कुल नया हो। वह केवल विद्यमान पदार्थ की उपयोगिता में वृद्धि कर सकता है। इसी उपयोगिता-वृद्धि को अर्थशास्त्र में उत्पत्ति कहते है।

चित्र दिखाकर अध्यापक निम्नलिखित प्रश्न करेगा—

प्रश्न - इस चित्र में तुम क्या देखते हो ?

प्रश्न—चमार जूता बनाने के लिए चमड़ा कहाँ से प्राप्त करता है ?

प्रश्न—चमार चमडे को क्या रूप दे रहा है ?

प्रश्न—जूता बनने से पहले चमडे की क्या उपयोगिता थी ?

प्रश्न—जूता बनने के पश्चात् चमड़े की उपयोगिता पर क्या प्रभाव पड़ा ?

प्रश्न—उपयोगिता बढ़ाने के इस ढंग को क्या कहेंगे ?

**स्पष्टीकरण**— इससे स्पष्ट है कि वस्तु के रूप को बदल कर उसको दूसरा रूप दिया जाता है तो इसको 'रूप-परिवर्तन' उपयोगिता वृद्धि कहते हैं।

प्रश्न – लकड़ी कहाँ से प्राप्त होती है ?

प्रश्न—जंगल में लकड़ी की उपयोगिता कैसी होती है ?

प्रश्न—उपयोगिता में वृद्धि करने के लिए लकड़ी को कहाँ ले जाते है ?

प्रश्न—लकड़ी की उपयोगिता में किस प्रकार वृद्धि की गई है ?

प्रश्न—इससे तुम क्या निष्कर्ष निकालते हो ?

**स्पष्टीकरण—** इससे स्पष्ट है कि वस्तु को एक स्थान से दूसरे स्थान पर ले जाकर उसकी उपयोगिता में वृद्धि की जाती है। तो इसको 'स्थान-परिवर्तन' उपयोगिता वृद्धि कहते हैं।

प्रश्न—फसल के समय अनाज क्यों मन्दा रहता है ?

प्रश्न—अनाज अधिक होने से इसके भाव पर क्या प्रभाव पड़ता है ?

प्रश्न—माँग बढ़ने पर मूल्य पर क्या प्रभाव पड़ता है।

प्रश्न—अनाज सस्ता होने पर दुकानदार लोग इस अनाज का क्या करते हैं ?

प्रश्न—अनाज को भरकर रखने से क्या लाभ होता है ?

प्रश्न—इस प्रकार अनाज को रखकर क्या किया गया ?

प्रश्न—इससे तुम क्या निष्कर्ष निकालते हो ?

**स्पष्टीकरण—** कुछ पदार्थ ही ऐसे होते हैं जिनको जितने समय तक रखा जाये उसकी उपयोगिता बढ़ती जाती है जैसे चावल, शराब।

चित्र दिखाते हुए अध्यापक निम्नलिखित प्रश्न करेगा—

प्रश्न—इस चित्र में तुम क्या देखते हो ?

प्रश्न—यह आदमी क्या कर रहा है ?

प्रश्न—पुस्तक पर अधिकार किसका है ?

प्रश्न—जब यह व्यक्ति पुस्तक खरीद लेगा तो अधिकार किसका हो जावेगा ?

प्रश्न—पुस्तक की उपयोगिता में वृद्धि किस प्रकार से हुई ?

प्रश्न—इससे तुम क्या निष्कर्ष निकालते हो ?

**स्पष्टीकरण—** इससे स्पष्ट है कि हम अधिकार परिवर्तन के द्वारा वस्तु की उपयोगिता मे वृद्धि कर सकते है।

**प्रश्न—अध्यापक का क्या कार्य है ?**

**प्रश्न—अध्यापक को अपने विषय का कैसा ज्ञान होता है ?**

प्रश्न—अपने ज्ञान की उपयोगिता शिक्षक को स्वयं के लिए कैसी होती है ?

प्रश्न—एक विद्यार्थी के लिए अध्यापक के ज्ञान की उपयोगिता कैसी है ?

प्रश्न—विद्यार्थी को पढाकर शिक्षक ने क्या किया है ?

प्रश्न—अध्यापक ने विद्यार्थी की उपयोगिता को किस प्रकार बढाया ?

प्रश्न – इससे तुम क्या निष्कर्ष निकालते हो ?

**स्पष्टीकरण**— अपनी सेवाओं से दूसरो की उपयोगिता बढ़ाने को सेवा द्वारा उपयोगिता वृद्धि कहते हैं। अतः गायक, वकील, डाक्टर, रेल्वे अधिकारी सभी उपयोगिता में वृद्धि करते हैं, इसलिए वे उत्पादक है।

प्रश्न—नवीन दवा का विज्ञापन क्यो किया जाता है ?

प्रश्न—जनता मे जानकारी के बिना दवा की उपयोगिता कैसी थी ?

प्रश्न—जनता मे दवा के ज्ञान से दवा की उपयोगिता में क्या परिवर्तन हो गया ?

प्रश्न – इससे तुम क्या निष्कर्ष निकालते हो ?

**स्पष्टीकरण**— जो उपयोगिता ज्ञान का प्रसार करके सृजित की जाती है, वह 'ज्ञान उपयोगिता' कहलाती है।

**पुनरावृत्ति**—

## लपेट श्यामपट पर

**निर्देश**—निम्नलिखित कथनो मे रिक्त स्थानों को भरो—

आवश्यकताओं की पूर्त्ति के लिए चाहिए। [ ]

बढ़ई ने मेज बना कर लकड़ी का कर दिया।[ ]

निम्नलिखित कथनों को पढ़ो और असत्य कथन के सम्मुख W तथा सत्य के सम्मुख R लिखो।

अर्थशास्त्र की भाषा में कृषक उत्पादक है। [ ]

साधारण बोलचाल मे डाक्टर एक उत्पादक है।[ ]

अर्थशास्त्र की भाषा में बढ़ई उत्पादक नहीं है।[ ]

अर्थशास्त्र की भाषा में चमार उत्पादक है।[ ]

निम्नलिखित कथनों के कई उत्तर दिए हुए हैं जो उपयुक्त हो उस स्थान के सम्मुख चिन्ह लगाओ ।

(१) बढ़ई के द्वारा लकड़ी से मेज बनाए जाने पर लकड़ी की उपयोगिता बढ गई क्योंकि अब लकडी का
(अ) समय परिवर्तन हो गया । .....
(ब) स्थान परिवर्तन हो गया । .....
(स) रूप परिवर्तन हो गया । .....
(द) अधिकार परिवर्तन हो गया । .....

(२) लकड़ी को एक स्थान से दूसरे स्थान पर ले जाने से लकड़ी की उपयोगिता में वृद्धि हो गई क्योंकि अब लकड़ी का
(अ) रूप परिवर्तन हो गया । .....
(ब) स्थान परिवर्तन हो गया । .....
(स) समय परिवर्तन हो गया । .....

(३) चावलों को कुछ समय रखने से चावलों की उपयोगिता मे वृद्धि हो गई क्योंकि अब चावलों का
(अ) स्थान परिवर्तन हो गया । .....
(ब) अधिकार परिवर्तन हो गया । .....
(स) समय परिवर्तन हो गया । .....

## श्याम पट सारांश

(१) उपयोगिता वृद्धि को अर्थशास्त्र मे उत्पत्ति कहते है ।
(२) उपयोगिता वृद्धि के ढंग—
(अ) रूप परिवर्तन उपयोगिता ।
(ब) स्थान परिवर्तन उपयोगिता ।
(स) समय परिवर्तन उपयोगिता ।
(द) अधिकार परिवर्तन उपयोगिता ।
(इ) सेवा द्वारा उपयोगिता ।
(फ) ज्ञान द्वारा उपयोगिता ।

गृहकार्य— उत्पत्ति किसे कहते हैं ? उपयोगिता वृद्धि के ढंगों पर उदाहरण सहित एक लेख लिखो ?

# पाठ–योजना (२)

| | |
|---|---|
| **दिनाङ्क**—२४–२–६१ | **समय चक्र** —६ |
| **विषय** —अर्थशास्त्र | **समय** —४० मिनट |
| **प्रकरण**—माँग की लोच | **औसत आयु** --१५ वर्ष |
| **कक्षा** —९ | **विद्यालय** —एम० ए० हाई० स्कूल, आगरा |

**सामान्य उद्देश्य**—

१. छात्रों को अर्थशास्त्र के प्रारम्भिक सिद्धान्तों से अवगत कराना।

२. छात्रों की कल्पना-शक्ति का विकास करना।

३. छात्रों को राष्ट्रीय तथा अन्तर्राष्ट्रीय दृष्टिकोण प्रदान करना।

४. छात्रों में स्वतन्त्र अध्ययन विधि का जागरण करना।

५. छात्रों को यह ज्ञान कराना कि अर्थशास्त्र का उद्देश्य केवल ज्ञान प्रदान करना ही नहीं अपितु व्यावहारिक प्रश्नों पर प्रकाश डालना भी है।

६. छात्रों को आर्थिक समस्याओं का ज्ञान कराना।

७. छात्रों को यह ज्ञान कराना कि अर्थशास्त्र के अध्ययन से किस प्रकार मानव समाज को अधिक सुखी बनाया जा सकता है।

**विशिष्ट उद्देश्य**— छात्रों को माँग की लोच से परिचित कराना।

**पूर्वज्ञान**— छात्रों को माँग का अर्थ तथा मूल्य एवं माँग का सम्बन्ध ज्ञात है।

**सहायक सामग्री—** लपेट श्यामपट पर लिखी समस्याएँ।

**प्रस्तावना—** प्रश्न—किसी वस्तु के मूल्य में वृद्धि का उसकी माँग पर क्या प्रभाव होता है ?

प्रश्न—वस्तु के मूल्य में कमी होने पर उसकी माँग कैसी हो जावेगी ?

प्रश्न—वस्तु के मूल्य में परिवर्तन का उसकी माँग पर क्या प्रभाव होता है ?

प्रश्न – वस्तु के मूल्य परिवर्तन के साथ जब उसकी माँग में परिवर्तन होता है, तो इस क्रिया को क्या कहते हैं ?

**उद्देश्य कथन—** वस्तु के मूल्य परिवर्तन से जब उसकी माँग में भी परिवर्तन होता है तो इस क्रिया को ही माँग की लोच कहते हैं, आज हम इसी का अध्ययन करेंगे।

**प्रस्तुतिकरण—** छात्राध्यापक, छात्रों के सम्मुख निम्नलिखित समस्या प्रस्तुत करके प्रश्न करेगा।

**समस्या**—"कमीज के रेशमी कपड़े का मूल्य ८ रुपया प्रति गज है तथा राम इस मूल्य पर एक कमीज का कपड़ा खरीदता है। जब कपड़े का भाव ६ रुपया प्रति गज हो जाता है तो वह दो कमीज का कपड़ा खरीदने लगता है किन्तु जब कपड़े का मूल्य १० रुपया प्रति गज हो जाता है तो वह एक भी कमीज का कपड़ा नहीं खरीदता।"

प्रश्न—८ रुपया प्रति गज के भाव पर राम कितनी कमीज का कपड़ा खरीदता है ?

प्रश्न—६ रुपया प्रति गज हो जाने पर कितनी कमीज का कपड़ा लेने लगता है ?

प्रश्न—कपड़े के भाव में कितने रुपए प्रति गज की कमी होती है ?

प्रश्न—यह कमी कितने प्रतिशत है ?

प्रश्न—राम मूल्य में कमी होने पर कितनी कमीज का कपड़ा खरीदता है ?

प्रश्न—राम की कपड़े की माँग में कितनी वृद्धि हो जाती है ?

प्रश्न—राम की कपड़े की माँग में कितने प्रतिशत वृद्धि हो जाती है ?

प्रश्न—इस प्रकार कपड़े के मूल्य तथा माँग में से किसमें अधिक परिवर्तन होता है ?

प्रश्न—१० रुपया प्रति गज के भाव पर राम कितनी कमीज का कपड़ा खरीदता है ?

प्रश्न—तब राम की कपड़े की माँग में कितनी कमी हो जाती है ?

प्रश्न—इस बार कपडे के मूल्य तथा माँग में से किसमें अधिक परिवर्तन हुआ है ?

अध्यापक कथन— अब किसी वस्तु के मूल्य में कम परिवर्तन होने पर उसकी माँग में अधिक परिवर्तन होता है तो वस्तु की माँग अधिक लोचदार कहलाती है।

प्रस्तुतिकरण अब छात्राध्यापक, छात्रों के सम्मुख दूसरी समस्या प्रस्तुत करके प्रश्न करेगा।

समस्या—"दूध का भाव ८ आने सेर है तब श्याम २ सेर दूध लेता है। जब दूध का भाव ४ आने सेर हो जाता है तो वह ४ सेर दूध खरीदने लगता है। किन्तु जब दूध का भाव १ रुपया सेर हो जाता है तो वह केवल १ सेर दूध ही खरीदता है।"

प्रश्न—श्याम ८ आने सेर पर कितना दूध खरीदता है ?

प्रश्न—श्याम ८ आने सेर पर कुल कितने का दूध खरीदता है ?

प्रश्न—४ आने सेर पर श्याम कितना दूध खरीदता है ?

प्रश्न—इस मूल्य पर कुल कितने का दूध लेता है ?

प्रश्न—दूध की आधी कीमत हो जाने पर श्याम दूध की कितनी मात्रा अधिक खरीदने लगता है ?

प्रश्न—जब दूध १ रुपये सेर बिकने लगता है तब श्याम दूध कितना लेने लगता है ?

प्रश्न—दूध का मूल्य ८ आने से १ रुपया सेर अर्थात् दूना हो जाने पर श्याम दूध की कितनी मात्रा कम कर देता है ?

प्रश्न—दूध के मूल्य तथा माँग दोनों की घटा बढी में क्या अनुपात है ?

अध्यापक कथन— हम देखते है कि दूध की माँग तथा मूल्य के परिवर्तन में समान अनुपात है—इसी प्रकार जब किसी वस्तु के मूल्य के अनुपात में ही उसकी माँग में परिवर्तन होता है तो ऐसी दशा में उस वस्तु की माँग लोचदार कहलाती है।

प्रस्तुतिकरण— अब छात्राध्यापक, छात्रों के सम्मुख तीसरी समस्या प्रस्तुत करेगा तथा प्रश्न पूछेगा।

**समस्या**—"गेहूँ का भाव २० रुपया प्रति मन है तो एक परिवार में ३ मन गेहूँ लगता है। जब गेहूँ का भाव २५ रुपया प्रति मन हो जाता है तो परिवार में २$\frac{1}{2}$ मन गेहूँ लगने लगता है, और इसी प्रकार जब गेहूँ का भाव १५ रुपया प्रति मन हो जाता है तो परिवार में ३$\frac{1}{2}$ मन गेहूँ लगने लगता है।

प्रश्न—२० रुपया प्रति मन पर परिवार में कितना गेहूँ लगता है ?

प्रश्न—२५ रुपया प्रति मन पर परिवार में कितना गेहूँ प्रयोग किया जाता है ?

प्रश्न—१५ रुपये पर परिवार में कितना गेहूँ लगने लगता है ?

प्रश्न—२० रुपये से २५ रुपये प्रति मन का भाव होने पर गेहूँ की मात्रा कितनी कम परिवार मे लगती है ?

प्रश्न—तब गेहूँ के मूल्य तथा माँग में से किसमें कम परिवर्तन होता है ?

प्रश्न—गेहूँ का मूल्य जब २० रुपये से १५ रुपये प्रति मन होता है तो परिवार में कितना गेहूँ अधिक प्रयोग होने लगता है ?

प्रश्न—इस दशा में भी गेहूँ के मूल्य तथा माँग में से किसमें कम परिवर्तन होता है ?

प्रश्न—गेहूँ के मूल्य की तुलना में माँग में कैसा परिवर्तन हो रहा है ?

**अध्यापक कथन—** इस उदाहरण में हम देखते हैं कि गेहूँ के मूल्य की तुलना में उसकी माँग में कम परिवर्तन हो रहा है। इसी प्रकार जब किसी वस्तु के मूल्य की तुलना में उसकी माँग में कम परिवर्तन होता है तो उस वस्तु की माँग को कम लोचदार कहते हैं।

**प्रस्तुतिकरण—** अब छात्राध्यापक, छात्रों के सम्मुख चौथी समस्या प्रस्तुत करेगा तथा प्रश्न पूछेगा।

**समस्या**—"चीनी का भाव १ रुपया सेर है तब एक अध्यापक के परिवार में ७ सेर चीनी प्रति माह लगती है किन्तु कुछ समय पश्चात् उसी भाव पर ६ सेर चीनी लगने लगती है तथा इसी प्रकार कुछ समय के लिए ५ सेर प्रति माह लगने लगती है।"

प्रश्न—चीनी का भाव क्या है ?

प्रश्न—पहिले अध्यापक के परिवार में कितनी चीनी लगती है ?

प्रश्न—कुछ समय पश्चात् कितनी चीनी का प्रयोग होने लगता है ?

प्रश्न—अन्त में अध्यापक के परिवार में कितनी चीनी लगती है ?

प्रश्न—चीनी के भाव में तीनों दशाओं में क्या परिवर्तन होता है ?

प्रश्न—चीनी के मूल्य तथा माँग में से किसमें परिवर्तन होता है ?

**अध्यापक कथन**

किसी वस्तु के मूल्य के स्थिर रहने पर भी जब उसकी माँग में परिवर्तन होता रहता है तो उस वस्तु की माँग पूर्णतः लोचदार कहलाती है। किन्तु यह अवस्था काल्पनिक है।

**प्रस्तुतिकरण—**

छात्राध्यापक, छात्रो के सम्मुख अब पाँचवी समस्या प्रस्तुत करके प्रश्न करेगा।

**समस्या**—"नमक का मूल्य १ आने सेर है, इस मूल्य पर एक परिवार में दो सेर नमक लगता है। किन्तु जब नमक का मूल्य २ आने सेर हो जाता है तो भी परिवार में २ सेर नमक ही प्रयोग किया जाता है, इसी प्रकार नमक का मूल्य दो पैसे सेर होने पर भी परिवार २ सेर नमक का ही प्रयोग करता है।"

प्रश्न—१ आने सेर के भाव पर परिवार में कितना नमक लगता है ?

प्रश्न—नमक का भाव २ आने सेर हो जाने पर परिवार में कितना नमक प्रयोग होने लगता है ?

प्रश्न—नमक के मूल्य मे वृद्धि का उसकी प्रयोग की मात्रा पर क्या प्रभाव पड़ता है ?

प्रश्न—२ पैसे सेर के भाव पर परिवार कितना नमक प्रयोग करता है ?

प्रश्न—नमक के मूल्य मे कमी का उसकी प्रयोग की मात्रा पर क्या प्रभाव होता है ?

प्रश्न—मूल्य के उतार-चढ़ाव का उसकी माँग पर क्या प्रभाव होता है ?

**कथन—**

जब किसी वस्तु के मूल्य परिवर्तन होने पर भी उसकी माँग में कोई परिवर्तन नहीं होता है तो उस वस्तु की माँग पूर्णतः बेलोच कहलाती है।

**पुनरावृत्ति—**

प्रश्न—जब किसी वस्तु के मूल्य में थोड़ा परिवर्तन होने पर उसकी माँग में अधिक परिवर्तन होता है तब उस वस्तु की माँग की लोच कैसी होती है ?

प्रश्न—यदि मूल्य के अनुपात में ही वस्तु की माँग की माँग में परिवर्तन हो तो माँग की लोच कैसी होगी ?

प्रश्न—मूल्य में अधिक परिवर्तन होने पर भी माँग मे कम परिवर्तन हो तब माँग की लोच कैसी होगी ?

प्रश्न—वस्तु के मूल्य में स्थिरता रहने पर भी यदि उसकी माँग में परिवर्तन हो तो उसकी माँग की लोच कैसी होगी ?

प्रश्न—वस्तु के मूल्य में परिवर्त्तन होने पर भी यदि उसकी माँग में कोई परिवर्त्तन न हो तो उसकी माँग की लोच क्या कहलायेगी ?

## श्यामपट साराँश

१. वस्तु के मूल्य के कम परिवर्तनस्वरूप यदि उसकी माँग में अधिक परिवर्तन होता है तो उसकी माँग अधिक लोचदार कहलाती है ।

२. मूल्य के अनुपात में ही यदि माँग में परिवर्तन होता है तो वस्तु की माँग लोचदार कहलाती है ।

३. मूल्य में परिवर्तन होने पर भी उसकी माँग मे कम परिवर्तन होता है तो वस्तु की माँग कम लोचदार कहलाती है ।

४. मूल्य के स्थिर रहने पर भी यदि वस्तु की माँग में परिवर्तन होता रहता है तो वस्तु की माँग पूर्णतः लोचदार कहलाती है ।

५. मूल्य में परिवर्तन होने पर भी यदि माँग मे कोई परिवर्तन न हो तो वस्तु की माँग बेलोचदार कहलाती है ।

**गृहकार्य—** "माँग की लोच एवं उसके प्रकार" पर उदाहरण द्वारा स्पष्ट करते हुए एक लेख लिखो ।

# पाठ–योजना (३)

| | |
|---|---|
| **दिनाङ्क**—२३–२–६१ | **समय चक्र** —६ |
| **विषय** —अर्थशास्त्र | **समय** —४० मिनट |
| **प्रकरण**—माँग का नियम | **औसत आयु** –१८ वर्ष |
| **कक्षा** —१२ वाणिज्य | **विद्यालय** —आर० ई० आई० कालिज, दयालबाग । |

**सामान्य उद्देश्य**—

१. छात्रों को दैनिक जीवन के आर्थिक पक्ष के विषय में सोचने के लिए प्रेरित करना ।

२. छात्रों को अपने देश के आर्थिक ढाँचे से परिचित कराना ।

३. वस्तुओं के उत्पादन, वितरण, विनिमय, उपभोग आदि का सामान्य ज्ञान कराना ।

४. अर्थशास्त्र के सरल सिद्धान्तो एव नियमो मे परिचित कराते हुए दैनिक जीवन मे उनका उपयोग बतलाना ।

५. जीवन मे सहयोग, आदान-प्रदान एवं विनिमय का महत्त्व बतलाना ।

६. किसानों, मजदूरों की समस्याओ से परिचित करा कर उनके प्रति सहानुभूति उत्पन्न करना।

**विशिष्ट उद्देश्य**— छात्रों को माँग के नियम का ज्ञान कराना ।

**सहायक सामग्री**—

१. माँग के नियम की लपेट श्यामपट पर तालिका ।

२. माँग के नियम का रेखाचित्र द्वारा प्रदर्शन ।

३. माँग के नियम को समझाता हुआ मॉडल ।

४. माँग के नियम की लपेट श्यामपट पर मार्शल की परिभाषा ।

**पूर्व ज्ञान—** छात्र आवश्यकता तथा साधारण बोलचाल की भाषा में माँग के अर्थ से परिचित है ।

**प्रस्तावना—** प्रश्न—माँग शब्द से क्या तात्पर्य है ?

प्रश्न—आप अपने दैनिक जीवन की आवश्यक वस्तुओं को कहाँ से लाते हैं ?

प्रश्न—यदि इन वस्तुओं का मूल्य घट जाये तो माँग पर क्या प्रभाव पड़ेगा ?

**उद्देश्य कथन—** आज हम इसी मूल्य परिवर्तन से सम्बन्धित माँग के नियम का अध्ययन करेंगे ।

**प्रस्तुतिकरण—** छात्राध्यापक छात्रो के समक्ष एक समस्या रख कर निम्नलिखित प्रश्न करेगा ।

**समस्या**—मान लीजिये कि नारंगियों का मौसम अभी-अभी शुरू हुआ है और इसका भाव भी बाजार में काफी अधिक है तो—

प्रश्न—इस समय कितने व्यक्ति नारंगियाँ खरीदेंगे ?

प्रश्न—यदि बाद मे नारंगियों का भाव कुछ गिर जाये तो नारंगियों की माँग में क्या परिवर्तन होगा ?

प्रश्न—यदि नारंगियों का भाव बढ़ जाये तो नारंगियों की माँग में क्या परिवर्तन होगा ?

प्रश्न—नारंगियों के भाव के घटने और बढ़ने से नारंगियों की माँग पर क्या प्रभाव पड़ता है ?

प्रश्न—इससे तुम क्या निष्कर्ष निकालते हो ?

**स्पष्टीकरण—** इससे स्पष्ट है कि भाव के घटने पर अधिक व्यक्ति नारंगियों को खरीदते हैं और भाव के बढ़ने पर कम व्यक्ति नारंगियाँ खरीदते हैं ।

छात्राध्यापक मूल्य के परिवर्तन द्वारा माँग पर पड़े प्रभाव को एक तालिका द्वारा प्रदर्शित करेगा और निम्नलिखित प्रश्न पूछेगा—

**नारंगियों की मांग तालिका**

| नारंगियों का मूल्य (रुपयों में) | नारंगियों की माँग (सेरों में) |
|---|---|
| ६ | २ |
| ५ | ३ |
| ४ | ५ |
| ३ | ६ |
| २ | ७ |

प्रश्न—प्रस्तुत तालिका पर सबसे ऊपर क्या लिखा हुआ है ?

प्रश्न—तालिका के प्रथम कोष्ट में क्या प्रदर्शित किया गया है ?

प्रश्न—तालिका के द्वितीय कोष्ट में क्या प्रदर्शित किया गया है ?

प्रश्न—६ रु० मूल्य होने पर नारंगियों की कितनी माँग है ?

प्रश्न—५ रु० मूल्य होने पर नारंगियों की कितनी माँग है ?

प्रश्न—४ रु० मूल्य होने पर नारंगियों की कितनी माँग है ?

प्रश्न—३ रु० मूल्य होने पर नारंगियों की कितनी माँग है ?

प्रश्न—२ रु० मूल्य होने पर नारंगियों की कितनी माँग है ?

प्रश्न—६ रु० और २ रु० मूल्य से प्राप्त होने वाली नारगियों की माँग मे क्या परिणाम निकलता है ?

**स्पष्टीकरण—** इससे स्पष्ट है कि लगातार मूल्य के घटने पर नारंगियों की माँग बढ़ती जाती है और मूल्य के बढ़ने पर नारंगियों की माँग घटती जाती है।

छात्राध्यापक छात्रों की सहायता से माँग के नियम का रेखाचित्र बनायेगा तथा निम्नलिखित प्रश्न करेगा—

प्रश्न—ox – axis पर क्या प्रदर्शित किया गया है ?
प्रश्न—oy – axis पर क्या प्रदर्शित किया गया है ?
प्रश्न—६ रु० कीमत होने पर नारंगियो की माँग कितनी है ?
प्रश्न—प्राप्त अंकों को रेखाचित्र पर किस प्रकार अंकित किया जायगा ?
प्रश्न—जब नारंगियों की कीमत ५ रु० है तो माँग कितनी है ?
प्रश्न—इसको रेखाचित्र पर किस प्रकार प्रदर्शित करेंगे ?
प्रश्न—४ रु० मूल्य पर नारंगियों की माँग कितनी है ?
प्रश्न—इसे रेखाचित्र पर किस प्रकार अंकित करेंगे ?
प्रश्न—३ रु० मूल्य पर नारंगियों की माँग कितनी है ?
प्रश्न—इसे रेखाचित्र पर किस प्रकार अंकित करेंगे ?
प्रश्न—जब नारंगियों की कीमत २ रु० है तो माँग कितनी है ?
प्रश्न—इसे रेखाचित्र पर किस प्रकार प्रदर्शित करेंगे ?
प्रश्न—इन अंकित विन्दुओं का क्या करेंगे ?
प्रश्न—इस प्रकार यह बनी हुई रेखा कौन सी रेखा कहलायेगी ?
प्रश्न—यह रेखा किस प्रवृत्ति को प्रकट कर रही है ?
प्रश्न—आप इससे माँग का क्या नियम निकालते हैं ?

**स्पष्टीकरण**—

इससे स्पष्ट है कि जब किसी वस्तु का मूल्य घट जाता है तो उसकी माँग बढ़ जाती है और जब किसी वस्तु का मूल्य बढ़ जाता है तो उसकी माँग घट जाती है।

छात्राध्यापक छात्रों को माँग का बना हुआ मॉडल दिखाकर निम्नलिखित प्रश्न करेगा—

प्रश्न—प्रस्तुत मॉडल पर क्या लिखा हुआ है ?

प्रश्न—जब मूल्य कम है तो माँग कैसी है ?

प्रश्न—जब मूल्य अधिक है तो माँग कैसी है ?

प्रश्न—इस प्रकार मूल्य और माँग के विपरीत सम्बन्ध से क्या प्रकट होता है ?

**स्पष्टीकरण—** इससे स्पष्ट है कि जब मूल्य कम है तो माँग अधिक है परन्तु इसके विपरीत जब मूल्य अधिक है तो माँग कम है।

प्रश्न—इस प्रकार मूल्य और माँग में कैसा सम्बन्ध है ?

**स्पष्टीकरण—** अतः माँग और मूल्य मे एक प्रकार का विपरीत सम्बन्ध है।

छात्राध्यापक लपेट श्यामपट पर लिखी हुई मार्शल की परिभाषा को पढ़वा कर निम्नलिखित प्रश्न करेगा—

**"यदि अन्य बातें समान रहें तो मूल्य के कम होने पर माँग में वृद्धि और बढ़ने पर माँग में कमी हो जाती है।"** **—मार्शल**

प्रश्न—मार्शल को परिभाषा की क्या विशेषता है ?

**स्पष्टीकरण—** उपर्युक्त कथन मे स्पष्ट है "कीमत घटते ही वस्तु की माँग बढ जाती है और इसके विपरीत कीमत बढ़ते ही वस्तु की माँग घट जाती है, यही माँग का नियम है।

**पुनरावृत्ति—** प्रश्न—माँग का नियम क्या है ?

प्रश्न—माँग और मूल्य में कैसा सम्बन्ध है ?

प्रश्न—माँग की रेखा किस प्रवृत्ति को प्रकट करती है ?

## श्यामपट सारांश

१. कीमत घटते ही वस्तु की माँग बढ़ जाती है और कीमत बढते ही वस्तु की माँग घट जाती है।

२. माँग और मूल्य मे विपरीत सम्बन्ध है।

३. माँग की रेखा वक्र स्थिति को प्रकट करती है।

**गृहकार्य—** माँग के नियम का रेखाचित्र द्वारा स्पष्टीकरण करो।

# पाठ–योजना (४)

| | |
|---|---|
| **दिनाङ्क**—२५-२-६१ | **समय चक्र** —४ |
| **विषय** —अर्थशास्त्र | **समय** —४० मिनट |
| **प्रकरण**—उपभोक्ता की बचत | **औसत आयु**—१८ वर्ष |
| **कक्षा** —१२ वाणिज्य | **विद्यालय** —आर० ई० आई० कालिज, दयालबाग |

**सामान्य उद्देश्य**—

१. छात्रों को अर्थशास्त्र के प्रारम्भिक सिद्धान्तों से अवगत कराना तथा उन्हे इस योग्य बनाना कि वह अपनी व्यावहारिक अर्थ सम्बन्धी समस्याओं को सुचारू रूप से सुलझाने में समर्थ हो सकें।

२. उन्हें देश के विभिन्न आर्थिक प्रयत्नों तथा उत्पादन, उपभोग, विनिमय एवं वितरण का बोध कराना।

३. उन्हें समाज के आर्थिक पहलू तथा देश की आर्थिक समस्याओं को सुलझाने के ढंगों से परिचित कराना।

४. उनके मस्तिष्क को तार्किक बनाना एवं उनकी अवलोकन शक्ति को विकसित करना।

५. उनमें कल्याणकारी राज्य की स्थापना करने की योग्यता प्रदान करना।

६. संसार की आर्थिक प्रगति के साथ अपने देश की आर्थिक प्रगति की तुलना करने की योग्यता प्रदान करना।

**विशिष्ट उद्देश्य—** छात्रों को उपभोक्ता की बचत का ज्ञान कराना।

**सहायक सामग्री—** लपेट श्यामपट पर एक परिभाषा, ग्राफ बोर्ड तथा पेपर।

**पूर्व ज्ञान—** विद्यार्थियों को उपभोग के विषय में ज्ञान प्राप्त है।

**प्रस्तावना—** प्रश्न—मनुष्य वस्तुओं का उपभोग क्यों करता है ?

प्रश्न—आवश्यकताओं की पूर्त्ति हो जाने से क्या प्राप्त होता है ?

प्रश्न—एक व्यक्ति एक वस्तु के लिए १२ आने देने को तैयार है, यदि उसे वह ४ आने में मिल जाती है तो उसे क्या बचत होती है ?

प्रश्न—यह बचत कैसी बचत कहलाती है ?

प्रश्न—इस अतिरिक्त बचत को अर्थशास्त्र में क्या कहते हैं।

**उद्देश्य कथन—** आज हम इसी उपभोक्ता की बचत के विषय में अध्ययन करेंगे।

**प्रस्तुतिकरण—** छात्राध्यापक 'पान' के उदाहरण से उपभोक्ता की बचत के नियम का स्पष्टीकरण करेगा।

प्रश्न—बाजार में लगा हुआ पान कितने का मिलता है ?

प्रश्न—जो व्यक्ति पान खाने का आदी है, पान न मिलने पर पान का कितना मूल्य देने को तैयार हो सकता है ?

प्रश्न—यदि पान उसको ४ नये पैसों में प्राप्त हो जाता है तो उसको कितनी बचत होती है ?

प्रश्न—इस बचत को अर्थशास्त्र में किस नाम से पुकारते हैं ?

**स्पष्टीकरण—** इस प्रकार हम कह सकते हैं कि किसी वस्तु से मनुष्य को जो कुल उपयोगिता प्राप्त होती है तथा उस वस्तु को प्राप्त करने के लिए वह जो कुल द्रव्य

की उपयोगिता व्यय करता है, इनके अन्तर को ही उपभोक्ता की बचत कहते हैं। अर्थात्

**उपभोक्ता की बचत**=वस्तु से प्राप्त हुई कुल उपयोगिता—कुल व्यय किया गया द्रव्य।

**छात्राध्यापक लपेट** श्यामपट पर लिखी **परिभाषा** को एक छात्र से पढ़वा कर छात्रों से प्रश्न पूछेगा। "किसी वस्तु के उपभोग से मनुष्य जो उपभोक्ता की बचत प्राप्त करता है वह उस वस्तु के उपभोग से मिलने वाली सन्तुष्टि तथा उस वस्तु को प्राप्त करने में त्यागी गई सन्तुष्टि के अन्तर के बराबर है।"

—जे० के० मेहता

प्रश्न—इस कथन के अनुसार उपभोक्ता की बचत किसके बराबर बताई गई है ?

प्रश्न—यह बचत उपभोक्ता को किससे प्राप्त होती है ?

**उदाहरण**— छात्राध्यापक उपभोक्ता की बचत का स्पष्टीकरण उदाहरण द्वारा करेगा।

मान लीजिये राम बाजार में केले खरीदने जाता है और एक केले के लिए राम को एक आना देना पड़ता है।

प्रश्न—राम को पहला केला खरीदने से कितनी उपयोगिता मिलेगी ?

**अध्यापक कथन**— मान लिया राम को २० आने के बराबर उपयोगिता प्राप्त हुई है।

प्रश्न—दूसरे केले से राम को कितनी उपयोगिता प्राप्त होगी ?

**अध्यापक कथन**— मान लिया राम को १० आने के बराबर उपयोगिता प्राप्त हुई है।

प्रश्न—तीसरे केले से कितनी उपयोगिता मिलेगी ?

**अध्यापक कथन**— मान लिया ५ आने के बराबर उपयोगिता मिली।

प्रश्न—चौथे केले को खरीदने से राम को कितनी उपयोगिता मिलेगी ?

अध्यापक कथन— मान लिया चौथे केले से ३ आने के बराबर उपयोगिता मिली।

प्रश्न—पाँचवे केले को खरीदने से राम को कितनी उपयोगिता प्राप्त होगी ?

अध्यापक कथन— माना कि राम को १ आने के बराबर उपयोगिता प्राप्त हुई।

प्रश्न—राम ने कुल कितनी इकाइयाँ खरीदी हैं ?

प्रश्न—एक इकाई के लिए राम कितना मूल्य देता है ?

प्रश्न—पाँच इकाइयों का मूल्य क्या हुआ ?

प्रश्न—राम को कुल उपयोगिता कितनी प्राप्त हुई ?

प्रश्न—राम को कितनी बचत हुई ?

प्रश्न—इस ३४ आने की बचत को अर्थशास्त्र में कैसी बचत कहेंगे ?

छात्राध्यापक इस उपभोक्ता की बचत को एक तालिका द्वारा प्रदर्शित करेगा।

प्रश्न—आप उक्त इकाइयों में कितने खाने वाली तालिका बनायेंगे ?

प्रश्न—पहला खाना किसका होगा ?

प्रश्न—दूसरे खाने में क्या लिखेंगे ?

प्रश्न—आप तीसरे खाने में क्या लिखेंगे ?

| केले की इकाइयाँ | प्राप्त उपयोगिता | उपभोक्ता की बचत |
|---|---|---|
| पहला केला | २० आने | २० — १ = १९ आने |
| दूसरा केला | १० आने | १० — १ = ९ आने |
| तीसरा केला | ५ आने | ५ — १ = ४ आने |
| चौथा केला | ३ आने | ३ — १ = २ आने |
| पाचवाँ केला | १ आने | १ — १ = ० आने |
| उपभोक्ता की बचत | ३९ आने | ३९ — ५ = ३४ आने |

प्रश्न—केले की पहली इकाई से कितनी उपयोगिता प्राप्त होगी है ?

प्रश्न—इस इकाई के लिए मूल्य कितना देता है ?
प्रश्न—उपभोक्ता की बचत कितने आने हुई।
प्रश्न—दूसरे केले के खरीदने से कितनी उपयोगिता प्राप्त हुई है ?
प्रश्न—मूल्य कितना दिया है ?
प्रश्न—इससे उपभोक्ता की बचत कितने आने हुई ?
प्रश्न—तीसरे केले से राम को कितनी उपयोगिता प्राप्त हुई है ?
प्रश्न—उसने तीसरे केले का कितना मूल्य दिया ?
प्रश्न—इससे राम को उपभोक्ता की बचत कितनी हुई ?
प्रश्न—केले की चौथी इकाई से उसको कितनी उपयोगिता प्राप्त हुई है ?
प्रश्न—चौथे केले के लिये कितना मूल्य दिया है ?
प्रश्न—उपभोक्ता की बचत कितने आने हुई ?
प्रश्न—पाचवाँ केला खरीदने पर कितनी उपयोगिता प्राप्त हुई ?
प्रश्न—पाँचवें केले के लिए कितना मूल्य दिया ?
प्रश्न—इस केले से कितने आने के बराबर उपभोक्ता की बचत प्राप्त हुई ?
प्रश्न—वस्तु की समस्त इकाइयों से प्राप्त सीमान्त उपयोगिता को गुणा करके कुल उपयोगिता में से घटाने पर क्या प्राप्त होता है ?

**अध्यापक कथन—** इस उपभोक्ता की बचत को गणित के निम्न-लिखित सूत्र द्वारा प्रदर्शित कर सकते हैं—

**उपभोक्ता की बचत = कुल उपयोगिता — (सीमान्त उपयोगिता × वस्तु की इकाइयाँ)**

**रेखाचित्र द्वारा प्रदर्शित करना—**

उपर्युक्त तालिका को छात्राध्यापक छात्रों की सहायता से ग्राफ बोर्ड पर उपभोक्ता की बचत को प्रदर्शित करेगा और छात्रों को ग्राफ पेपरों पर स्वयं बनाने का आदेश देगा।

प्रश्न—केले की कुल इकाइयाँ किस रेखा पर दिखायेंगे ?
प्रश्न—केले की एक इकाई कितने छोटे खाने के बराबर मानी जाय ?
प्रश्न—प्राप्त उपयोगिता किस रेखा द्वारा दिखाई जायेगी ?
प्रश्न—केले की पाँच इकाइयों की उपयोगिता कितने छोटे खानो के बराबर मानेगे ?
प्रश्न—केले की पहली इकाई से कितनी उपयोगिता प्राप्त होती है ?
प्रश्न—इसको रेखाचित्र में कहाँ अंकित करेंगे ?
प्रश्न—दूसरे केले से कितनी उपयोगिता प्राप्त होती है ?
प्रश्न—इस उपयोगिता को रेखाचित्र में कहाँ अंकित करेंगे ?
प्रश्न—केले की तीसरी इकाई से कितनी उपयोगिता प्राप्त हुई है ?
प्रश्न—इस उपयोगिता को रेखाचित्र में कहाँ अकित करेगे ?
प्रश्न—केले की चौथी इकाई से कितनी उपयोगिता प्राप्त हुई है ?
प्रश्न—इस प्राप्त उपयोगिता को रेखाचित्र में कहाँ पर अंकित करेंगे ?
प्रश्न—पाँचवे केले से कितनी उपयोगिता प्राप्त हुई है ?
प्रश्न—इस उपयोगिता को रेखाचित्र में कहाँ अंकित करेगे ?
प्रश्न—इन अंकित विन्दुओं को किस प्रकार मिलायेगे ?
प्रश्न—इन विन्दुओं के मिलाने से क्या बन गया है ?
प्रश्न—चित्र में समकोण क्या प्रदर्शित करते है ?
प्रश्न—पाचवाँ समकोण क्या प्रदर्शित करता है ?
प्रश्न—इसको किस प्रकार अलग-अलग दर्शाया जा सकता है ?
प्रश्न—रेखांकित समकोणों के भाग क्या सूचित करते है ?

**पुनरावृत्ति—** प्रश्न—सीमान्त उपयोगिता किसको कहते हैं ?
प्रश्न—उपभोक्ता की बचत से आप क्या समझते हैं ?
प्रश्न—उपभोक्ता की बचत का गणित-सूत्र क्या है ?

## श्यामपट सारांश

१. उपभोग की जाने वाली अन्तिम इकाई से प्राप्त उपयोगिता को सीमान्त उपयोगिता कहते हैं।
२. किसी वस्तु को खरीदने के लिए जितना मूल्य देने को तैयार हो और वास्तव में जितना देना पड़े इनके अन्तर को उपभोक्ता की बचत कहते हैं।
३. **उपभोक्ता की बचत**=कुल उपयोगिता—(सीमान्त उपयोगिता × वस्तु की कुल इकाइयाँ)

**गृहकार्य—** उपभोक्ता की बचत के सिद्धान्त को उदाहरण सहित समझाकर लिखिये तथा इसको रेखाचित्र द्वारा स्पष्ट कीजिये।

# पाठ–योजना (५)

| | |
|---|---|
| दिनाङ्क—१६-२-६१ | समय चक्र —५ |
| विषय —अर्थशास्त्र | समय —४० मिनट |
| प्रकरण—क्रमागत | औसत आयु—१८ वर्ष |
| कक्षा —१२ वाणिज्य | विद्यालय —आर० ई० आई० कालिज, दयालबाग । |

**सामान्य उद्देश्य—**

१. छात्रों को अर्थशास्त्र का सामान्य ज्ञान कराना ।
२. उन्हें अपने देश के आर्थिक ढाँचे एवं उसकी समस्याओं को सुलझाने के ढगो से परिचित कराना ।
३. छात्रों को दैनिक जीवन के आर्थिक पक्ष के विषय में सोचने को प्रेरित करना ।
४. वस्तुओ के उत्पादन, वितरण, उपभोग इत्यादि का ज्ञान प्रदान करना ।
५. जीवन में सहयोग, आदान-प्रदान एवं विनिमय का महत्त्व बतलाना ।
६. छात्रो की बौद्धिक, तार्किक, वैचारिक एवं मानसिक शक्तियों का विकास करना ।
७. उनमें आत्म-निर्भरता, सदाचार एवं मौलिकता का विकास करना ।
८. किसानों, मजदूरो की समस्याओं से परिचित कराकर उनके प्रति सहानुभूति उत्पन्न करना ।

**विशिष्ट उद्देश्य—** छात्रों को क्रमागत-उपयोगिता-ह्रास नियम का ज्ञान कराना ।

**सहायक सामग्री—** १. ग्राफ बोर्ड और
२. ग्राफ पेपर्स ।

**पूर्वज्ञान—** छात्र उपभोग तथा उपयोगिता के विषय में जानते है ।

**प्रस्तावना—** प्रश्न—उपयोगिता किसे कहते हैं ?
प्रश्न—उपयोगिता कितने प्रकार की होती है ?
प्रश्न—सीमान्त उपयोगिता से आप क्या समझते हैं ?
प्रश्न—उपभोग की जाने वाली वस्तु की अन्तिम इकाइयों से कैसी उपयोगिता प्राप्त होती है ?
प्रश्न—इस घटती हुई उपयोगिता के नियम को अर्थशास्त्र में क्या कहते हैं ?

**उद्देश्य कथन—** आज हम क्रमागत-उपयोगिता-ह्रास नियम के विषय में अध्ययन करेंगे ।

**प्रस्तुतिकरण—** छात्राध्यापक छात्रों के सम्मुख पानी का प्रयोग करके क्रमागत-उपयोगिता-ह्रास नियम को सिद्ध करेगा । वह रमेश को एक गिलास पानी पीने के लिए देकर निम्नलिखित प्रश्न करेगा—

प्रश्न—पानी के गिलास से तुमको कितनी उपयोगिता मिली ?

छात्राध्यापक पानी का दूसरा गिलास देकर पूछेगा ।

प्रश्न—पानी के इस गिलास से तुमको कितनी उपयोगिता प्राप्त हुई ?

छात्राध्यापक पानी का तीसरा गिलास देकर प्रश्न करेगा ।

प्रश्न—पानी के इस गिलास से तुमको कितनी उपयोगिता मिली ?

छात्राध्यापक पानी का चौथा गिलास देकर पूछेगा ।

प्रश्न—इस गिलास से तुमको कितनी उपयोगिता प्राप्त हुई ?

**छात्राध्यापक** पानी का पाँचवा गिलास देगा जिसे रमेश पीने से मना कर देगा तब छात्राध्यापक प्रश्न करेगा।

**प्रश्न**—पानी के इस प्रयोग से तुम क्या निष्कर्ष निकालते हो ?

**स्पष्टीकरण**— इस प्रकार हम कह सकते है कि जैसे-जैसे हमारे पास किसी वस्तु की मात्रा बढ़ती जाती है वैसे-वैसे अन्य बाते समान रहने पर, उस वस्तु की प्रत्येक अगली इकाई की उपयोगिता घटती जाती है। इसी को अर्थशास्त्र मे क्रमागत-उपयोगिता-ह्रास-नियम कहते हैं।

**उदाहरण**— छात्राध्यापक इस नियम का एक उदाहरण द्वारा स्पष्टीकरण करेगा। मान लीजिये तुम बहुत भूखे हो—

**प्रश्न**—जब तुम पहली रोटी खाओगे तो उससे तुम्हें कितनी उपयोगिता मिलेगी ?

**अध्यापक कथन**— माना पहली रोटी से मिलने वाली उपयोगिता १०० है।

**प्रश्न**—जब तुम दूसरी रोटी खाओगे तो तुम्हे उससे कितनी उपयोगिता प्राप्त होगी ?

**अध्यापक कथन**— माना दूसरी रोटी से ८० के बराबर उपयोगिता मिलती है।

**प्रश्न**—तीसरी रोटी के खाने से तुम्हे कितनी उपयोगिता मिलेगी ?

**अध्यापक कथन**— मान लिया तीसरी रोटी से ६० उपयोगिता मिलती है।

**प्रश्न**—चौथी रोटी खाने पर तुम्हें कितनी उपयोगिता प्राप्त होगी ?

**अध्यापक कथन**— माना चौथी रोटी से मिलने वाली उपयोगिता ३० है।

प्रश्न—जब तुम पाँचवीं रोटी खाओगे तो तुम्हें उस रोटी से कितनी उपयोगिता मिलेगी ?

**अध्यापक कथन—** माना पाँचवी रोटी से १० के बराबर उपयोगिता मिलती है।

प्रश्न—छठी रोटी के खाने से तुमको कितनी उपयोगिता प्राप्त होगी ?

**अध्यापक कथन—** मान लिया छठी रोटी से मिलने वाली उपयोगिता ० है।

प्रश्न—यदि तुम्हें सातवीं रोटी और खाने को दी जाये तो उससे तुमको कैसी उपयोगिता मिलेगी ?

**अध्यापक कथन—** माना सातवीं रोटी से —१० उपयोगिता मिलती है।

**तालिका द्वारा प्रदर्शन**

उपर्युक्त उदाहरण को तालिका द्वारा भी प्रदर्शित कर सकते है।

प्रश्न—इन इकाइयो मे कितने खाने वाली तालिका बनाई जा सकती है ?

प्रश्न—पहले खाने में क्या लिखा जायेगा ?

प्रश्न—दूसरे खाने में क्या लिखेंगे ?

प्रश्न—पहली रोटी से कितनी उपयोगिता मिलती है ?

प्रश्न—दूसरी रोटी मे कितनी उपयोगिता प्राप्त होती है ?

प्रश्न—तीसरी रोटी कितनी उपयोगिता प्रदान करती है ?

प्रश्न—चौथी रोटी से कितनी उपयोगिता मिलती है ?

प्रश्न—पाँचवी रोटी कितनी उपयोगिता देती है ?

प्रश्न—छठी रोटी से कितनी उपयोगिता प्राप्त होती है ?

प्रश्न—सातवीं रोटी से कितनी उपयोगिता मिलती है ?

**क्रमागत-उपयोगिता-ह्रास-नियम की तालिका**

| रोटी की इकाइयाँ | प्राप्त उपयोगिता |
|---|---|
| १ | १०० |
| २ | ८० |
| ३ | ६० |
| ४ | ३० |
| ५ | १० |
| ६ | ० |
| ७ | —१० |

**रेखाचित्र द्वारा निरूपण—**

उपर्युक्त तालिका से छात्राध्यापक छात्रों की सहायता से ग्राफ-बोर्ड पर क्रमागत-उपयोगिता-ह्रास नियम का रेखाचित्र बनायेगा और छात्रों को स्वयं बनाने का भी आदेश देगा।

छात्राध्यापक छात्रों से निम्नलिखित प्रश्न करेगा—

प्रश्न—रोटी की इकाई किस रेखा पर दिखाई जायेगी ?

प्रश्न—प्राप्त उपयोगिता को किस रेखा पर दिखाया जायेगा ?

प्रश्न—रोटी की एक इकाई कितने छोटे खाने के बराबर मानी जायेगी ?

प्रश्न—उपयोगिता की १० मात्रा कितने छोटे खाने के बराबर मानी गई है ?

प्रश्न—रोटी की पहली इकाई से कितनी उपयोगिता प्राप्त होती है ?

प्रश्न—इसको हम रेखाचित्र मे कहाँ अंकित करेंगे ?

प्रश्न—दूसरी इकाई से कितनी उपयोगिता मिलती है ?

प्रश्न—इसको रेखाचित्र में कहाँ पर अंकित किया जायेगा ?

प्रश्न—तीसरी रोटी की इकाई मे कितनी उपयोगिता प्राप्त होती है ?

प्रश्न—इस प्राप्त उपयोगिता को रेखाचित्र मे कहाँ अंकित किया जायेगा ?

प्रश्न—पाँचवीं रोटी कितनी उपयोगिता प्रदान करती है ?

प्रश्न— इसको रेखाचित्र में कहाँ पर अंकित करेंगे ?

प्रश्न—रोटी की छठी इकाई से कितनी उपयोगिता प्राप्त होती है ?

प्रश्न—इस उपयोगिता को रेखाचित्र में कहाँ अंकित किया जायेगा ?

प्रश्न—सातवीं रोटी से कितनी उपयोगिता मिलती है ?

प्रश्न— — १० उपयोगिता को किस प्रकार प्रदर्शित किया जायेगा ?

प्रश्न—प्राप्त समस्त विन्दुओं का क्या किया जायेगा ?

प्रश्न—इन समस्त विन्दुओं के मिलाने से क्या बन जाता है ?

प्रश्न—यह वक्र रेखा क्या प्रदर्शित करती है ?

**पुनरावृत्ति —**

प्रश्न— क्रमागत-उपयोगिता-ह्रास-नियम से आप क्या समझते है ?

प्रश्न—ऋणात्मक उपयोगिता किसे कहते है ?

प्रश्न — अर्थशास्त्र में कुल उपयोगिता का क्या अर्थ है ?

## श्यामपट सारांश

१. जैसे-जैसे हमारे पास किसी वस्तु की मात्रा बढ़ती जाती है, वैसे-वैसे अन्य बाते समान रहने पर उस वस्तु की प्रत्येक अगली इकाई की उपयोगिता घटती जाती है।

२. ऋणात्मक उपयोगिता उसे कहते है जिससे उपभोक्ता को अनुपयोगिता प्राप्त होती है।

३. समस्त इकाइयों के उपभोग से मिलने वाली उपयोगिता के योग को कुल उपयोगिता कहते हैं।

**गृहकार्य —** क्रमागत-उपयोगिता-ह्रास-नियम को रेखाचित्र द्वारा स्पष्ट कीजिये।

# विशेष अध्ययन योग्य पुस्तकें


| लेखक | पुस्तक | प्रकाशक |
|---|---|---|
| *Binning & Binning* : | "Teaching The Social Studies in Secondary Schools". | : McGraw-Mill Book Company, New York, Toronto. |
| *Hemming* : | "The Teaching of Social Studies in Secondary School." | : Longmans Green & Co. London, New York. |
| *Higbet G.* : | "The Art of Teaching". | : Methuen & Co. Ltd. London. 1951 |
| *Hamley, H, R.* | "The Teacher's Lesson Book". | : MacMillan & Co. Ltd. Bombay, Madras, London, 1931. |
| *Michaelis, John, U.* . | "Social Studies for Children in a Democracy". | · Prentice—Hall Inc. Englewood Cliffs, N. J. 1956. |
| *Moffat, M. P.* : | "Sociail Studies Instruction". | : Prentice—Hall Inc. New York. |
| *Nesiah, K.* . | "Social Studies in the School" | : Geoffrey Cumberlege Oxford University Press, 1954. |
| *Wesley, E. B.* : | "Teaching Social Studies in Elementary Schools". | : D. C. Heath and Company Boston 1952. |
| *Wesley, E. B.* : | "Teaching Social Studies in High Schools". | : D. C. Heath and Company, Boston. |
| *Govt. of India* : | The Secondary Education Commission Report". | : Ministry of Education Publication Division, 1953 |